# भगवान् श्रीपरशुराम एवम् सोहनाग धाम

(श्रीपरशुराम-पूजा-विधि एवं श्रीपरशुराम जी के विविध स्तोत्रों से समन्वित)

स्वस्तिवाग् लेखक
धर्मचक्रवर्ती पद्मविभूषण तुलसीपीठाधीश्वर
श्रीमज्जगद्गुरु रामानन्दाचार्य
स्वामी श्रीरामभद्राचार्य जी महाराज
श्रीचित्रकूटधाम

लेखक
महामहोपाध्याय
श्रीकेदारनाथ द्विवेदी 'वेदाचार्य'

सम्पादक
विद्यावाचस्पति प्रो. देवेन्द्र प्रसाद मिश्र

॥ श्रीः ॥

जनोपकारिणे परमसम्मानभाजे
श्रीमते सुधिये डॉ॰ कीर्तिकान्तशर्म-
वर्याय ग्रन्थरत्नमिदं सादरं समर्प्यते।

[illegible]
23/03/25

# भगवान् श्रीपरशुराम एवं सोहनाग धाम

स्वस्ति वाग्-लेखक

धर्मचक्रवर्ती पद्मविभूषण तुलसीपीठाधीश्वर

श्रीमज्जगद्गुरु रामानन्दाचार्य

**स्वामी श्रीरामभद्राचार्य जी महाराज**

श्रीचित्रकूटधाम

लेखक

**महामहोपाध्याय श्रीकेदारनाथ द्विवेदी 'वेदाचार्य'**

सम्पादक

**विद्यावाचस्पति प्रो. देवेन्द्र प्रसाद मिश्र**

**अभ्युदय प्रकाशन**
सी-2-3 विजय इन्क्लेव, पालम-डावड़ी मार्ग
नई दिल्ली- 110045
9013920832, 9868373443

ISBN : 978-81-952904-2-0

सर्वाधिकार सम्पादकाधीन

प्रकाशन वर्ष : 2024

मूल्य: रु. 1000-00 मात्र

**पुस्तक प्राप्ति स्थान**
ग्राम-धनौतीराय पत्रालय-पिपरारामधर
वाया-सलेमपुर जिला देवरिया (उ.प्र.) 274509

# विषयानुक्रमणिका


| क्र. सं. विषय | लेखक | पृ.सं. |
|---|---|---|
| ▲दो शब्द | म.म. श्रीकेदारनाथ द्विवेदी<br>लेखक | ७-१४ |
| ▲स्वस्ति वाग् | पद्मविभूषण जगद्गुरु स्वामी<br>श्रीरामभद्राचार्य जी महाराज | १५ |
| ▲प्राक्कथनम् | स्वामी श्रीपरानन्दतीर्थ जी महाराज | १६ |
| ▲शुभकामना सन्देश | मान. श्रीनितिन गडकरी<br>मन्त्री, सड़क परिवहन एवं राजमार्ग,<br>भारत सरकार | १७-१८ |
| ▲सन्देश | मान. श्रीभजनलाल शर्मा<br>मुख्यमन्त्री, राजस्थान | १९ |
| ▲शुभकामना सन्देश | मान. श्रीनरेन्द्र सिंह तोमर<br>अध्यक्ष, मध्यप्रदेश विधानसभा | २० |
| ▲शुभकामना सन्देश | मान. श्रीराजेन्द्र शुक्ल<br>उप मुख्यमन्त्री, मध्यप्रदेश | २१-२२ |
| ▲शुभकामना सन्देश | मान. डॉ. राजेश मिश्रा<br>सांसद, सीधी, मध्यप्रदेश | २३-२४ |
| ▲सन्देश | मान. श्रीअजय सिंह 'राहुल भैय्या'<br>पूर्व मन्त्री, मध्यप्रदेश शासन | २५ |

| | | |
|---|---|---|
| ▲शुभाभिशंसा | मान. श्रीगोपाल भार्गव<br>पूर्व मन्त्री, मध्यप्रदेश शासन | २६-२७ |
| ▲प्रास्ताविकम् | डॉ. प्रीति भार्गव<br>पूर्व विधायक, उज्जैन | २८-३० |
| ▲प्ररोचना | म.म. प्रो. मुरलीमनोहर पाठक<br>कुलपति | ३१-३५ |
| ▲आशंसनम् | म.म. प्रो. मिथिला प्रसाद त्रिपाठी<br>पूर्व कुलपति | ३६-३८ |
| ▲नान्दीवाक् एवं शुभाशंसनम् | म.म. प्रो. अभिराज राजेन्द्रमिश्र<br>पद्मश्री, पूर्व कुलपति | ३९-४३ |
| ▲माङ्गल्योद्गाराः एवं शुभाशंसा | म.म. प्रो. केशवराम शर्मा | ४४-४७ |
| ▲श्रीपरशुरामाष्टकम् एवं शुभभणितिः | प्रो. विन्ध्येश्वरी प्रसाद मिश्र<br>'विनयः' पूर्व संकायाध्यक्ष | ४८-५० |
| ▲श्रीरामनीराजनाष्टकम् | प्रो. जयकान्त सिंह शर्मा<br>पीठाध्यक्ष | ५१-५२ |
| ▲शुभानुध्यानम् | प्रो. श्रीनिवास वरखेड़ी<br>कुलपति | ५३-५५ |
| ▲कामधुग्वाक् | प्रो0 बिहारी लाल शर्मा<br>कुलपति | ५६-६१ |
| ▲शुभाभिमतिः | प्रो. हरेराम त्रिपाठी<br>कुलपति | ६२-६५ |

▲**श्रीकेदारनाथद्विवेदी-नामाक्षरमाला** आचार्य हनुमान प्रसाद त्रिपाठी (चित्रकूटीयः) ६६-६८

▲**शुभाभिशंसा** प्रो. भारतभूषण मिश्र निदेशक ६९-७२

▲**भूमिका** प्रो. देवेन्द्र प्रसाद मिश्र सम्पादक ७३-१८०

* हैहयवंशी क्षत्रियों की उत्पत्ति ७९

* हैहयवंशी क्षत्रियों-द्वारा भृगुवंशी ब्राह्मणों का संहार ८१

* भगवती जगदम्बा की कृपा से भार्गव-ब्राह्मणी की जंघा से महर्षि और्व की उत्पत्ति ८४

* श्रीपरशुराम का कैलाश-गमन, शिव जी के दर्शनार्थ गणेश से अनुरोध तथा गणेश का एकदन्त-वर्णन प्रसङ्ग ८८

* गणेश-नामाष्टकस्तोत्रम् १०७

* भगवान् श्रीहरि के विविध अवतार १२३

**प्रथमाध्याय-** श्रीपरशुराम अवतारोपक्रम १८१-१८७

**द्वितीयाध्याय-** भारतवर्ष में अवतार के कारण १८८-१९४

**तृतीयाध्याय-** भगवान् के लीलावतार १९५-२११

**चतुर्थाध्याय-** भृगुवंश तथा भृगुवंशियों के वैभवादि का वर्णन २१२-२३६

**पञ्चमाध्याय-** श्रीपरशुराम चरित की व्यापकता २३७-२८८

**षष्ठाध्याय-** श्रीपरशुराम जी से सम्बन्धित महत्वपूर्ण स्थान २८९-२९७

| | | |
|---|---|---|
| **सप्तमाध्याय-** | सोहनाग धाम | २९८-३०५ |

## परिशिष्टात्मक द्वितीय भाग- ३०६-३८४

- श्रीपरशुराम-पूजनविधि ३०७-३२७
- पञ्चायतन-आरती ३२८-३२९
- श्रीपरशुरामस्तोत्रम् ३३०
- श्रीपरशुरामस्तुतिः ३३१
- श्रीपरशुरामाष्टकम् ३३२-३३४
- श्री परशुराम अष्टाविंशतिनामस्तोत्रम् ३३५-३३६
- श्रीरामद्वादशनामस्तोत्रम ३३७
- अथ त्रैलोक्यविजयं श्रीकृष्णकवचम् ३३८-३४७
- श्रीपरशुरामकृतं श्रीभद्रकालीस्तोत्रम् ३४८-३४९
- वंशवृद्धिकरं वंशकवचम् ३५०-३५२
- श्रीजगन्नाथाष्टकम् ३५३-३५४
- श्रीहनुमान चालीसा ३५५-३५८
- अथ सप्तश्लोकी दूर्गा ३५९-३६०
- अथ तन्त्रोक्तं रात्रिसूक्तम् ३६१-३६२
- अथ तन्त्रोक्तं देवीसूक्तम् ३६३-३६५
- शुक्लयजुर्वेदीया शतरुद्री ३६६-३७४
- सम्पादककृदात्मवृत्तम् ३७५-३७६
- सन्दर्भग्रन्थसूची ३७७-३८४

卐 श्रीः 卐

# दो शब्द

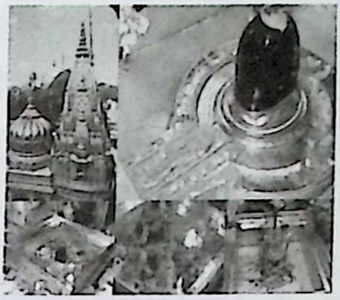

**अग्रतः चतुरो वेदाः पृष्ठतः सशरं धनुः ।**
**इदं ब्राह्म इदं क्षात्रं शापादपि शरादपि ॥**

भगवान् श्रीपरशुराम जी का आदर्श जीवन चरित्र सदा प्रासंगिक एवं अनुकरणीय है। त्रेता के प्रारंभ में अधिकांश राजा बल ऐश्वर्य प्रभुता तथा मदान्धता परिपूर्ण होकर प्रजाजन का शोषण एवं अनाचार दुराचार से पीड़ित करने में आनन्द का अनुभव कर रहे थे। उस समय का शासक कार्तवीर्य सहस्रार्जुन क्रूर स्वभाव का स्वच्छन्दचारी था। जब संसार में ब्राह्मणद्रोही आर्यमर्यादा का उल्लंघन करने वाले नारकीय क्षत्रिय अपने नाश के लिए ही दैववश बढ़ जाते हैं और पृथ्वी के कांटे बन जाते हैं, तब भगवान् महापराक्रमी परशुराम के रूप में अवतीर्ण होकर अपनी तीक्ष्ण धारवाले फरसे से इक्कीस बार उनका संघार करते हैं-

**क्षत्रं क्षयाय विधिनोपभृतं महात्मा**
**ब्रह्मधुगुज्झितपथं नरकार्तिलिप्सु ।**
**उद्धन्त्यसाववनिकण्टकमुग्रवीर्य-**
**स्त्रिः सप्तकृत्व उरुधारपरश्वधेन ॥**

(श्रीमद्भागवत २/७/२२)

लोकतंत्र के प्रणेता सतत संघर्षशील पराक्रमी त्याग की मूर्ति धर्मरक्षक शोषित पीड़ित दीन-हीन जनों को जनजीवन प्रदान करने वाले तपस्या की मूर्ति परशुराम जी अवतरित हुए-

**यमाहुर्वासुदेवांशं हैहयानां कुलान्तकम् ।**
**त्रिःसप्तकृत्वो य इमां चक्रे निःक्षत्रियां महीम् ॥**
**दुष्टं क्षत्रं भुवो भारमब्रह्मण्यमनीनशत् ।**
**रजस्तमोवृतमहन् फल्गुन्यपि कृतेंऽहसि ॥**

(श्रीमद्भागवत ९/१५/१४-१५)

राजा सहस्रार्जुन का अत्याचार अत्यन्त बढ़ गया तभी भगवान् श्रीविष्णु परशुराम जी के रूप में अवतरित होकर क्रूर राजाओं के अत्याचार से मानवता की रक्षा किये।

मैं भगवान् श्रीपरशुराम जी की मानवलीला के विषय में जहाँ कहीं कुछ पाया उसे संग्रहीत कर सामान्यजनजीवन के सामने उपस्थित करने का प्रयास किया है। **भगवान् श्रीपरशुराम एवं सोहनाग धाम** ग्रन्थ के अध्ययन से मानवता की रक्षा हेतु सामान्यजनजीवन में उत्साह बढ़े, यहीं भगवान् से प्रार्थना है।

धर्मचक्रवर्ती पद्मविभूषणादि अनेक विरुदभाज महामहोपाध्याय कविकुलरत्न प्रस्थानत्रयीभाष्यकार संस्थापित-विश्वविद्यालय वाचस्पति श्रीचित्रकूटतुलसीपीठाधीश्वर जगद्गुरु रामानन्दाचार्य **स्वामी श्रीरामभद्राचार्य महाराज जी** ने इस कृति पर 'स्वस्ति वाग्' लिखकर गौरवाभिवर्धन किया है। एतदर्थ मैं उनके श्रीचरणों में प्रणतिपुरस्सर कृतज्ञता व्यक्त करता हूँ। उनकी आत्मिक शुभेच्छा एवं सदाशयता सदैव मेरे साथ रही है।

ज्ञानतपोनिष्ठ आचार्यकुलश्रेष्ठ अनन्तश्रीविभूषित परमहंस परिव्राजकाचार्य **स्वामी श्रीपरानन्दतीर्थ** महाराज जी ने अत्यन्त कृपा पूर्वक मेरे इस ग्रन्थ में 'प्राक्कथन' लिखा, अत एव मैं उनके श्रीचरणों में प्रणति निवेदित करना अपना धर्म मानता हूँ।

लोकाराधनतत्पर लब्धप्रतिष्ठ समाजसेवी माननीय श्रीमान् **नितिन गडकरी** जी, मान. मन्त्री सड़क परिवहन एवं राजमार्ग भारत सरकार ने इस कृति पर शुभकामना सन्देश लिखा है, वह अत्यन्त गौरवपूर्ण है, अतः माननीय मन्त्री जी के प्रति श्रद्धावनत हूँ।

समाज की बेहतरी के लिए सतत् प्रयत्नशील इमानदार छवि लब्धप्रतिष्ठ लोकसेवक माननीय **श्रीभजनलाल शर्मा** जी, मुख्य मन्त्री, राजस्थान ने विवेच्य ग्रन्थ पर शुभकामना सन्देश प्रेषित कर मेरा मान बढ़ाया है । अस्तु श्रीशर्मा जी के प्रति मैं कृतज्ञता प्रकट करता हूँ।

सादगी, प्रेम और सरलता के पर्याय विन्ध्य के गौरव ख्यातिलब्ध जननायक माननीय **श्रीराजेन्द्र शुक्ल** जी, उप मुख्य मन्त्री, मध्य प्रदेश ने हमारे इस ग्रन्थ पर शुभकामना सन्देश लिखकर मेरा मान बढ़ाया है, अतएव श्रीमान् शुक्ल जी के प्रति कृतज्ञ भाव व्यक्त करता हूँ।

ख्यातिलब्ध प्रशासक तथा वरिष्ठ समाजसेवी माननीय **श्रीनरेन्द्र सिंह तोमर** जी, अध्यक्ष, मध्यप्रदेश विधानसभा ने विवेच्य ग्रन्थ पर शुभकामना सन्देश सम्प्रेषित कर मेरा मान बढ़ाया है, एतदर्थ मैं उनके प्रति कृतज्ञ भाव व्यक्त करना अपना धर्म मानता हूँ।

विन्ध्य के सपूत सच्चे समाजसेवक अद्भुत कार्यशैली तथा व्यक्तित्व एवं कृतित्व के धनी लोकप्रीय जननायक माननीय **श्री अजय अर्जुन सिंह 'राहुल भैय्या'** जी, विधायक–विधानसभा क्षेत्र चुरहट, पूर्व मन्त्री–मध्यप्रदेश शासन एवं पूर्व नेता प्रतिपक्ष, मध्यप्रदेश विधान सभा ने विवेच्य ग्रन्थ की सफलता के लिए शुभकामना

सन्देश प्रेषितकर हमारा मान बढ़ाया है, एतदर्थ उनके प्रति कृतज्ञता प्रकट करता हूँ।

प्रख्यात समाजसेवी माननीय श्रीयुत **गोपाल भार्गव** जी, पूर्व मन्त्री मध्यप्रदेश शासन, पूर्व प्रोटेम स्पीकर–मध्यप्रदेश विधानसभा, पूर्व नेता प्रतिपक्ष–मध्यप्रदेश विधानसभा, विधायक, विधानसभा क्षेत्र–39, रहली, सागर, मध्यप्रदेश ने इस ग्रन्थ का अवलोकन कर 'शुभाभिशंसा' लिखकर जो आदर दिया है, वह अत्यन्त गौरवपूर्ण है। अतः उनके प्रति कृतज्ञता–ज्ञापन मै अपना कर्तव्य मानता हूँ।

वरिष्ठ समाजसेविका परम विदुषी मान. **डॉ. प्रीती भार्गव**, पूर्व विधायक, उज्जैन दक्षिण क्षेत्र, मध्यप्रदेश विधानसभा ने इस कृति पर 'प्रास्ताविकम्' लिखा, एतदर्थ उन्हें मङ्गलाशीश प्रदान करता हूँ।

श्रीलाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय, दिल्ली के माननीय कुलपति विद्वत्तिलक विश्वविश्रुत कवि **प्रो० मुरली मनोहर पाठक** जी ने अत्यन्त कृपा पूर्वक मेरे इस ग्रन्थ पर 'प्ररोचना' लिखा, अत एव मैं उनका हृदय से आभारी हूँ।

महर्षि पाणिनि संस्कृत विश्वविद्यालय, उज्जैन के पूर्वकुलपति विद्वत्तिलक विश्व–विश्रुत कवि राष्ट्रपति–सम्मानित महामहोपाध्याय **प्रो. मिथिला प्रसाद त्रिपाठी** जी के प्रति अत्यन्त कृतज्ञ हूँ, उन्होंने इस ग्रन्थ का सम्यक् अवलोकन कर 'आशंसनम्' लिखा।

सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी के पूर्वकुलपति मनीषिप्रवर राष्ट्रपति–सम्मानित महामहोपाध्याय पद्मश्री **प्रो. अभिराज राजेन्द्र मिश्र** जी ने इस कृति पर 'नान्दीवाक्' लिखकर गौरवाभिवर्धन किया है। एतदर्थ मैं उनके प्रति प्रणति निवेदित करता हूँ। उनकी आत्मिक सदाशयता सदैव मेरे साथ रही है।

केन्द्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय, नई दिल्ली के माननीय कुलपति मनीषिप्रवर **प्रो. श्रीनिवास वरखेड़ी** जी ने इस ग्रन्थ पर 'शुभानुध्यानम्' लिखकर श्रीवर्धन किया है। एतदर्थ मैं उनके प्रति अमित श्रद्धा निवेदित करता हूँ।

सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी के माननीय कुलपति ज्योतिषशास्त्र के प्रख्यात विद्वान् **प्रो० बिहारी लाल शर्मा** जी ने सारगर्भित 'कामधुग्वाक्' लिखकर मेरा वर्धापन किया है अतः मैं श्रद्धापूरित कृतज्ञभाव समर्पित करता हूँ।

कविकुलगुरु कालिदास संस्कृत विश्वविद्यालय, रामटेक, महाराष्ट्र के माननीय कुलपति प्रख्यात चिन्तक **प्रो. हरेराम त्रिपाठी** जी ने विवेच्यकृति पर 'शुभाभिमतिः' लिखा है। अत एव उनके प्रति कृतज्ञता ज्ञापन मैं अपना कर्तव्य मानता हूँ।

काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी के वरिष्ठाचार्य कविवर महामहोपाध्याय **प्रो. विन्ध्येश्वरी प्रसाद मिश्र** 'विनय' जी ने अत्यन्त कृपापूर्वक मेरे इस ग्रन्थ पर 'श्रीपरशुरामाष्टकम्' लिखा। अत एव मैं उनके प्रति हृदय से आभारी हूँ।

श्रीलाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय, दिल्ली के माननीय वेदवेदाङ्गपीठाध्यक्ष श्रीमान् **प्रो. जयकान्त सिंह शर्मा** जी ने इस कृति पर 'श्रीरामनीराजनम्' लिखकर मङ्गलाभिवर्धन किया है। एतदर्थ मैं उनके प्रति कृतज्ञ हूँ।

संस्कृत साहित्य के प्रख्यात विद्वान् 'नन्दकुमारचरितम्' के प्रणेता राष्ट्रपतिसम्मानित अभिनवकालिदास महामहोपाध्याय **प्रो. केशवरामशर्मा** जी ने अत्यन्त कृपा पूर्वक मेरे इस ग्रन्थ में 'माङ्गल्योद्गार' लिखा, उनके प्रति कृतज्ञता-ज्ञापन मैं अपना कर्तव्य मानता हूँ।

शासकीय संस्कृत महाविद्यालय भितरी, जिला सीधी, मध्यप्रदेश के पूर्व साहित्याचार्य एवं संस्कृतसाहित्य के लब्धप्रतिष्ठ मनिषी स्वर्गीय **श्रीहनुमान् प्रसाद त्रिपाठी** ने 'श्रीकेदारनाथद्विवेदी-नामाक्षरमाला' लिखकर जो मेरे प्रति आदर व्यक्त किया है, वह अत्यन्त गौरवपूर्ण है। अतः उनके प्रति श्रद्धावनत हूँ।

केन्द्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय, क. जे. सोमैया परिसर के 'निदेशक' तथा ज्योतिष शास्त्र के प्रख्यात विद्वान् **प्रो. भारतभूषण मिश्र** जी ने इस ग्रन्थ पर शुभाभिशंसा लिखकर मेरा वर्धापन किया है, एतदर्थ उनके अभ्युदय की कामना करता हूँ।

इस ग्रन्थ को वर्तमान रूप देने में संस्कृत के कतिपय उपलब्ध श्रीपरशुराम पर आधारित काव्यों से सहायता प्राप्त हुई है, तथा आदिकाव्य श्रीमद्वाल्मीकीयरामायण, पुराण वाङ्मय और श्रीरामचरितमानस में वर्णित भगवान् श्रीपरशुराम के चरित के अनुसार ग्रन्थ का प्रणयन मेरे द्वारा किया गया है, एतदर्थ मूल ग्रन्थों के प्रणेता ऋषि–महर्षियों एवं काव्यकारों का मैं अत्यन्त आभारी हूँ।

इस ग्रन्थ के प्रकाशन हेतु **अभ्युदय प्रकाशन** के प्रकाशक महानुभाव के अभ्युदय हेतु सदा परमात्मा से प्रार्थना करता हूँ। आदरणीय **डॉ. ज्ञानधर पाठक जी** के सहयोग के लिए मैं उनका हृदय से साधुवाद करता हूँ। आदरणीय **डॉ. राजेश कुमार पाण्डेय,** पुस्तकालय प्रभारी, केन्द्रीय पुस्तकालय, श्रीलाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय, दिल्ली ने भगवान् परशुराम जी पर आधारित पुराणादि ग्रन्थ उपलब्ध कराकर सहायता की है, अत एव उनके प्रति कृतज्ञभाव समर्पित करता हूँ।

जब मैं यह गुरुतर कार्य प्रारम्भ किया था, उस समय इस

कार्य में पत्नी **श्रीमती ज्ञानमती द्विवेदी** जी का अत्यन्त सहयोग रहा है, एतदर्थ उनके शिवसायुज्य के लिए भगवान् विश्वनाथ जी से प्रार्थना करता हूँ। घरेलू व्यस्तताओं से पूर्णतः मुक्त रखने के लिए सुपुत्र-**सुरेन्द्रनाथ द्विवेदी**, पौत्र-**सत्यप्रकाश द्विवेदी, चन्द्रभूषण द्विवेदी, सुधीर कुमार द्विवेदी** तथा प्रपौत्र-**हेमांशु कुमार द्विवेदी** के दीर्घायुष्य एवं विपुल कीर्ति की कामना करता हूँ।

श्रीलाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय, दिल्ली के प्रोफेसर **श्रीदेवेन्द्र प्रसाद मिश्र** का सतत् मंगल हो, जिन्होने इस ग्रन्थ का सम्पादन कर मेरा अत्यन्त उपकार किया है, भगवान् श्री परशुराम जी उनका सतत् मंगल करें। आयुष्मान **प्रो. देवेन्द्र** जी की पत्नी-आयुष्मती **श्रीमती गायत्री मिश्रा** तथा उनकी आत्मजा-**अजिता, अपराजिता, अर्पिता** और **मृगाक्षी** जी का इस ऐतिहासिक लेखन के लिये अविस्मरणीय योगदान रहा है। अतएव इन के अभ्युदय की भगवान् श्रीविश्वनाथ जी से प्रार्थना करता हूँ।

श्रीलाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय, नई दिल्ली के वेदविभागीय अनुसन्धाता-द्वय मेरे प्रिय **डॉ. शुभदीप घोष** एवं **डॉ. अनिल शर्मा** ने प्रूफ-संसोधन एवं अन्य कार्यों में सर्वविध सहयोग प्रदान किया है, जिसके लिए मैं इन्हें हृदय से धन्यवाद देता हूँ। ग्रन्थरत्न के टंकणकर्ता **पण्डित श्रीअपर्ण पाठक**, मिर्जापुर उ0प्र0 ने अहर्निस लग कर ग्रन्थ को टङ्कित कर सुन्दर रूप दिया और धन्यवाद के पात्र हो गये।

विवेच्य ग्रन्थ का समादर एवं उपयोगिता में क्या स्थान होगा यह विद्वत् समाज की कृपा पर निर्भर है। मैं महाकवि कालिदास की विनम्र वाणी में कह रहा हूँ -

**आपरितोषाद्विदुषां न साधु मन्ये प्रयोगविज्ञानम् ।**
**बलवदपि शिक्षितानामात्मन्यप्रत्ययो चेतः ॥**

गुणग्राही विद्वानों तथा विदुषियों को इस ग्रन्थ से लेशमात्र भी सन्तोष होगा तो मैं अपने परिश्रम को सफल समझूँगा और अपने को कृतकृत्य मान लूँगा। दुर्जनों का काम सर्वत्र निन्दा करना ही होता है–

**गच्छतः स्खलनं क्वापि भवत्येव प्रमादतः ।**
**हसन्ति दुर्जनास्तत्र समादधति साधवः ॥**
**मुद्राकर कराघातकातरा क्वापि भारती ।**
**करुणार्दकरस्पर्शैः सुधियः सान्त्वयन्तु माम् ॥**

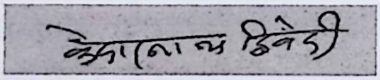

विक्रमाब्द २०८१ श्रावणकृष्णपक्ष **(म.म. श्रीकेदारनाथ द्विवेदी)**

कामदा एकादशी, बुधवार एम.ए., वेदाचार्यः, बी.एड.बेसिक

श्रीमज्जगद्गुरुरामानन्दाचार्यस्वामिरामभद्राचार्यः
पद्मविभूषणः प्रस्थानत्रयीभाष्यकारः श्रीचित्रकूटतुलसीपीठाधीश्वरः
चित्रकूटधाम, मध्यप्रदेशः - २१०२०४ दूरभाषः ०५१९८-
२२४४८१, २२४४१३, ०७६७०-२६५४७८
फैक्स-०७६७०-२६५४७८

दिनाङ्कः १०.०५.२०२४

##卐 स्वस्ति वाग् 卐

श्रेयसी सा च कविता वनिता प्रेयसी ह्यसौ ।
पदविन्यासतो या वै जनानां हरतां मनः ॥१॥
केदारनाथकृतिनः देवेन्द्रस्य च धीमतः ।
शोभना निर्मितिर्भाति पुस्तकाकारमागता ॥२॥
भगवत्परशुरामस्य अन्येषां लब्धसंविदाम् ।
श्रीमतामवताराणां विचकास्ति समन्वयः ॥३॥
सोहनाग शुभधाममञ्जुलं
यच्चकास्ति भगवत्प्रसादजम् ।
वाङ्मयं तदिह भाति चिन्मयं
रामचन्द्रचरणाब्जपेशलम् ॥४॥
अहमेतन्मनोग्राहि पुस्तकं ज्ञानगुम्फितम् ।
शुभाशीर्भिर्नियुज्यैव मोमुद्ये चेतसि स्फुटम् ॥५॥
प्रार्थये जानकीनाथं श्रीरामं शार्ङ्गिणं प्रभुम् ।
एतत्पुस्तकरत्नं हि भूयाद् बुधविभूषणम् ॥६॥

विक्रमाब्दः २०८१, — इति मङ्गलं कामयते
श्रीपरशुरामजयन्ती — श्रीचित्रकूटतुलसीपीठाधीश्वरो
अक्षयतृतीया — जगद्गुरु रामानन्दाचार्यस्वामिरामभद्राचार्यः
शुक्रवासरः — पद्मविभूषणो ज्ञानपीठभाक्, जय श्रीराम।

**HH Dandi Swami Paranand Tirth**
**YTA Yoga Tantra And Agama (INC.)**
(REGN. No. 2669143)
(International Non-Profit Corporation, CA, USA)

Naveen Zalpuri, USA
Ajay Kaul Dubei
Rashneek Kher, India


## ॥ प्राक्कथनम् ॥

रेणुकाहृदयनन्दनो भगवान् परशुरामः श्रीहरेः षष्ठोऽवतारो वर्तते। क्वचिच्च पुराणेतिहासादिषु सज्जनावनासज्जनापह्नवविधावतिरिक्तरजसो घोरवृत्ताकस्य भगवतो जामदग्न्यस्य क्रौर्यावतार इत्यपरपर्यायः प्रसिद्धं तन्न परीवादायापितु उच्छ्रयायैव। आह च **कुसुमदशनः** -**विकारोऽपि श्लाघ्यो** भुवनभयभङ्गव्यसनिन इति। ग्रन्थप्रणेतुस्तत्र भवतः **श्रीकेदारनाथद्विवेद**-महाभागस्य नैके ग्रन्था अस्मदादिभिरवलोकिताः परिशीलिताश्च, भवादृशानां विपश्चिदग्रगण्यानामेव सामर्थ्यमेतद्यन् महद् गहनमपि परशुरामलीलानुचरितं सार्वजनीनाशेमुषीपथमवतरिष्यतीति **श्रीदेवेन्द्रमिश्रा**भिधानानां सम्पादकमहानुभावानां मनोयोगेन व्यवस्थापिता निरवद्यापि कृतिरियं भूयो भूयो विदुषामन्तरङ्गेषु आह्लादाय भविष्यतीति अलमतिविस्तरेण।

विक्रमाब्दः २०८१,
श्रीपरशुरामजयन्ती
अक्षयतृतीया
शुक्रवासरः

विपश्चितां वशंवदः
**स्वामीपरानन्दतीर्थः**
धर्मसङ्घः, देहली


7, Shankaracharya Marg
Civil Lines, Delhi-110054
India
9810696003
swamiparanand@gmail.com


The specific purpose of this corporation is to provide and impart Yoga teachings and practices followed by AncientYoga masters. The purpuse of forming this organisation is to propagate the art of Yoga
This corporation is organized exclusively for charitable, religious; educational and scientific purpose within the meaning of Section 501(c) (3), Internal Revehue Code, including for such purpuses, the making of distributions to corporation that qualify as exempt corporations under section 501 (C) (3) of the Internal Revenue Code, or the corresponding section of any future federal tax code.

नितिन गडकरी

NITIN GADKARI

मंत्री

सड़क परिवहन एवं राजमार्ग

भारत सरकार

सत्यमेव जयते

Minister

Road Transport and Highways

Government of India


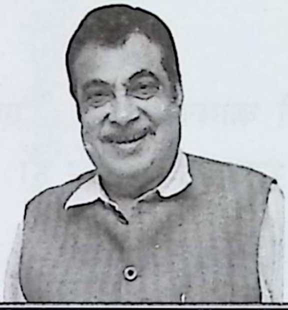

29 जुलाई, 2024

## शुभकामना संदेश

मुझे यह जानकर हर्ष हो रहा है कि महामहोपाध्याय श्रीकेदारनाथ द्विवेदी 'वेदाचार्य' द्वारा लिखित एवं विद्यावाचस्पति प्रो. देवेन्द्र प्रसाद मिश्र द्वारा सम्पादित पवित्रकीर्ति भगवान् श्रीपरशुराम जी की कृपा से उनके यशोगान का यह विवेच्य ग्रंथ **''भगवान् श्रीपरशुराम एवं सोहनाग धाम''** का प्रकाशन 'अभ्युदय प्रकाशन' द्वारा किया जा रहा है।

मुझे यह जानकर भी खुशी हो रही है कि श्रीपरशुराम पूजा विधि एवं श्रीपरशुराम जी के विविध स्तोत्रों से समन्वित यह पुस्तक जन-मानस को असत्य, अज्ञान, अधर्म एवं अंधकार से


Room No- 501, Transport Bhawan, 1, Sansad Marg, New Delhi-110 001,

Tel-: 011-23710121, 23711252 (0), 23719023 (F),

E-mail: nitin.gadkari@nic.in; website-www.morth.nic.in

सत्य, ज्ञान, धर्म तथा प्रकाश जैसे गुणों की ओर उन्मुख करती है एवं इस विवेच्य ग्रंथरत्न में भगवान् श्रीविष्णु जी के चौबीस अवतारों का भी वर्णन किया गया है जो पाठकों के लिए लोकोपकारी सिद्ध होगा।

मैं पुस्तक के सफल प्रकाशन की कामना करता हूँ एवं लेखक और सम्पादक को अपनी हार्दिक शुभकामनाएं देता हूँ।

शुभकामनाओं सहित,

आपका,

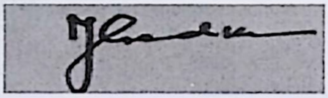

**( नितिन गडकरी )**

प्रति

**प्रो. देवेन्द्र प्रसाद मिश्र**

आचार्य एवं अध्यक्ष-वेद विभाग

श्रीलाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय

(केन्द्रीय विश्वविद्यालय)

बी-4, कुतुब सांस्थानिक क्षेत्र, नई दिल्ली-110016

सत्यमेव जयते

**मुख्य मंत्री**
राजस्थान

## संदेश

मुझे यह जानकर प्रसन्नता है कि श्री केदारनाथ द्विवेद्वी द्वारा रचित और प्रो. देवेंद्र प्रसाद मिश्र द्वारा संपादित ग्रंथ "भगवान श्री परशुराम एवं सोहनाग धाम" का प्रकाशन किया जा रहा है।

पराक्रम और सत्य के साधक, भगवान विष्णु के अवतार भगवान परशुरामजी ने अपने कार्यों से प्रभुता व श्रेष्ठवीरता की आर्य संस्कृति पर अमिट छाप छोड़ी है। भगवान श्री परशुराम के जीवन और कृतित्व को जीवंत रूप देने के साथ पवित्र स्थल सोहनाग धाम की धार्मिक महत्ता को उजागर करने का प्रयास सराहनीय है।

मुझे आशा है इस ग्रंथ के माध्यम से भगवान श्री परशुराम का जीवन-चरित्र और पवित्र सोहनाग धाम का ऐतिहासिक, धार्मिक और सांस्कृतिक महत्व व्यापक जनमानस तक पहुंच सकेगा।

मैं इस ग्रंथ के सफल प्रकाशन के लिए अपनी हार्दिक शुभकामनाएं प्रेषित करता हूं।

(भजन लाल शर्मा)

**नरेन्द्र सिंह तोमर**
NARENDRA SINGH TOMAR

अध्यक्ष
मध्यप्रदेश विधानसभा
SPEAKER
M.P. LEGISLATIVE ASSEMBLY

जावक क्र 66/ अ. वि.स./2024 — दिनांक - 2/8/2024

## ॥ शुभकामना संदेश ॥

मुझे यह जानकर प्रसन्नता हो रही है कि महामहोपाध्याय श्रीकेदारनाथ द्विवेदी 'वेदाचार्य' द्वारा लिखित एवं विद्यावाचस्पति प्रो. देवेन्द्र प्रसाद मिश्र द्वारा सम्पादित भगवान् श्रीपरशुरामजी की कृपा से उनके यशोगान का यह विवेच्य ग्रन्थ "**भगवान श्रीपरशुराम एवं सोहनाग धाम**" का प्रकाशन अभ्युदय प्रकाशन द्वारा किया जा रहा है। विवेच्य-ग्रन्थ '**भगवान् श्रीपरशुराम एवं सोहनाग धाम**' से सनातन धर्मी समाज का अत्यधिक उपकार होगा और इतर जन भी इस ग्रन्थ के द्वारा सनातनधर्म एवं भारतीय संस्कृति के मानवोपकारक तथा समाजोद्धारक मूलभूत सिद्धान्तों का पुष्कल परिचय प्राप्त कर लाभान्वित होंगे। निःसन्देह इस ग्रन्थ द्वारा संस्कृत एवं हिन्दी साहित्य की श्रीवृद्धि होगी। पुस्तक के सफल प्रकाशन के लिए लेखक और सम्पादक को हार्दिक शुभकामनाएं।

प्रति,

**प्रो. देवेन्द्र प्रसाद मिश्र**
आचार्य एवं अध्यक्ष-वेद विभाग
श्रीला. ब. शा. रा. सं. वि. नई दिल्ली-110016

**( नरेन्द्र सिंह तोमर )**

दूरभाष (कार्या. वि.स.): 0755-2440200, 2440201, 2440202, फैक्स (कार्या): 0755-2522153
(निवास-भोपाल): बी-144/1, प्रोफेसर कॉलोनी, भोपाल-462002 (म.प्र.), फोन: 0755-2661366, 2440402, 2440694, फैक्स (निवास): 0755-2440315
(निवास-ग्वालियर): 29, रेस कोर्स रोड, ग्वालियर-474005 (म.प्र.), फोन: 0751-2233800
ई-मेल: mpofficebhopal@gmail.com, nstomaroffice@gmail.com

# राजेन्द्र शुक्ल

## उप मुख्यमंत्री, मध्यप्रदेश

पत्र क्रमांकः 2855

दिनांक : 31/07/2024

## शुभकामना संदेश

यह जानकर प्रसन्नता हुई कि श्री केदारनाथ द्विवेदी द्वारा लिखित एवं प्रो. देवेन्द्र प्रसाद मिश्र द्वारा सम्पादित ग्रन्थ **'भगवान परशुराम एवं सोहनाग धाम'** का प्रकाशन 'अभ्युदय प्रकाशन' द्वारा किया जा रहा है।

यह भी हर्ष का विषय है कि इस ग्रन्थ में भगवान् श्रीहरि के चौबीस अवतारों तथा भगवान् श्रीपरशुराम के आदर्श चरित्र और लीला, कथा का वर्णन तथा पूजन की विधियों का उल्लेख किया गया है, जिससे विद्यानुरागी

अनुसन्धानकर्ताओं तथा अध्यात्मप्रेमी पाठकों के लिये यह ग्रन्थ लोकोपकारी सिद्ध होगा।

मैं पुस्तक के सफल प्रकाशन की कामना करता हूं तथा लेखक एवं सम्पादक को अपनी हार्दिक शुभकामनाएं देता हूं।

शुभेच्छु

(राजेन्द्र शुक्ल)

प्रति

**प्रो. देवेन्द्र प्रसाद मिश्र**

आचार्य एवं अध्यक्ष-वेद विभाग

श्रीलाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय

(केन्द्रीय विश्वविद्यालय)

बी-4, कुतुब सांस्थानिक क्षेत्र, नई दिल्ली-110016

**डॉ. राजेश मिश्रा**
**संसद सदस्य, लोक सभा**

सत्यमेव जयते

दिल्ली-निवास-
417, नया मध्यप्रदेश भवन, जीसस
एंड मैरी रोड, चाणक्यपुरी,
नई दिल्ली-110021
ई-मेल : rajeshmishra@gmail.com

03 अगस्त 2024

# शुभकामना संदेश

लोकाराधनतत्पर वैदिक-धर्म के उद्धारक समाज के कष्टनिवारणार्थ अपना सर्वस्व उत्सर्ग करने वाले विश्वविश्रुतकीर्ति भगवान् श्रीपरशुराम जी में वेदादिशास्त्रसम्मत सत्पुरुषों के लक्षण, शील और आचरण विद्यमान हैं। योगीन्द्र-मुनीन्द्र-वन्दित-पादारविन्द श्रीपरशुराम जी ने सम्पूर्ण पृथ्वी को जीतकर लोक-कल्याण के लिये यज्ञ किया और उस यज्ञ के सम्पन्न होने पर दक्षिणा के रूप में सारी पृथ्वी ब्रह्मज्ञानी महात्मा कश्यप को दे दिया और स्वयं के लिये महेन्द्रपर्वत को विश्राम-स्थल बनाकर विश्व के इतिहास में सर्वश्रेष्ठ आदर्श स्थापित किया-

**क्षत्रियान्तकरः श्रीमान्सत्यवादी जितेन्द्रियः।**
**दत्तवान्मेदिनीं कृत्स्नां कश्यपाय महात्मने ॥**

(श्रीमद्देवीभागवत ४/१६/१५)

**स त्वं धर्मपरो भूत्वा कश्यपाय वसुन्धराम् ।**
**दत्त्वा वनमुपागम्य महेन्द्रकृतकेतनः ॥**

(श्रीमद्वाल्मीकीयरामायण १/७५/८)

सीधी : वार्ड नं. 11, दीनदयाल पार्क के सामने, कलेक्टोरेट रोड, उत्तरी कुरौदिया, सीधी, मध्यप्रदेश-486661

विवेच्य ग्रन्थ- **भगवान् श्रीपरशुराम एवं सोहनाग धाम** ग्रन्थ प्रणेता महामहोपाध्याय **श्रीकेदारनाथ द्विवेदी** 'वेदाचार्य' (पूर्व वेदविभागाध्यक्ष, शासकीय संस्कृत महाविद्यालय, भितरी, जिला सीधी, मध्यप्रदेश) और ग्रन्थरत्न के सम्पादक **विद्यावाचस्पति प्रो. देवेन्द्र प्रसाद मिश्र** [आचार्य एवं अध्यक्ष-वेद विभाग, श्रीलाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय (केन्द्रीय विश्वविद्यालय) नई दिल्ली] के अभ्युदय में सहायक सिद्ध होगा। मैं पुस्तक के सफल प्रकाशन की कामना करता हूँ।

3.8.24

**( डॉ. राजेश मिश्रा )**

प्रति

**प्रो. देवेन्द्र प्रसाद मिश्र**

आचार्य एवं अध्यक्ष-वेद विभाग

श्रीलाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय

(केन्द्रीय विश्वविद्यालय)

बी-4, कुतुब सांस्थानिक क्षेत्र, नई दिल्ली-110016

**अजय सिंह**

**विधायक**

विधानसभा क्षेत्र-चुरहट, जिला-सीधी
पूर्व मंत्री, मध्यप्रदेश शासन
पूर्व नेता प्रतिपक्ष, मध्यप्रदेश विधानसभा

C-19, शिवाजी नगर भोपाल- 462016,
मध्य प्रदेश
दूरभाष-0755-2555355,
फैक्स- 0755-2572284
ई-मेल: ajayc16@hotmail.com

दिनाङ्क : 05/08/2024

## सन्देश

यह जानकर हार्दिक प्रसन्नता हुई कि महामहोपाध्याय **श्रीकेदारनाथ द्विवेदी** (पूर्व वेदविभागाध्यक्ष, शासकीय संस्कृत महाविद्यालय, भितरी, जिला-सीधी, मध्य प्रदेश) द्वारा प्रणीत एवं हमारे परम स्नेही विद्यावाचस्पति **प्रो. देवेन्द्र प्रसाद मिश्र** (आचार्य एवं अध्यक्ष-वेद विभाग, श्रीलाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रीय संस्कृत विश्वविद्याय, नई दिल्ली) द्वारा सम्पादित **भगवान् श्रीपरशुराम एवं सोहनाग धाम** नामक ग्रन्थ प्रकाशित किया जा रहा है।

**भगवान् श्रीपरशुराम एवं सोहनाग धाम** नामक ग्रन्थ के प्रकाशन के अवसर पर मङ्गलकामना करता हूँ, और ईश्वर से प्रार्थना करता हूँ कि यह ग्रन्थ समाज के लिए अधिक से अधिक उपयोगी सिद्ध हो एवं आने वाली पीढ़ियों के लिए प्रेरणादायक हो।

शुभकामनाओं सहित।

**अजय सिंह**

**गोपाल भार्गव**

**विधायक**

विधानसभा क्षेत्र-39, रहली,
जिला-सागर

पूर्व मंत्री, मध्यप्रदेश शासन
पूर्व प्रोटेम स्पीकर, मध्यप्रदेश विधानसभा
पूर्व नेता प्रतिपक्ष, मध्यप्रदेश विधानसभा

**निवासः**
* बी-1, स्वामी दयानंद नगर, (74 बंगला), भोपाल (म.प्र.) 462003
* 'गणनायक' गढ़ाकोटा, जि. सागर (म.प्र) 470229 दूरभाषः 07585-796633
मोबा.: 9425171242
ई-मेल: gopal_bha@rediffmail.com

दिनाङ्क : १ अगस्त २०२४

## ॥ शुभाभिशंसा ॥

भार्गव-वंश की पवित्र परम्परा में भारतीय संस्कृति की रक्षा तथा सनातन-आर्य मर्यादा का पोषण करने वाले अनेक ऋषि-मुनि उत्पन्न हुए। इस कुल के वत्स, मार्कण्डेय, च्यवन, दधीचि, और्व, आप्नवान, ऋचीक, जमदग्नि, शौनक, पाणिनि आदि अनेक सत्पुरुषों के चरित्र जन्म से चर्मावस्था तक परम-पवित्र रहे हैं। ऐसे पवित्र वंश में जामदग्न्य भगवान् श्रीपरशुराम वर्तमान मन्वन्तर के उन्नीसवें त्रेता युग में अवतीर्ण हुए। भर्गव-कुल-रूपी कमल के सूर्य योगीन्द्र-मुनीन्द्र-वन्दित-पादारविन्द भगवान् श्रीपरशुराम जी ने सम्पूर्ण पृथ्वी को क्षत्रियों से जीतकर लोक-कल्याण के लिये अश्वमेध यज्ञ किया और उस अश्वमेध-यज्ञ के पूर्ण होने पर दक्षिणा के रूप में सारी पृथिवी को पुण्यकर्मा महात्मा कश्यप जी को दे दिया और देवताओं के लिए भी दुस्त्यज राज्यलक्ष्मी का त्याग कर स्वयं वन में जाकर महेन्द्र-पर्वत पर रहने लगे-

**क्षत्रियान्तकरः श्रीमान्सत्यवादी जितेन्द्रियः ।**
**दत्तवान्मेदिनीं कृत्स्नां कश्यपाय महात्मने ॥**

(श्रीमद्देवीभागवत ४/१६/१५)

विश्वविश्रुतकीर्ति विश्वात्मा श्रीपरशुराम जी ने जब से पृथ्वी को जीतकर महर्षि कश्यप को दान कर दी, तब से आज तक वे महेन्द्र पर्वत पर ही तप कर रहे हैं। भारतीय जनमानस में पवित्रकीर्ति श्रीपरशुराम जी अजर-अमर-रूप में प्रतिष्ठित हैं-

**अश्वत्थामा बलिर्व्यासो हनूमांश्च विभीषणः।**
**कृपः परशुरामश्च सप्तैते चिरजीविनः ॥**

(पद्मपुराण ५१/७)

**भगवान् श्रीपरशुराम एवं सोहनागधाम** नामक इस अभूतपूर्व ग्रन्थरत्न के विहङ्गावलोकन का अवसर प्राप्त कर मुझे अत्यन्त हर्ष हो रहा है। महामहोपाध्याय **श्रीकेदारनाथ द्विवेदी** 'वेदाचार्य' (ग्राम-धनौतीराय, पत्रालय-पिपरारामधर, जिला-देवरिया, उत्तरप्रदेश) और विद्यावाचस्पति **प्रो० देवेन्द्र प्रसाद मिश्र** [आचार्य एवं अध्यक्ष-वेद विभाग, श्रीलाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय (केन्द्रीय विश्वविद्यालय) नई दिल्ली] ने विवेच्य-ग्रन्थ के लेखन एवं सम्पादन में सराहनीय श्रम किया है। जिसके लिये मैं इन सारस्वत उपासना निष्ठ सर्जक एवं सम्पादक को भूरिशः साधुवाद देते हुये अखण्डचन्द्रखण्डधारी मुण्डमालभूषित आशुतोष भगवान् श्रीमहाकालेश्वर और माता श्रीअवन्तिका देवी के कृपा कटाक्ष लाभ की कामना करता हूँ।

**(गोपाल भार्गव)**

**डॉ. प्रीति भार्गव**
पूर्व विधायक
उज्जैन
मध्यप्रदेश विधानसभा

**निवास**
पण्डित राम प्रसाद भार्गव मार्ग,
उज्जैन मध्यप्रदेश
मो. 9827077515

दिनाङ्क १०.०५.२०२४

## ॥ प्रास्ताविकम् ॥

भगवान् श्रीविष्णु के सभी अवतारों के नाम, रूप, लीला आदि अनन्त तथा अवर्णनीय हैं। जीवों का उद्धार करने के लिये अवतार लेकर भगवान् श्रीहरि लीलाओं का विस्तार करते हैं। अद्भुतकर्मा भगवान् श्रीविष्णु के चौबीस अवतार-

**मत्स्यः कूर्मो वराहो नृहरिबटुपरश्वायुधा रामकृष्णौ**
**बुद्धः कल्की कुमारर्षभमनुपृथवो मोहिनी व्यासयज्ञौ।**
**दत्तो देवर्षिनारायणकपिलहयग्रीववैद्येशहंसा**
**विष्णोरंशा जयन्ति ध्रुववरदगजत्राणत्रिभ्यां सहैते ॥**

जामदग्न्य श्रीपरशुराम ने अठारह द्वीपों को अपने वश में करके उत्तम दक्षिणाओं से युक्त शताधिक यज्ञों का अनुष्ठान किया-

**एवं गुणशतैर्युक्तो भृगूणां कीर्तिवर्धनः ।**
**जामदग्न्योह्यतियशाश्चिरजीवी महाद्युतिः ॥**

(महाभारत द्रोणपर्व ४/७०/२३)

रेणुकानन्दवर्धन श्रीपरशुराम जी के यज्ञादि पुण्यकर्मों को देखकर देवताओं ने कहा- अहो! यह मनुष्यलोक धन्य है, इस भूभाग के मनुष्य भाग्यवान् हैं, जहाँ द्विजवर श्रीपरशुरामजी ने अद्भुत यज्ञ-यागादि पुण्यकर्म किया-

**अहो धन्यो नृलोकोऽयं सभाग्याश्च नरा भुवि ।**
**यत्र कर्मे दृशं धर्म्यं द्विजेन कृतमित्युत ॥**
(महाभारत शान्तिपर्व ५०/४)

परमात्मा ने प्राणियों के लिए बुद्धि, इन्द्रिय, मन और प्राणों का निर्माण किया है। इनमें से प्राणों के द्वारा वे जीवन-धारण, इन्द्रियों के द्वारा सत्शास्त्रों का श्रवण, मन के द्वारा तत्त्व-चिन्तन और मनन तथा बुद्धि के द्वारा तत्त्व का निश्चय करके आत्मा का साक्षात्कार कर सकते हैं-

**बुद्धीन्द्रिय-मनः प्राणान् जनानामसृजत् प्रभुः ।**
**मात्रार्थं च भवार्थं च आत्मनेऽकल्पनाय च ॥**
(श्रीमद्भागवत १०/८७/२)

जगद्-रचयिता विधाता ने संसार में असङ्ख्य योनियों में तरह-तरह के अनन्तानन्त जीव रचे। यद्यपि विलक्षण तथा अद्भुत-अद्भुत शक्तिशाली दैत्य-दानव एवं दिव्यातिदिव्य देव-जाति का विधाता ने निर्माण किया, तथापि इस सृष्टि से उसको सन्तोष नहीं हुआ क्योंकि **अकल्पनाय** को पूर्ण कर सकने की साधन सम्पत्ति पूर्ण रूप से उनमें से किसी में भी विद्यमान नहीं थी। इसी एक बड़ी अपूर्णता से उन्हें देखकर विधाता को सन्तोष नहीं हुआ। तत्पश्चात् विधाता ने मनुष्य का आविर्भाव किया, जिसे देखकर विधाता को अत्यन्त प्रसन्नता हुई, क्योंकि मनुष्य के अन्दर उनको अपनी जीव-सृष्टि के मुख्य प्रयोजन ईश्वर का साक्षात्कार कर लेने की बुद्धि दिखलायी पड़ी-

**सृष्ट्वा पुराणि विविधान्यजयात्मशक्त्या**
**वृक्षान् सरीसृपपशून् खगदंशमत्स्यान् ।**
**तैस्तैरतुष्टहृदयः पुरुषं विधाय**
**ब्रह्मावलोकधिषणं मुदमाप देवः ॥**
(श्रीमद्भागवत् ११/९/२८)

मनुष्य में आत्म-कल्याण के एक-से-एक उत्कृष्ट साधन विद्यमान हैं तथा आत्म-साक्षात्कार कर सकने की बुद्धि है। नर-देह में प्राणियों के अभ्युदय और निःश्रेयस के सब साधन विद्यमान हैं। इसीलिए विधाता की सृष्टि में मनुष्य-योनि सब योनियों में श्रेष्ठ है। मनुष्य-शरीर की सहायता से सब देवता भी अपना-अपना हविर्भाग ग्रहण करते हैं-

**अहो एतज्जगत्सृष्टः सुकृतं बत ते कृतम् ।**
**प्रतिष्ठिताः क्रिया अस्मिन् साकमन्नमदामहे ॥**

(श्रीमद्भागवत ३/२०/५१)

पवित्रकीर्ति भगवान् श्रीपरशुराम जी की कृपा से उनके यशोगान का यह विवेच्य ग्रन्थ- **भगवान् श्रीपरशुराम एवं सोहनाग धाम** ग्रन्थ प्रणेता महामहोपाध्याय **श्रीकेदारनाथ द्विवेदी** 'वेदाचार्य' (पूर्व वेदविभागाध्यक्ष, शासकीय संस्कृत महाविद्यालय, भितरी, जिला सीधी, मध्यप्रदेश) और ग्रन्थरत्न के सम्पादक **विद्यावाचस्पति प्रो. देवेन्द्र प्रसाद मिश्र** (आचार्य एवं अध्यक्ष-वेद विभाग, श्रीलाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रीय संस्कृत विश्वविद्याय, नई दिल्ली) के अभ्युदय में सहायक सिद्ध होगा तथा विद्यानुरागी पाठकों को लाभान्वित करेगा।

**( डॉ. प्रीति भार्गव )**

विक्रमाब्द २०८१,
वैशाखशुक्लपक्ष अक्षयतृतीया
शुक्रवार, श्रीपरशुरामजयन्ती

**प्रो. मुरलीमनोहरपाठकः**
**कुलपतिः**
**Prof. Murlimanohar Pathak**
Vice Chancellor

ीलालबहादुरशास्त्रीराष्ट्रियसंस्कृतविश्वविद्यालयः
(केन्द्रीयविश्वविद्यालयः) 'ए' ग्रेड (नैक)
बी-४ कुतुबसंस्थानिकक्षेत्रम्, नवदेहली-११००१६
**Shri Lal Bahadur Shastri National Sanskrit University**
(Central University) 'A' Grade (NAAC)
B-4 Qutub Institutional, Area, New Delhi-110016 (INDIA)
Ph,:011-26851253,26564003, Fax: 011-26520255
E-mail :profmpathak@gmail.com, vcslbsrsv@yahoo.co.in

---

सं.-श्रीलाबशा./वी.सी. २०२४/१४(i) दिनाङ्क १०.०५.२०२४

# प्ररोचना

भृगुकुलरूपी कमल के सूर्य भगवान् श्रीपरशुराम का चरित्र लोक-परलोक में नित्य परम कल्याणकारी है। विष्णु के अवतार वीरलोक नमस्कृत श्रीपरशुराम विप्र-धेनु-सुर-संतों के पालक तथा शाश्वत सनातन आद्यधर्म के संरक्षक हैं। असत्य, अज्ञान, अधर्म एवं अंधकार से सत्य, ज्ञान तथा प्रकाश का युद्ध ही षडैश्वर्ययुक्त श्रीपरशुराम के जीवन में प्रबलता के साथ व्यक्त हुआ है, जो मानव मात्र के जीवन में न्यूनाधिक रूप से चलता रहता है। असत्य एवं अधर्म के प्रति युद्ध करते हुए उसके निराकरण में हम जिस सीमा तक पहुँच पाते हैं, उसी सीमा तक हम मानो श्रीपरशुराम को अपने जीवन में उतार पाते हैं और उसी सीमा तक हम धर्मरूप हो पाते हैं। वेदवेत्ताओं में श्रेष्ठ श्रीपरशुराम के पावन चरित्र का श्रवण और मनन कर हम पावन एवं धन्य हो सकते हैं। ॐकारस्वरूप पवित्रकीर्ति जगदात्मा श्रीपरशुराम के समस्त व्यापार केवल लोकशिक्षा के लिये हैं।

उन्नीसवें चतुर्गुण के त्रेता नामक युग में अद्भुत चरित्रवाले भगवान् विष्णु महर्षि जमदग्नि के परशुराम नामक महावली पुत्र के रूप में अवतार धारण किए। क्षत्रियों का नाश कर डालने वाले उन प्रतापी, सत्यवादी तथा जितेन्द्रिय परशुराम ने सम्पूर्ण पृथ्वी (क्षत्रियों से छीनकर) महात्मा कश्यप को दे दी थी। हे राजेन्द्र (जनमेजय जी)! मैंने अद्भुत कर्मवाले भगवान् विष्णु के पापनाशक "परशुराम" नामक अवतार का वर्णन किया है-

**युगे चैकोनविंशेऽथ त्रेताख्ये भगवान् हरिः ।**
**जमदग्निसुतो जातो रामो नाम महाबलः ॥**
**क्षत्रियान्तकरः श्रीमान्सत्यवादी जितेन्द्रियः ।**
**दत्तवान्मेदिनीं कृत्स्नां कश्यपाय महात्मने ॥**
**यो वै परशुरामाख्यो हरेरद्भुतकर्मणः ।**
**अवतारस्तु राजेन्द्र कथितः पापनाशनः ॥**

(श्रीमद्देवीभागवत ४/१६/१४-१६)

जब से विश्वात्मा परशुरामजी ने क्षत्रियों से पृथ्वी को छीनकर महर्षि कश्यप को दान कर दी, तबसे वे महेन्द्राचल पर ही रहते हैं। पृथ्वी को महात्मा कश्यप जी को दान में दे दी इससे उसपर रात में विश्राम नहीं करते -

**स त्वं धर्मपरो भूत्वा कश्यपाय वसुन्धराम् ।**
**दत्त्वा वनमुपागम्य महेन्द्रकृतकेतनः ॥**

(श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण १/७५/८)

अनुग्रहविग्रह मर्यादापुरुषोत्तम भगवान् श्रीराम जी ने लोकाभिराम श्रीपरशुराम जी से बोले- भृगुनन्दन ! ब्रहान् ! आपने पिता के ऋण से उऋण होने की - पिता के मारने वाले का वध

करके वैर का बदला चुकाने की भावना ले कर जो क्षत्रिय - संहाररूपी कर्म किया है, उसे मैने सुना है और हमलोग भी आपके उस कर्मका अनुमोदन भी करते हैं-

**कृतवानसि यत् कर्म श्रुतवानस्मि भार्गव ।**
**अनुरुध्यामहे ब्रह्मन् पितुरानृण्यमास्थितः ॥**
(श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण १/७६/२४)

काकुत्स्थकुलभूषण लोकाभिराम भगवान् श्रीराम ने महर्षि जमदग्निकुमार श्रीपरशुराम का पूजन किया। श्रीराम से पूजित हो रेणुकानन्दवर्धन असीम बलनिधान श्रीपरशुराम अपने स्थान को चले गये -

**रामं दाशरथिं रामो जामदग्न्यः प्रपूजितः ।**
**ततः प्रदक्षिणीकृत्य जगामात्मगतिं प्रभुः ॥**
(श्रीमद्वाल्मीकीयरामायण १/७६/२४)

शरणागतभक्तवत्सल जमदग्नितनय श्रीपरशुराम के गोरे सरीरपर विभूति तथा विशाल ललाटपर त्रिपुण्ड्र शोभायमान होता है। सिर पर जटा, चन्द्रमा के समान मुख, बैल के समान कंधे, चौड़ी छाती, लम्बी भुजाएँ, सुन्दर जनेऊ, माला एवं मृगछाला, कमर में मुनिवस्त्र, बँधे हुए दो तरकश, हाथ में धनुष और बाण, कन्धे पर सुन्दर कुठार और शान्त वेषधारी अद्‌भुत कर्म वाले श्रीपरशुराम जी के स्वरूप का वर्णन नहीं किया जा सकता -

**गौर सरीर भूति भल भ्राजा ।**
**भाल बिसाल त्रिपुंड बिराजा ॥**
**सीस जटा ससि बदनु सुहावा ।**
**रिस बस कछुक अरुन होइ आवा ॥**

भृकुटी कुटिल नयन रिस राते ।
सहजहुँ चितवत मनहुँ रिसाते ॥
वृषभ कंध उर बाहु बिसाला ।
चारु जनेउ माल मृगछाला ॥
कटि मुनि बसन तून दुइ बाँधे ।
धनु सर कर कुठार कलकाँधे ॥
सांत वेषु करनी कठिन बरनि न जाइ सरूप ।
धरि मुनि तनु जनु बीररसु आयउ जहँ सब भूप ॥

(श्रीरामचरितमानस बालकाण्ड दोहा २६८/४-८)

**भगवान् परशुराम एवं सोहनाग धाम** नामक इस ग्रन्थ में ग्राम–धनौतीराय, पत्रालय–पिपरा रामधर, जिला–देवरिया, उत्तर प्रदेश निवासी एवं **श्रीपरशुराम चण्डिका वेद विद्यालय**, सोहनाग के पूर्व छात्र **महामहोपाध्याय श्रीकेदारनाथ द्विवेदी 'वेदाचार्य'** ने वेदादिशास्त्रो के आधारपर अत्यन्त परिश्रम पूर्वक श्रीपरशुरामचरित की व्यापकता का प्रतिपादन किया है। इस ग्रन्थ के प्रणेता **श्रीकेदारनाथ द्विवेदी जी** संस्कृत और हिन्दी के लब्धप्रतिष्ठ मनीषी हैं। उनका जीवन भगवद्विश्वास, भगवत्प्रेम, भगवद्भक्ति और ज्ञान का मूर्तिमान् आदर्श है।

**भगवान् परशुराम एवं सोहनाग धाम** इत्याख्य ग्रन्थ के सम्पादक **प्रो. देवेन्द्र प्रसाद मिश्र** हमारे विश्वविद्यालय (श्रीलाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय, नई दिल्ली) के वेद विभाग के आचार्य एवं अध्यक्ष हैं। प्रो. मिश्र ने परिश्रमपूर्वक भगवान् श्रीपरशुराम चरित विषयक अनेक तथ्यों को व्यवस्थित रूप से सम्पादित किया है। यह भगवद्भक्त-प्रेमी साधकों के लिए

बहुत ही हर्ष का विषय है। इस ग्रन्थ द्वारा निश्चय ही संस्कृत एवं हिन्दी साहित्य की श्रीवृद्धि होगी और सहृदय अध्यात्मनिष्ठ अध्येता भगवद्भक्तिरस पाकर अवश्य ही कृतार्थ होंगे।

**परशुरामचारित्रमधीयानाः समे जनाः।**
**लभन्तां प्रेरणाः दिव्याः प्रमोदन्तां हि सज्जनाः॥**

विक्रमाब्द २०८१,
वैशाखशुक्लपक्ष अक्षयतृतीया
शुक्रवार, श्रीपरशुरामजयन्ती

10.05.2024
**(प्रो. मुरली मनोहर पाठक)**

राष्ट्रपतिपुरस्कारेण सभाजितो महामहोपाध्यायः
**प्रो. मिथिलाप्रसादत्रिपाठी**
कुलपतिचरः
महर्षिपाणिनिसंस्कृत एवं वैदिकविश्वविद्यालयः
उज्जयिनी, मध्यप्रदेशः,
निदेशकचरश्च, कालिदाससंस्कृत अकादमी, उज्जयिनी

आवास-सङ्केतः
५७अ वैशाली नगरम्, इन्दौर,
मध्यप्रदेशः ४५२००९
मो. ९४२५०७२१५१

दिनाङ्कः १०.०५.२०२४

## 卐 आशंसनम् 卐

लोकान् ददौ शक्तिसमर्जितान् यः
स्वीचक्र इष्टं स्वमनोजवत्वम्।
शार्ङ्गाख्यचापं रघुनन्दनाय
प्रत्यर्प्य राराजति भार्गवेन्द्रः ॥१॥

जित्वा महीं शस्त्रधराग्रगण्यः
कृत्वा मखं कश्यपयाजकाय ।
दत्वा महेन्द्राचलवासशीलः
बाभात्यहो भार्गववंशदीपः॥२॥

द्रोणाय भीष्माय च शस्त्रविद्यां
कर्णाय छद्माधिगताय चापि ।
प्रीत्या प्रदायापि तथा न तुष्टः
क्षत्रान्तको भार्गववंशदीपः ॥३॥

वेदागमाद्या निखिलाश्च विद्याः
पित्रा शिवेनापि पितामहेन ।
संप्राप्य शास्त्राणि सशस्त्रकानि
रामेण सम्यक् चुलुकीकृतानि ॥४॥

महार्णवाल्लब्धमही महीशः
यो निर्ममे कोङ्कणकः प्रदेशः ।
स्वां संस्कृतिं स्थापितवान् तपस्वी
सानातनीं सः भृगुवंशदीपः ॥५॥

द्विजगणाः द्विजतां च पराक्रमं
भुवि समर्जयितुं च कृतत्त्वराः ।
परशुराममुनिं समुपासते
विजयतेऽखिलदिक्षु भृगुप्रभा ॥६॥

क्वचिदसावुशना कविषूत्तमः
क्वचिदिहास्ति मृकण्डुसुतस्य भा ।
च्यवनशौनक और्वदधीचिभिः
परशुरामयशोऽद्य वितीर्यते ॥७॥

दिनकरो जमदग्निरुषा क्षणात्
परिददौ खलु छत्रमुपानहम् ।
नभसि सप्तमुनिष्वनुकीर्त्यते
परशुरामयशो दिवि शोभते ॥८॥

यत्कुलर्षिणा पुराणनिर्मितिर्विधीयते
यत्कुलर्षितारकोदिते शुभानि तन्वते ।
यत्कुलं सुजीवनीयविद्ययाञ्चितं पुनः
पर्शुरामजीवनं चिरन्तनं तनोति शम् ॥९॥

केदारनाथाश्रितधीभिरारात्
केदारनाथैर्भृगुवंशजानाम् ।
कीर्तिः समावर्णि च सोहनाग-
व्याजेन सम्मेल्य निजांश्च भावान् ॥१०॥

वत्साप्नुवानादिमुनीन् स्वभक्त्या
यादृग्लिलेखात्र किदारनाथः ।
सम्पाद्य देवेन्द्रकुमारनाम्ना
प्राकाशि तुष्टाः खलु भार्गवाः स्युः ॥११॥

सञ्जातगोत्रर्षिजगौरवोऽयं
देवेन्द्रमिश्रः प्रभुजामदग्न्यम् ।
शब्दप्रसूनैः समपूपुजच्च
प्रीतो भवेच्छास्त्रसुशस्त्रवेत्ता ॥१२॥

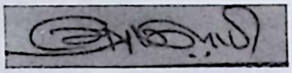

विक्रमाब्दः २०८१,
श्रीपरशुरामजयन्ती अक्षयतृतीया **(प्रो. मिथिलाप्रसादत्रिपाठी)**
शुक्रवासरः

राष्ट्रपति-सम्मानित, महामहोपाध्याय
**प्रो0अभिराज राजेन्द्रमिश्र**
**पूर्वकुलपति, पद्मश्री**
सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय,
वाराणसी-२२१००२
मो० ९४१८०४१५३७

Mahamahopadhyaya
**Prof. Abhiraj Rajendra Mishra**
ex- **Vice Chancellor, PADMASHRI**
Sampurnand Sanskrit university,
Varanasi-221002
Mb. 9418041537

दिनाङ्कः १३/०७/२४ ई.

## 卐 नान्दीवाक् 卐

भारत ही नहीं, प्रत्युत सम्पूर्ण विश्व किं वा ब्रह्माण्ड का यथार्थ ऐतिह्य जानने का एकमात्र स्रोत पुराण ही है। कुछ मूढ पाश्चात्त्यों ने पुराणों को **भारत का अतीत प्रमापक** नहीं माना, जैसे कोई दरिद्र भिक्षुक सुवर्ण-मुद्रा (दीनार) के अस्तित्व में विश्वास न करे। परन्तु सत्य यही है कि भारत का सम्पूर्ण अतीत पुराण दर्पण में प्रतिबिम्बित है। नारदीय एवं मत्स्यमहापुराण में तो पुराणों को वेदों का भी प्राग्वर्ती तथा वेदों से भी अधिक महिमामय माना गया है -

**वेदार्थादधिकं मन्ये पुराणार्थं वरानने ।**
**वेदाः प्रतिष्ठिताः सर्वे पुराणे नात्र संशयः ॥**

(नारदीयपुराण २, २४/१७)

**पुराणं सर्वशास्त्राणां प्रथमं ब्रह्मणा स्मृतम् ।**
**नित्यं शब्दमयं पुण्यं शतकोटिप्रविस्तरम् ॥**
**अनन्तरञ्च वक्त्रेभ्यो वेदास्तस्य विनिस्सृताः ।**
**मीमांसान्यायविद्याश्च प्रमाणाष्टकसंयुताः॥**

(मत्स्यमहापुराण ३/३-४)

प्रत्येक पुराण में सृष्टिप्रक्रिया (World Creation) का सन्दर्भ, भुवनसंक्षेप के अन्तर्गत आता है ( **सर्गश्च प्रतिसर्गश्च वंशो मन्वन्तराणि च। वंशानुचरितं चेति पुराणं पञ्चलक्षणम्॥** ) यह सन्दर्भ अत्यन्त गूढ एवं रहस्यमय होते हुए भी परमार्थतः उपादेय है। परमेश्वर की आज्ञा से परमेष्ठी धाता जब सृष्टि-तत्पर हुए तो सर्वप्रथम उन्होने सनकादि मानसपुत्रों को पैदा किया। तदनन्तर उन्होंने अपने विभिन्न अंगों से दश पुत्रों की सृष्टि की, जिनमें सप्तर्षि भी आते हैं। ब्रह्मा की त्वचा से महर्षि भृगु पैदा हुए जिनसे ऋषियों का प्रख्यात भार्गव-वंश प्रवर्तित हुआ । भृगु की प्रथम भार्या दिव्या हिरण्यकशिपु की कन्या थी। दिव्या के गर्भ से ही शुक्राचार्य का जन्म हुआ।

भृगु की दूसरी पत्नी पौलोमी से च्यवन का जन्म हुआ। च्यवन की पत्नी सुकन्या से प्रमति, रुरु शुनक एवं शौनकादि हुए। च्यवन की दूसरी पत्नी आरुषि से और्व, ऋचीक तथा जमदग्नि की परम्परा अग्रसर हुई। जमदग्नि के ही पाँच पुत्रों में कनिष्ठतम थे जामदग्न्य भगवान् परशुराम जो वर्तमान मन्वन्तर के उन्नीसवें त्रेता युग में अवतीर्ण हुए। परशुराम को विष्णु के दशावतारों में गिना जाता है। वह चौवीसवें त्रेता में भी विद्यमान थे दशरथनन्दन राम के समय में, और आज भी वह दक्षिण भारत के महेन्द्रगिरि पर तपोरत माने जाते हैं। वस्तुतः वह अजर-अमर माने जाते हैं-

**अश्वत्थामा बलिर्व्यासो हनूमांश्च विभीषणः ।**
**कृपः परशुरामश्च सप्तैते चिरजीविनः ॥**

(पद्मपुराण ५१/७)

देवाधिदेव शिव परशुराम के आयुधविद्या-गुरु थे। प्रसन्न-मन

शम्भु द्वारा प्रदत्त अव्याहत परशु के कारण ही उनकी ख्याति परशुराम के रूप में हुई। परशुराम की पितामही सत्यवती चन्द्रवंशी नरेश गाधि (कुशिक) की कन्या थीं अतः गाधिपुत्र कौशिक (विश्वामित्र) परशुराम के मातुल थे। चरुविपर्यय के कारण मामा और भागिनेय विपरीत स्वभाव के हुए – यह कथानक श्रीमद्भागवत में वर्णित है।

हैहयवंशी नरेश कार्तवीर्य अर्जुन, दुर्भाग्यवश महर्षि जमदग्नि का घोर अपमान कर बैठा। फलतः पितृभक्त परशुराम ने अकेले ही घोर समर में न केवल उसकी सैन्यशक्ति का प्रत्युत घमण्ड में चूर उसका भी वध कर डाला। परन्तु जब अर्जुन के पापी पुत्रों ने धर्मविग्रह जमदग्नि को, समाधिमुद्रा में मग्न अकेला अरक्षित देख, पत्नी रेणुका के क्रन्दन करते ही मार डाला तथा उनका शीश उठा ले गये तो तीर्थयात्रा से लौटे परशुराम कालानल बन कर उनपर टूट पडे तथा सम्पूर्ण हैहयवंश को ही नामशेष कर दिया।

कुपित परशुराम ने अधर्म एवं पापपथारुढ, दुरभिमानी क्षत्रियों का २१ बार नाश किया तथा उनके रक्त से समन्तपञ्चक क्षेत्र में रक्त के पाँच सरोवर भर दिये। पिता का शिर लाकर उनके धड़ से जोड़ दिया और यज्ञों द्वारा सर्वदेवमय आत्मस्वरूप भगवान् का यजन किया। भगवान् परशुराम ने अनेक अश्वमेध यज्ञ किये तथा सम्पूर्ण पृथ्वी महर्षि कश्यप को अर्पित कर स्वयं महेन्द्राचल पर चले गये ।

संस्कृत में डॉ० सुधीकान्त भारद्वाज तथा डॉ. सुधेन्दु आदि ने महाकाव्य लिखे हैं। परन्तु यह जान कर हार्दिक प्रसन्नता हुई कि

आचार्य **श्रीकेदारनाथ द्विवेदी** जी ने एक उत्तम गद्य महाकाव्य लिखा है जो मेरे परमप्रिय शिष्य विद्वत्कुलरत्न **प्रो.देवेन्द्रमिश्र** के सम्पादन में प्रकाशित हुआ है। मैं संस्कृतजगत् की ओर से कृति एवं कृतिकार–दोनो का हार्दिक अभिनन्दन करता हूँ। –

मिश्रोऽभिराजराजेन्द्रः

**( प्रो. अभिराज राजेन्द्र मिश्र 'पद्मश्री' )**

राष्ट्रपति-सम्मानित, महामहोपाध्याय
**प्रो0अभिराज राजेन्द्रमिश्र**
पूर्वकुलपति, पद्मश्री
सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय,
वाराणसी-२२१००२
मो० ९४१८०४१५३७

Mahamahopadhyaya
**Prof. Abhiraj Rajendra Mishra**
ex- Vice Chancellor, PADMASHRI
Sampurnand Sanskrit university,
Varanasi-221002
Mb. 9418041537

## ॥ शुभाशंसनम् ॥

श्रीमन्नन्दकुमारसूनुममलं देवेन्द्रमिश्रं प्रियं
नीहारस्फटिकावदातचरितं हृद्याशिषा भावये ।
सौम्ये जन्मदिने कुटुम्बिहृदयोल्लासाभ्रभानूपमे
हृद्भावाः सफलीभवन्तु ननु ते हृद्यानवद्याः समे ॥१॥

षट्सोदर्यकदम्बकेऽसि नितरां त्वं कौस्तुभाभो गुणी
नूनं वंशयशोविकासनिरतो गीर्वाणवाण्युद्भटः ।
भूत्वा भद्र ! शतायुरत्र जगति स्फारां समज्ञां सितां
सत्पुण्येन वृणुष्व तन्नु मनसा नित्यं मुदा कामये ॥२॥

शिमला
२५/१२/२०२३ ई.

साशीर्वचनम्

मिश्रोऽभिराजराजेन्द्रः

( मिश्रोऽभिराजराजेन्द्रः )

राष्ट्रपति-सम्मानितो महामहोपाध्यायः
**प्रो० केशवरामशर्मा**
**अभिनवकालिदासः**
दर्शनाचार्य, एम. ए. ( संस्कृत ),
एम.फिल्, लब्धस्वर्णपदकत्रय
राज्य प्रशिक्षण एवं अनुसन्धान संस्थान, सोलन, (हि.प्र.)

वर्तमान निवास- ए-3 कशिश अपार्टमेंट,
टैंक रोड, सोलन, हिमाचल प्रदेश
दूरभाष 0179-2223008
मो. 9418133268

दिनाङ्कः १०.०५.२०२४

## 卐 माङ्गल्योद्गाराः 卐

विद्योतते जगति वीरवराग्रगण्यः
स्वांशो हरेः परशुशस्त्रधरः स रामः ।
शौर्येण योऽतिमहता भुवनत्रयाणां
वीरान् तपोधनवरश्चकितानकार्षीत् ॥ १ ॥

सा रेणुका विजयते जमदग्निभार्या
तारासु या शशिनिभा गगने विभाति।
यस्याः पवित्रजठरं समलञ्चकारा-
दभ्रश्रिया परशुरामसुतोऽतिपूतः ॥ २ ॥

तस्यातिपुण्यचरितं व्यलिखच्छ्रमेण
केदारनाथविबुधो विदुषां वरेण्यः ।
यस्याग्रतः सकलदेशबुधा नितान्तं
विद्याप्रकर्षचकिता नतमस्तकाः स्युः ॥ ३ ॥

सद्गद्यकाव्यविषयोऽसुरहावतार
उत्कृष्टगद्यनिपुणश्च विपश्चिदग्र्यः ।
सार्थो मनोज्ञमणिकाञ्चनयोगतुल्यः
केषां भवेन्नहि सतां हृदयद्रवाय ॥ ४ ॥

एषा कृतिः सकलसंस्कृतविज्ञवृन्दा-
नन्दप्रदा भवतु कर्तृयशस्करी च ।
इत्येव माङ्गलिकहार्दिककामना मे
केदारनाथविदुषे प्रणतिश्च नम्रा ॥ ५ ॥

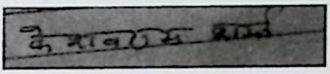

विक्रमाब्दः २०८१,
श्रीपरशुरामजयन्ती अक्षयतृतीया
शुक्रवासरः

(प्रो. केशवरामशर्मा)

राष्ट्रपति-सम्मानितो महामहोपाध्यायः
**प्रो० केशवरामशर्मा**
**अभिनवकालिदासः**
दर्शनाचार्य, एम. ए. (संस्कृत),
एम.फिल्, लब्धस्वर्णपदकत्रय
राज्य प्रशिक्षण एवं अनुसन्धान संस्थान, सोलन, (हि.प्र.)

वर्तमान निवास- ए-3 कशिश अपार्टमेंट,
टैंक रोड़, सोलन, हिमाचल प्रदेश
दूरभाष 0179-2223008
मो. 9418133268

---

दिनाङ्कः २५/१२/२०२३ ई.

## ▲ शुभाशंसा ▲

देवेन्द्रमिश्रबुधजन्मदिने भवन्तु
वर्द्धापनानि शतशो भविकप्रदानि ।
सर्वासु दिक्षु यशसः ध्वजमास्पुरेच्च
हर्षोत्सवोऽस्तु विदुषोऽस्य विदां समाजे ॥१॥

श्रीस्वामिधुर्यकरपात्रमहोदयस्या-
शीर्भिः कृतार्थबुधनन्दकुमारमिश्रः ।
तस्यात्मजः दिशि दिशि प्रविकीर्णकीर्तिः
देवेन्द्रमिश्रविबुधो ह्यभिवर्द्धतां सः ॥२॥

यो वेदवारिधितलात् बहुमूल्यरत्न-
तुल्यं विचारशतकं हि समुद्दधार ।
ग्रन्थान् बहूँश्च निरमात् महता श्रमेण
सर्वोपकारहृदयो विबुधाग्रगण्यः ॥३॥

यश्चोपकारकतया विदुषां प्रसिद्धः
सम्मेलनेषु च समुल्लसति ध्रुवं च ।
वाचो हि वाक्पतिसमा विलसन्ति यस्य
देवेन्द्रमिश्रविबुधो ह्यभिवर्द्धतां सः ॥४॥

यश्चानुशासकपदे गरिमाणमाप्त्वा
विद्याकुले महति निर्वहति स्वकार्यम् ।
यत्राम्बरे रविसमः प्रतिभासमानः
शोभां वहत्यधिकुलं महसा प्रशस्याम् ॥५॥

अद्यैतदीयशुभजन्मदिनेष्टकाले
श्रद्धादराक्तहृदयेन प्रहर्षितेन ।
वर्द्धापनानि शतशो वितराम्यमुष्मै
संवर्द्धतां प्रतिपलं लभतां च भद्रम् ॥६॥

जीवेदखण्डशतवर्षवयाः प्रसन्नः
श्रेष्ठं लभेत परमोच्चपदं गरीयः ।
संसाधयेद्धितमुपाश्रितसज्जनानाम्
इत्येवमस्तु विदुषे शुभकामना मे ॥७॥

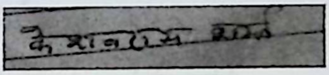

(प्रो० केशवरामशर्मा)

प्रो० विन्ध्येश्वरीप्रसादमिश्रो 'विनयः'
वरिष्ठाचार्यः
पूर्वसङ्कायप्रमुखः
काशीहिन्दूविश्वविद्यालयस्थः,
वाराणस्याम्-२२१००५

आत्मप्रदीपः
३८७, काशीपुरम्-कालोनी
संस्कृतविद्याधर्मविज्ञानसङ्काये,
ग्रामः - सीरगोवर्धनपुरम्
पो. ऑ. -डाफी, वाराणसी
पिनकोड- २२१०११ (उ.प्र.)
मो. ९९३६०३८३८३
ई.मेल-Profvpmvina@gmail.com

दिनाङ्कः १०.०५.२०२४

॥ श्रीहरिः ॥

## 卐 श्रीपरशुरामाष्टकम् 卐

सितभसितेन सुदीप्तं
गौराङ्गं सज्जटाघटोदीर्णम् ।
व्याघ्राजिनसुनिवीतं
परशुधरं राममानतोऽस्मि मुनिम् ॥१॥

विष्णोर्दशावतारे-
ष्वन्यतमं सद्व्रतिष्वनन्यतमम् ।
धन्यतमं पितृभक्त्या
श्रीमज्जमदग्निनन्दनं वन्दे ॥२॥

कृते जनिं स्वां लब्ध्वा
त्रेतायां विक्रमक्रमोद्दीप्तः ।
द्वापरकलियुगयोर्यो
महेन्द्रमासाद्य सद्गिरिं रेमे ॥३॥

शिवभक्त्याऽमितशक्त्या
येन धराऽऽन्दोलिताऽघभारनता।
प्रतता दिक्षु सुकीर्त्ति-
र्भगवाञ्जयतीह परशुरामहरिः॥४॥

मघवा वज्रेण यथा
पक्षच्छेदं चकार गोत्राणाम् ।
दुर्वृत्तोच्छेदमसौ
कृतवान् क्रुद्धः परश्वधेन तथा ॥५॥

सहस्रबाहुं दृप्तं
धेनुहरं धन्विनं प्रसह्य रणे।
हत्वा जित्वा, भूमि-
र्दत्ता विप्रेभ्य एत्य येन पुरा ॥६॥

धनुरसिरिषुर्निषङ्गः
धृताः कुठारेण सार्द्धममुनैव ।
लोकान्प्रशिक्षमाणो-
'विप्रो नैवास्ति निर्बलो दीनः'॥७॥

उपकृत्य रामकृष्णौ
कल्क्यवतारेऽपि तद्गुरुर्भूत्वा ।
शश्वद्विराजमानो
जगति जयत्वेष भार्गवः श्रीमान्॥८॥

विन्ध्येश्वरीप्रसादमिश्रो
विनयः

विक्रमाब्दः २०८१,          (प्रो० विन्ध्येश्वरीप्रसादमिश्रो 'विनयः')
श्रीपरशुरामजयन्ती अक्षयतृतीया
शुक्रवासरः

**प्रो० विन्ध्येश्वरीप्रसादमिश्रो 'विनयः'**
**वरिष्ठाचार्यः**
**पूर्वसङ्कायप्रमुखः**
काशीहिन्दूविश्वविद्यालयस्थः,
वाराणस्याम्-२२१००५

**आत्मप्रदीपः**
३८७, काशीपुरम्-कालोनी
ग्रामः - सीरगोवर्धनपुरम्
पो. ऑ. -डाफी, वाराणसी
पिनकोड- २२१०११ (उ.प्र.)
मो. ९९३६०३८३८३
ई.मेल- Profvpmvina@gmail.com

---

दिनाङ्कः २५.१२.२०२३

॥ श्रीहरिः ॥

## 卐 शुभभणितिः 卐

**विप्रः शुभ्रकुलोद्भवो हरिहरश्रद्धासमृद्धः सुधीः**
**श्रीमन्नन्दकुमारमिश्रतनयो विन्ध्याटवीमण्डनः ।**
**देहल्यां प्रथितेऽत्र बोधवलये श्रीविश्वविद्यालये**
**देवेन्द्रो वरवैदिको विजयतां मित्रं समेषामसौ ॥१॥**

**जनिदिवसस्ते विद्वन्!**
**भूयाद् भद्राय भूतये च सदा।**
**आस्माकीना भवते**
**विलसन्त्वेताः शुभाशिषो भव्याः ॥२॥**

आचार्य विन्ध्येश्वरीप्रसादमिश्रो 'विनयः'

(आचार्य्यविन्ध्येश्वरीप्रसादमिश्रो 'विनयः')

आचार्यो जयकान्तसिंहशर्मा
आचार्यो व्याकरणविभागे,
वेदवेदाङ्गपीठाध्यक्षः

श्रीलालबहादुरशास्त्रीराष्ट्रियसंस्कृत-
विश्वविद्यालयः (केन्द्रीयविश्वविद्यालयः)
बी-४ कुतुबसंस्थानिकक्षेत्रम्, नवदेहली-१६
मो. ९८१८७५५४२२

दिनाङ्कः १०.०५.२०२४

श्रीजानकीजानिर्जयति

## ॥ श्रीरामनीराजनाष्टकम्॥

ब्राह्मणं भगवन्तन्तं नुमोऽद्यापि यदोजसा ।
भीषयत्युद्धतक्षत्रानरक्तोऽप्यर्धचन्द्रमाः ॥ १ ॥

भालं यस्य लसत्त्रिपुण्ड्रविमलं गौरं वपुः शम्भुतां
चापं रक्षणदक्षता भृगुपतेराह स्वयं विष्णुताम् ।
रौद्रो रम्य इति द्वयं प्रविलसत्तन्निग्रहानुग्रहौ
अग्नीषोममयं महो भगवति श्रीरेणुकानन्दने ॥ २ ॥

आज्ञापालनगौरवात्करुणया तेषां पुनर्जीवनान्
मातुर्भ्रातृगणस्य चापि हननान्नायं प्रभुर्निर्घृणः ।
अम्बाधिक्यमिहाप्रवृत्तमभवन्मात्राऽनिषेधात्तदा
सिद्धेरुन्नयनात्पितुश्च भजते रामोऽनवद्यं यशः॥ ३ ॥

श्रीमद्दत्तवरोर्जितेन चरितं ब्रह्मावमानं बलाद्
भूभारेण च कामधेनुहरणं व्यापादनं ब्रह्मणाम् ।
ज्ञात्वा बाहुसहस्रपापगुरुतामुच्छेत्तुमात्ताकृतिं
विष्णवावेशमशेषहैहयकुलध्वंसं श्रये भार्गवम् ॥ ४ ॥

ते जाताः प्रथिताः समेऽप्यतिरथा यत्पादसंसेवया
जीवन्तीह यदीयया करुणया पादाश्रयाः क्षत्रियाः ।
इष्ट्वा कश्यपसाद् विधाय पृथिवीं यातो महेन्द्राचलं
सोऽयं राम इति प्रथां प्रथयति पारश्वधेनार्चिषा ॥ ५ ॥

भग्नं शैवधनुर्निशम्य भगवानागम्य रामो नतं
सौशील्यादिगुणोज्ज्वलं रघुवरं विज्ञाय तं तत्त्वतः ।
सन्तुष्यन् विनयादिना रघुपतौ चापात्मना स्वाशिषा
स्वस्कन्धस्थितधर्मरक्षणभरं प्रत्यार्पयत् पूजितः ॥ ६ ॥

भक्तानां विरहं न जातु सहते प्रीत्या भृगूणां पति-
र्नित्यं पूजनकीर्तनादिविधिना जीवन्तु तज्जीवनाः ।
इत्येवं दययेह धाम्नि वसति श्रीसोहनागाभिधे
दिष्ट्या स्वाश्रितवाञ्छितं सफलयन् प्रेम्णा समभ्यर्चितः॥७॥

स्तोतुं धाम च तं बुधेषु परमः प्रावर्तत प्रज्ञया
व्याख्यानं निपुणं सुविज्ञवरकेदारनाथद्विवेदी ।
तत्कृत्यं गुरुयोगतो विशदयत्याम्नायविद्याचणो
रामं पुष्पसमैः समर्चति पदैर्देवेन्द्रमिश्रः सुधीः ॥८॥

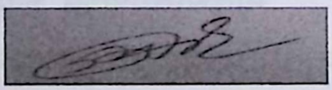

विक्रमाब्दः २०८१, (आचार्यो जयकान्तसिंहशर्मा)
श्रीपरशुरामजयन्ती अक्षयतृतीया
शुक्रवासरः

**प्रो. श्रीनिवास वरखेड़ी**
कुलपतिः
**केन्द्रीयसंस्कृतविश्वविद्यालयः**
संसदः अधिनियमेन स्थापितः
(प्राक्तनं राष्ट्रियसंस्कृतसंस्थानम्,
भारतसर्वकारस्य शिक्षामन्त्रालयाधीनम्)

**Prof. Shrinivasa Varakhedi**
Vice-Chancellor
**Central Sanskrit University**
Established by an Act of Parliament
(Formerly Rashtriya Sanskrit Sansthan
Under Ministry of Education, Govt of India)


के. सं. वि. / कुलपतिः/१०१/२०२४-२४/७० दिनाङ्कः १८/७/२०२४

## ॥ शुभानुध्यानम् ॥

अद्भुतकर्मा भगवान् विष्णु के सभी अवतार शाश्वत सुख के समुद्र हैं। जीवों का उद्धार करने के लिये भगवान् श्रीहरि अवतार लेकर लीलाओं का विस्तार करते हैं। सभी अवतार नित्य एवं पूर्ण हैं। चौबीस अवतारों के नाम, रूप, लीला आदि का निरूपण तथा विशेष ज्ञान एवं वैराग्य का वर्णन पुराणों का प्रधान उद्देश्य है। श्रीमद्भागवत में श्रीशुकदेवजी महाराज परीक्षित जी से कहते हैं- राजन् ! संसार में बड़े-बड़े प्रतापी और महान् पुरुष हुए हैं। वे लोकों में अपने यश का विस्तार करके यहाँ से-चल बसे। मैंने तुम्हें ज्ञान और वैराग्य का उपदेश करने के लिये ही उनकी कथा सुनायी है। यह सब वाणी का विलास मात्र है इसमें पारमार्थिक सत्य कुछ भी नहीं है-

**कथा इमास्ते कथिता महीयसां**
**विताय लोकेषु यशः परेयुषाम् ।**

**विज्ञानवैराग्यविवक्षया विभो**
**वचोविभूतीर्न तु पारमार्थ्यम् ॥**
(श्रीमद्भागवत १२/३/१४)

शरणागतभक्तवत्सल भगवान् श्रीविष्णु के मीन, वराह, कच्छप, नरसिंह, वामन, परशुराम, राम, कृष्ण, बुद्ध, कल्कि, व्यास, पृथु, हरि, हंस, मन्वन्तर, यज्ञ, ऋषभ, हयग्रीव, ध्रुववरदायी तथा गजेन्द्ररक्षक श्रीहरि, धन्वन्तरि, नर-नारायण, दत्तात्रेय, कपिलदेव और सनक-सनन्दन-सनातन-सनत्कुमार पर्यन्त सभी चौबीस अवतारों के लोकोत्तर शौर्य एवं सौन्दर्य के प्रति पुराणों की महती श्रद्धा है। समस्त देवताओं के स्वामी सनातन अविनाशी पुरुष परमात्मा विष्णु का जमदग्निनन्दन परशुराम के रूप में अवतार हुआ।

पवित्रकीर्ति सर्वान्तरात्मा श्रीपरशुराम ने **अश्वमेधयज्ञ** का अनुष्ठान किया उस अश्वमेधयज्ञ में भृगुनन्दन परशुराम ने प्रसन्न होकर मरीचिकुमार महर्षि कश्यप को दक्षिणा रूप में यह सारी पृथ्वी दान दे दी थी -

**तस्मिन् यज्ञे महादाने दक्षिणां भृगुनन्दन ।**
**मरीचाय ददौ प्रीतः कश्यपाय वसुंधराम् ॥**
(हरिवंशपुराण, हरिवंशपर्व ४१/११७)

भगवान् श्रीपरशुराम का गुणानुवाद समस्त अमङ्गलो का नाश करने वाला है। इसलिए भृगुनन्दन श्रीपरशुराम एवं उनका उत्कर्ष, ऐश्वर्य ही विद्वान् भक्तों द्वारा उपासनीय है। तभी मानव-जीवन में सदाचार, दया, धर्म और परोपकार जैसे प्रशंसनीय दैवी गुणों की प्राप्ति सम्भव है। विद्वानों की परीक्षाभूमि **श्रीमद्भागवत** समस्त ज्ञान-विज्ञान की निधि **महाभारत** और **अष्टादशपुराणों** में श्रीहरि के अवतार भगवान् परशुराम की महत्ता को भगवान्

वेदव्यास ने यत्र-तत्र प्रतिपादित किया है।

विवेच्य ग्रन्थ में भगवान् श्री परशुराम के परम मधुर चरित्र का परिशीलन किया गया है। भगवान् श्रीपरशुराम की कृपा से उनके यशोगान का यह पावनतम कार्य ग्रन्थकर्ता महामहोपाध्याय **श्रीकेदारनाथ द्विवेदी** 'वेदाचार्य' (पूर्व वेदविभागाध्यक्ष, शासकीय संस्कृत महाविद्यालय, भितरी, जिला-सीधी, मध्य-प्रदेश) और-ग्रन्थ-सम्पादक **प्रो. देवेन्द्र प्रसाद मिश्र** (आचार्य एवं अध्यक्ष, वेद-विभाग, श्रीलाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय, नई दिल्ली) के पुरुषार्थों के सम्पादन में सहायक सिद्ध होगा तथा विद्वज्जगत् में यथेष्ट कीर्ति प्राप्त करेगा और विद्यानुरागी पाठकों को लाभान्वित करेगा। भक्तों के काम पूरक भगवान् से मेरी प्रार्थना है -

**असदविषयमङ्घ्रिं भावगम्यं प्रपन्ना-**
**नमृतममरवर्यानाशयत् सिन्धुमध्यम् ।**
**कपटयुवतिवेषो मोहयन्यः सुरारीं-**
**स्तमहमुपसृतानां कामपूरं नतोऽस्मि ॥**

(श्रीमद्‌भागवत ८/१२/४७)

विक्रमाब्द २०८१, **(प्रो. श्रीनिवास वरखेड़ी)**

आषाढ़शुक्लपक्ष, वासुदेव द्वादशी

गुरुवार

प्रो० बिहारी लाल शर्मा
कुलपति
सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय,
वाराणसी-२२१००२

Prof. Bihari Lal Sharma
Vice Chancellor
Sampurnand Sanskrit university,
Varanasi-221002

सं.सं.वि./कुलपति/2024/ Q

दिनाङ्क 07.07.2024

# कामधुग्वाक्

भगवान् श्रीपरशुराम ऋषि-प्रणीत शास्त्र-मर्यादा के संरक्षक हैं। शरणागतरक्षक प्रतापी जमदग्निकुमार श्रीपरशुराम जी ने सम्पूर्ण पृथ्वी को जीतने के पश्चात् महर्षि कश्यप को दान करके देवताओं के लिये भी वाञ्छनीय और दुस्त्यज राज्यलक्ष्मी को छोड़कर वन में जाकर महेन्द्रपर्वत पर आश्रम बनाकर रहते हैं-

**स त्वं धर्मपरो भूत्वा कश्यपाय वसुंधराम् ।**
**दत्त्वा वनमुपागम्य महेन्द्रकृतकेतनः ॥**

(श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण १/७५/८)

स्वाध्याय और व्रत से शोभा पाने वाले महर्षि भृगु के कुल में उत्पन्न महान् तपस्वी ब्रह्मज्ञानी श्रीपरशुरामजी सारी पृथ्वी पर अधिकार करके लोक कल्याण के लिये यज्ञ किये और उस यज्ञ के सम्पन्न होने पर पुण्यकर्मा महात्मा कश्यप को दक्षिणा के रूप से सारी पृथ्वी दे दिये तथा स्वयं महेन्द्र-पर्वत पर रहने लगे-

**पृथिवीं चाखिलां प्राप्य कश्यपाय महात्मने ।**
**यज्ञस्यान्तेऽददौ राम दक्षिणां पुण्यकर्मणे ॥**
**दत्त्वा महेन्द्रनिलयस्तपोबलसमन्वितः ।**
**श्रुत्वा तु धनुषो भेदं ततोऽहं द्रुतमागतः ॥**

(श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण १/७५/२५-२६)

एक बार श्रीपरशुराम जी अपने भाईयों के साथ आश्रम से बाहर वन की ओर गए हुए थे । उसी समय वैर साधने के लिए सहस्रबाहु के लड़के आश्रम में आ गए। उस समय महर्षि जमदग्नि अग्निशाला में बैठे हुए थे और अपनी समस्त वृत्तियों से पवित्रकीर्ति भगवान् के ही चिन्तन में मग्न हो रहे थे। उन्हें बाहर की कोई सुध न थी। उसी समय उन पापियों ने जमदग्नि ऋषि को मार डाला। उन्होंने पहले से ही ऐसा पापपूर्ण निश्चय कर रखा था-

**एकदाऽऽश्रमतो रामे सभ्रातरि वनं गते ।**
**वैरं सिसाधयिषवो लब्धछिद्रा उपागमन् ॥**
**दृष्ट्वाग्न्यगार आसीनमावेशितधियं मुनिम् ।**
**भगवत्युत्तमश्लोके जघ्नुस्ते पापनिश्चयाः ॥**

(श्रीमद्भागवत-९/१६/१०-११)

परशुरामजी ने अपने पिताजी का सिर लाकर उनके धड़ से जोड़ दिया और यज्ञों द्वारा सर्वदेवमय आत्मस्वरूप भगवान् का यजन किया। यज्ञों में उन्होंने पूर्व दिशा होता को, दक्षिण दिशा ब्रह्मा को, पश्चिम दिशा अध्वर्यु को और उत्तर दिशा सामगान करने वाले उद्‌गाता को दे दी। इसी प्रकार अग्निकोण आदि विदिशाएँ ऋत्विजों को दीं, कश्यपजी को मध्यभूमि दी, उपद्रष्टा को आर्यावर्त दिया तथा दूसरे सदस्यों को अन्यान्य दिशाएँ प्रदान कर दीं । इसके बाद यज्ञान्त-स्नान करके वे समस्त पापों से मुक्त हो गये और ब्रह्मनदी सरस्वती के तट पर मेघ-रहित सूर्य के समान शोभायमान हुए -

**पितुः कायेन सन्धाय शिर आदाय बर्हिषि ।**
**सर्वदेवमयं देवमात्मानमयजन्मखैः ॥**
**ददौ प्राचीं दिशं होत्रे ब्रह्मणे दक्षिणां दिशम् ।**

**अध्वर्यवे प्रतीचीं वै उद्गात्रे उत्तरां दिशम् ॥**
**अन्येभ्योऽवान्तरदिशः कश्यपाय च मध्यतः ।**
**आर्यावर्तमुपद्रष्ट्रे सदस्येभ्यस्ततः परम् ॥**
**ततश्चावभृथस्नानविधूताशेषकिल्बिषः ।**
**सरस्वत्यां ब्रह्मनद्यां रेजे व्यभ्र इवांशुमान् ॥**

(श्रीमद्भागवत-९/१६/२०-२३)

रेणुकानन्दन श्रीपरशुराम जी तपोबल से अनुपम पुण्यलोकों को प्राप्त किये-**लोकास्त्वप्रतिमा राम निर्जितास्तपसा मया** (श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण 1/76/16) तथा शाश्वत सनातन आद्यधर्म की उन्होंने रक्षा की। इसीलिये अखिलब्रह्माण्डनायक अनुग्रहविग्रह त्रिभुवनविमोहन मर्यादापुरुषोत्तम लोकाभिराम भगवान् श्रीराम जी ने भी जमदग्नितनय श्रीपरशुराम जी का पूजन किया- **रामं दाशरथिं रामो जामदग्न्यः प्रपूजितः ।** (श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण १/७६/२४)

भारतीय जनजीवन में श्रीपरशुरामजी अजरामर-रूप में प्रतिष्ठित हैं। आज भी सनातन आद्यधर्मावलम्बी-जन वर्षगाँठ के अवसर पर तथा ब्रह्ममुहूर्त में प्रातःकाल सप्त-चिरंजीवियों का स्मरण करते हैं, उनमें श्रीपरशुराम जी का अन्यतम स्थान है -

**अश्वत्थामा बलिर्व्यासो हनूमांश्च विभीषणः ।**
**कृपः परशुरामश्च सप्तैते चिरजीविनः ॥**

(पद्मपुराण ५१/७)

भगवान् परशुराम की स्थिति त्रेतायुग में थी, द्वापर में भी थी और आज भी वे नारायणभूत अनन्त- रूप में विद्यमान हैं। भगवान् श्रीपरशुराम जी ने मनुष्यमात्र के सार्वकालिक कल्याण के लिये **श्रीपरशुरामकल्पसूत्रम्** ग्रन्थरत्न का प्रणयन किया ।

अत्रिकुलोद्भव महर्षि दुर्वासा और विप्रवंश के राजा चन्द्रमा श्रीविद्या – सम्प्रदाय के प्रवर्तक आचार्य हैं। भृगुनन्दन श्रीपरशुराम आगमशास्त्र की गुरुपरम्परा तथा श्रीविद्या- सम्प्रदाय के परमाचार्य हैं। श्री परशुराम जी ने अपनी तपस्या से आशुतोष भगवान् शिव एवं कामेश्वराङ्कनिलया राजराजेश्वरी महात्रिपुरसुन्दरी को प्रसन्न किये थे। वे परम अनुशासन प्रिय गुरु तथा परम अनुशासित शिष्य हैं। उन्होंने देवव्रत भीष्म एवं अङ्गराज कर्ण को अनुशासन-विरुद्ध देखकर दण्डित किया था और परम अनुशासित-शिष्य-रूप में भगवान् श्रीदत्तात्रेय जी से वेदादि शास्त्रों का अध्ययन भी किया था।

लोकाभिराम श्रीराम जी द्वारा शिव-धनुषभंग के प्रसङ्ग में परशुराम जी का रोष आशुतोष भगवान् शिवजी की अनन्यतम भक्ति का द्योतक है। कविकुल- कैरवकलाप-कलाधर पूज्यपाद श्रीगोस्वामी जी महाराज ने इस रहस्य का वर्णन अपने श्रीमद्राम-चरितमानस में किया है। श्रीशिव जी के धनुषभंग-प्रसङ्ग में वे कहते हैं-

**तेहि अवसर सुनि सिव धनु भंगा। आयेउ भृगुकुल कमल पतंगा ॥**
**देखत भृगुपति बेषु कराला । उठे सकल भय बिकल भुआला ॥**
**पितु समेत कहि कहि निज नामा । लगे करन सब दंड प्रनामा ॥**
**सेवक सो जो करै सेवकाई । अरि करनी करि करिअ लराई ॥**
**सुनहु राम जेहि सिवधनु तोरा । सहसबाहु सम सो रिपु मोरा ॥**
**सो बिलगाउ बिहाइ समाजा। न त मारे जैहहिं सब राजा ॥**
**भुजबल भूमि भूप बिनु कीन्ही । बिपुल बार महिदेवन्ह दीन्ही ॥**
**सहसबाहु भुज छेदनिहारा । परसु बिलोकु महीप कुमारा ॥**
**परसुराम तब राम प्रति बोले उर अतिक्रोधु ।**
**संभु सरासन तोरि सठ करसि हमार प्रबोधु ॥**

(श्रीमद्रामचरितमानस बालकाण्ड)

शिवजी के दर्शनार्थ कैलाश-गमन प्रसङ्ग में श्रीपरशुराम जी ने भगवान् गणेश पर अपना अमोघ फरसा चला दिये थे और पिता के उस अमोघ अस्त्र को आते देखकर स्वयं श्रीगणेश जी ने उसे अपने बाएं दाँत से पकड़ लिया, जिससे अस्त्र व्यर्थ न हो। तत्पश्चात् श्रीपरशुराम जी का वह अमोघ फरसा श्रीगणेश जी के बाएं दाँत को काटकर पुनः श्रीपरशुराम के हाथ में लौट आया-

**पर्शुं क्षिपन्तं कुपितं रक्तपद्मदलेक्षणम् ।**
**गणेशो रोधयामास निवर्त्तस्वेन्युवाचतम् ॥**
**पुनर्गणेशं रामश्च प्रेरयामास कोपतः ।**
**पपात पुरतो वेगान्मानहीनो गजाननः ॥**

(ब्रह्मवैवर्त पुराण ४ गणपतिखण्ड ४३/६-७)

श्रीपरशुराम और श्रीगणेश जी का परस्पर विवाद दैववश हुआ। दैव बलवान होता है। दैव ने जो विधान सुनिश्चित कर दिये हैं, वे अवश्य होकर रहते हैं-

**अवश्यम्भाविभावास्ते भवन्ति देवनिर्मिताः ।**
**नात्र शोकस्तु कर्तव्यः पुरुषेण विजानता ॥**

(श्रीमद्देवीभागवत ६/१७/४०)

शास्त्रों में श्रीगणेशजी एकदन्त कहे गये हैं-

**गणेशमेकदन्तं च हेरम्बं विघ्ननाशकम् ।**
**लम्बोदरं शूर्पकर्णं गजवक्त्रं गुहाग्रजम् ॥**

(ब्रह्मवैवर्तपुराण ३/४४/८६)

भगवान् श्रीपरशुरामजी मातृ-पितृ भक्त तथा परम कारुणिक थे। श्रीपरशुरामजी परम अध्यवसायी थे। वे अपने अध्यवसाय से ब्रह्मपुत्रनद को लौहित्यसर से निकाल कर समतल भाग में लाये और यज्ञपात्र स्रुव को फेंककर समुद्र को पीछे ढकेल दिये तथा

उस भूमि को निवास-योग्य बनाकर महात्माओं को दान दे दिये।

विवेच्य ग्रन्थ भगवान् परशुराम जी के पावन प्रेरणा का पुनीत परिणाम है। प्रस्तुत ग्रन्थ ग्रन्थकार महामहोपाध्याय पण्डित **श्रीकेदारनाथ द्विवेदी** 'वेदाचार्य' (वेदविभागाध्यक्षचर, शासकीय संस्कृत महाविद्यालय, भितरी, जिला-सीधी, मध्यप्रदेश) एवं ग्रन्थ के सम्पादक मेरे अनुजकल्प विद्यावाचस्पति **प्रो. देवेन्द्र प्रसाद मिश्र** (आचार्य एवं अध्यक्ष, वेदविभाग, श्रीलाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय, नई दिल्ली) के वेदादि शास्त्रों के मन्थन का नवनीत है। इस ग्रन्थ में लेखक एवं सम्पादक का परिश्रममूलक अध्यवसाय तथा मौलिक चिंतन अभिनन्दनीय है। मुझे विश्वास है कि ग्रन्थकार की तपस्या-तरु का यह मधुर फल विद्यानुरागी- अनुसन्धाताओं तथा सहृदय पाठकों के लिये उपादेय होगा।

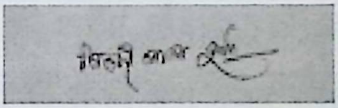

विक्रमाब्द २०८१                                    **(प्रो. बिहारी लाल शर्मा)**

आषाढ़ शुक्लपक्ष द्वितीया

रविवार, श्रीजगन्नाथ-रथयात्रा

**प्रो. हरेरामत्रिपाठी**
**कुलगुरुः**
कविकुलगुरुकालिदास-
संस्कृतविश्वविद्यालयः,
रामटेकम्, महाराष्ट्रम्-४४११०६

**Prof. Hareram Tripathi**
**Vice-Chancellor**
Kavikulguru Kalidas Sanskrit
University
Ramtek Maharashtra-441106

पत्र क्र. क.का.सं.वि./व्हीसीओ/2024/172 दिनाङ्कः 18/07/2024

## ॥ शुभाभिमतिः ॥

भृगुवंश-परम्परा में धर्म-पालन एवं भारतीय संस्कृति की रक्षा तथा सनातन आर्य-मर्यादा का पोषण और मानवोचित सद्गुणों को धारण करने वाले अनेक ऋषि-मुनि उत्पन्न हुए। वत्स, मार्कण्डेय, च्यवन, दधीचि, आप्नवान, ऋचीक, जमदग्नि, शौनक, वाल्मीकि, पाणिनि आदि अनेक सत्पुरुषों के पावन चरित्र जन्म से लेकर अन्त तक विशुद्ध और पवित्र रहे हैं। ऐसे पवित्र वंश में समय पाकर ऋचीक और सत्यवती के जमदग्नि हुए। भृगुवंशी ऋचीक और सत्यवती की देवाराधना के प्रभाव से रुद्र और विष्णु के अंशभूत वैष्णव चरु के अंश से तपस्यापरायण जितेन्द्रिय, शान्त- स्वभाव जमदग्नि मुनिका जन्म हुआ -

**भृगोश्चरुविपर्यासे रौद्र वैष्णवयोः पुरा ।**
**यजनाद् वैष्णवेऽथांशे जमदग्निरजायत ॥**

(श्रीहरिवंशपुराण, हरिवंशपर्व २७/३६)

सत्यवती सत्यधर्म में तत्पर रहनेवाली पुण्यात्मा स्त्री थीं। कालान्तर में यही कौशिकी नाम से विख्यात महानदी हुईं। इक्ष्वाकुवंश में रेणु नामवाले एक प्रतापी नरेश थे। उनकी कन्या महाभागा रेणुका

थी। रेणुपुत्री रेणुका के गर्भ से एवं ऋचीकपुत्र जमदग्नि ने परशुराम जी को प्रकट किया, जो समस्त विद्याओं में पारङ्गत, धनुर्वेद में प्रवीण तथा प्रज्वलित अग्नि के समान तेजस्वी थे-

**सा हि सत्यवती पुण्या सत्यधर्मपरायणा ।**
**कौशिकीति समाख्याता प्रवृत्तेयं महानदी ॥**
**इक्ष्वाकुवंशप्रभवो रेणुर्नाम नराधिपः ।**
**तस्य कन्या महाभागा कामली नाम रेणुका ॥**
**रेणुकायां तु कामल्यां तपोविद्यासमन्वितः ।**
**आर्चीको जनयामास जामदग्न्यं सदारुणम् ॥**
**सर्वविद्यानुगं श्रेष्ठं धनुर्वेदस्य पारगम् ।**
**रामं क्षत्रियहन्तारं प्रदीप्तमिव पावकम् ॥**

(हरिवंशपुराण, हरिवंशपर्व २७/३७-४०)

परमात्मा श्रीहरि का रेणुकानन्दन परशुराम के रूप में अवतार हुआ। इस अवतार में भगवान् परशुराम ने सहस्रार्जुन का वध किया था। वरदायक एवं ज्ञाननिष्ठ भगवान् श्रीदत्तात्रेय के वरदान के प्रभाव से कार्तवीर्य अर्जुन की दो भुजाएँ युद्ध के समय एक हजार भुजाओं के रूप में परिणत हो जाती थीं-

**तेन हैहयराजस्य कार्तवीर्यस्य धीमतः ।**
**वरदेन वरोदत्तो दत्तात्रेयेण धीमता ॥**
**एतद् बाहुद्वयं यत्ते मृधे मम कृतेऽनघ ।**
**शतानि दश बाहूनां भविष्यन्ति न संशयः ॥**

(हरिवंशपुराण, हरिवंशपर्व ४१/१०८-१०९)

जमदग्निनन्दन परशुराम ने परशुरामावतार में समराङ्गण में शत्रुओं के लिये दुर्जय, सहस्र भुजाओं के कारण घमंड में भरे हुये राजा अर्जुन का वध किया था -

**भूयश्च जामदग्न्योऽयं प्रादुर्भावो महात्मनः ।**
**यत्र बाहुसहस्रेण विस्मितं दुर्जयं रणे ॥**
**रामोऽर्जुनमनीकस्थं जघान नृपतिं प्रभुः ॥**
(हरिवंशपुराण, हरिवंशपर्व ४१/११२)

उपासना की दृष्टि से भगवान् श्रीपरशुराम जी स्वयं उपास्य हैं। उन्होंने यज्ञ, व्रत, दान, तप और परोपकार में तत्पर रहते हुये **श्रीपरशुरामकल्पसूत्रम्** नामक ग्रन्थरत्न का प्रणयन भी किया है। श्रीपरशुराम जी ने अपने कल्पसूत्र रूपी परशु से तन्त्रक्षेत्र को दूषित करने वाले क्षत्रपों के ध्वंश और शास्त्रीय-साधनाव्यवस्था के स्थापना का महत् यशस्कर कार्य किया है। **श्रीतत्वानिधि** में पवित्रकीर्ति जमदग्निनन्दन श्रीपरशुराम जी का ध्यान सम्बन्धी श्लोक स्मरणीय है-

**परशुज्ज्वलहस्ताब्जो जटामण्डलमण्डितः ।**
**ददातुचिरञ्जीवित्वं प्रसन्नात्माभृगूद्वहः ॥**
(श्रीतत्वानिधिः, परशुरामध्यानम् १६९/१)

धनुषभंग प्रसङ्ग में मर्यादापुरुषोत्तम लोकाभिराम श्रीराम जी भृगुवंशमणि परशुराम जी से कहते हैं - हे नाथ! मेरा राममात्र छोटा-सा नाम और कहाँ आपका परशु के सहित बड़ा नाम है। हमारा तो एक ही गुण धनुष है और आपके परम पवित्र शम, दम, तप, शौच, क्षमा, सरलता, ज्ञान, विज्ञान और आस्तिकता सहित नौ गुण हैं-

**राम मात्र लघु नाम हमारा । परसु सहित बड़नाम तोहारा ॥**
**देव एकु गुनु धनुष हमारें । नव गुन परम पुनीत तुम्हारे ॥**
(श्रीमद्रामचरितमानस, बालकाण्ड)

विवेच्यग्रन्थ **भगवान् परशुराम एवं सोहनाग धाम** में ग्रन्थकार– महामहोपाध्याय **श्रीकेदारनाथ द्विवेदी** 'वेदाचार्य' (ग्राम धनौतीराय, पत्रालय–पिपरारामधर, जिला– देवरिया, उतरप्रदेश) और ग्रन्थ के सम्पादक **प्रो. देवेन्द्र प्रसाद मिश्र** (आचार्य एवं अध्यक्ष, वेद विभाग, श्रीलाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय, नई दिल्ली) ने बहुत श्रम किया है, जिनकी प्रौढ़ अभिव्यक्ति वर्तमान ग्रन्थ है। यह ग्रन्थ अद्भुतकर्मा भगवान् विष्णु के अवतार श्रीपरशुराम जी की पवित्रकीर्ति को उपस्थापित करने वाला है। मुझे विश्वास है कि यह ग्रन्थ विद्वज्जगत् में यथेष्ट कीर्ति प्राप्त करेगा और विद्यानुरागी पाठकों को लाभान्वित करेगा।

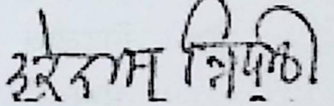

विक्रमाब्द २०८१, **( प्रो. हरेराम त्रिपाठी )**

आषाढ़शुक्लपक्ष, वासुदेव द्वादशी

गुरुवार

आचार्यो हनुमानप्रसादत्रिपाठी ( चित्रकूटीयः )
साहित्याचार्यचरः
शास. संस्कृतमहाविद्यालयः, भितरी,
जिला-सीधी मध्यप्रदेशः 486775

आवास-सङ्केतः
ग्रामः-पो.ऑ.-चौबेपुरम्
चित्रकूट, जिला-सतना
(मध्यप्रदेशः) 210204

---

## 卐 श्रीकेदारनाथद्विवेदी-नामाक्षरमाला 卐

**श्रीं** श्रीं श्रिया वापि सुजुष्टमेवं
सरस्वती वाचि सुशोभते सा ।
द्वेषं निहत्यैव निसर्गसर्गं
परस्परं तद् स्पृहणीयमेतद् ॥ १ ॥

**के**दारनाथं श्रुतिशास्त्रविज्ञं
प्रसूनमालामणिमञ्जुलास्यम् ।
अध्यापनारागविरागमूर्तिं
त्रिकालसन्ध्याभगवत्प्रपन्नम् ॥ २ ॥

**दा**नेन मानेन विराजमानं
सदासदाचारविचारवन्द्यम् ।
परोपकारे परमार्थमार्गे सताञ्च
सङ्गे रचनानुरूपम् ॥ 3 ॥

**र**तिस्तु सर्वेषु समानमाना
विद्वद्वरेण्यं वचसां प्रयोगे ।
माधुर्यमेवं कथनेन किं किं
वन्दे च नित्यं बुधवृन्दरत्नम् ॥ ४ ॥

नानापुराणेषु विशिष्टवेशं
सभासु सम्भाषणनीरदाम्भः ।
सर्वत्र विद्याविभवैर्वरिष्ठं
विभाति वाणी सुतरागमूर्तिस्-

थले प्रशंसा त्वनुभूतिरेषा
तदारवृत्त्या चरितं पवित्रम् ।
प्रसन्नमुद्रामुदितान्तरङ्गं
स्वभावसारल्यसुसौम्यचित्तम् ॥५॥

द्विवेदिवंशे गगनेन्दुरश्मिं
सर्वागमज्ञानविलासलीलम् ।
कर्तव्यनिष्ठः परिपूर्णपात्रं
निरीक्षणादेव भृशं प्रमोदः ॥६॥

वेदस्वरध्यानविधानवेला
मन्त्रोद्गमे वै सुमनोऽभिरामा ।
निलिम्पभाषाऽपि विदेशभाषा
विराजते भारतभारतीयम् ॥७॥

दीक्षासुयज्ञादिविधौ वितानं
सन्दृश्यते सत्यमतीव रम्या ।
नमामि ते चारुपदारविन्दं
समस्तवैशिष्ठ्यभृतं भवन्तम् ॥८॥

जीवन्तु जगतीपृष्ठे विमलाम्बरधारणाः ।
वेदविद्यां वितन्वन्तु सुचिरं कामये त्वहम् ॥९॥

वहतु ते हृदये च पयस्वनी
सुरसरिद् यमुना च सरस्वती ।
जनकजापतिपङ्कजयुग्मके
विलसतादतिभक्तिरहोऽनिशम् ॥१०॥

शतंसमाः प्रियजीवनकारिणी
शिवकृपा ललिता कलिताम्बरा ।
भवता भवतात्तु समलङ्कृता
विमलभारतवर्षवसुन्धरा ॥११॥

अम्बिकासुप्रसादेन देवेन्द्रदिग्
स्वाङ्गनासुश्रिया कम्रकीर्त्या धिया ।
बन्धुभिश्चात्मजैस्संयुतश्शाश्वतं
यातु तूत्कर्षशैलं शतं वा समाः ॥१२॥

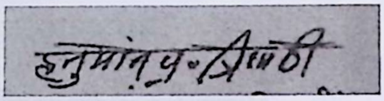

नवदेहली, **भावत्कः**
विक्रम-संवत् 2073 आचार्यहनुमानप्रसादत्रिपाठी (चित्रकूटीयः)
आश्विनशुक्लाष्टम्याम् ॥ साहित्याचार्यचरः
शास. संस्कृतमहाविद्यालयः, भितरी,
जिला-सीधी मध्यप्रदेशः 486775

**प्रो. भारतभूषण मिश्र**
निदेशक
केन्द्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय
क.जे.सोमैया परिसर, विद्याविहार, मुम्बई-७७

दिनाङ्क ०३ मई २०२२

## ॥ शुभाभिशंसा ॥

भगवान् श्रीविष्णु के अवतारों में श्रीनारायण के अतिरिक्त मात्र श्रीपरशुरामजी ही अनादिनिधना भगवती श्रुति के मन्त्र-द्रष्टा ऋषि हैं। आशुतोष भगवान् श्रीशिव जमदग्निकुमार श्रीपरशुरामजी के गुरु हैं। श्रीपरशुरामजी की तपस्या से प्रसन्न होकर आशुतोष भगवान् श्रीशिव जी ने सम्पूर्ण शैव अस्त्र-शस्त्रों का उपदेश श्रीपरशुरामजी को दिया -

**दास्ये चाभि मतं सर्वं भवतेऽहं त्वया वृतम् ।**
**भक्तो हि मे त्वमत्यर्थं नात्र कार्या विचारणा ॥**
**इत्युक्तस्तेन देवेशः सितं कालाग्निसमप्रभम् ।**
**शैवमस्त्रमयं तेजो ददौ तस्मै महात्मने ॥**

(ब्रह्माण्डमहापुराण २/२४/३४ एवं ७३)

आशुतोष भगवान् श्रीशिवजी से वरदान प्राप्त कर श्रीपरशुरामजी ने युद्धभूमि में हैहयवंशीय आततायी-क्षत्रियों का उनके मित्रों सहित संहार कर दिया। तदनन्तर अपने शिष्य अकृतवर्ण के साथ देवनदी नर्मदा में स्नान कर तर्पणादि दैनिक यज्ञ किया-

**रामोऽपि हत्वा नृपचक्रमाजौ राज्ञः सहायार्थमुपागतञ्च ।**
**समन्वितोऽसावकृतव्रणेन सस्नौमुदागत्य च नर्मदायाम् ॥**

(ब्रह्माण्डमहापुराण २/४१/१५)

भृगुवंश में विश्वात्मा भगवान् श्रीहरि ने अवतार धारण कर बहुत से आततायी राजाओं को मारकर पीडित पृथिवी के भार को दूर किया–

**एवं भृगुषु विश्वात्मा भगवान् हरिरीश्वरः ।**
**अवतीर्य परं भारं भुवोऽहन् बहुशो नृपान् ॥**

(श्रीमद्भागवत ९/१६/२७)

जामदग्न्य श्रीपरशुराम जी ने पृथिवी को चोरों से रहित करके साधु–जनों की रक्षा करते हुये अश्वमेध यज्ञ में यज्ञाचार्य पुण्यकर्मा कश्यप जी को सम्पूर्ण पृथ्वी दान में दे दिया–

**निर्दस्युं पृथिवीं कृत्वा शिष्टेष्टजनसंकुलाम् ।**
**कश्यपाय ददौ रामो हयमेधे महामखे ॥**

(महाभारत ४/७०/१९)

**भगवान् श्रीपरशुराम एवं सोहनाग धाम** नामक ग्रन्थ रत्न के लेखक महामहोपाध्याय **श्रीकेदारनाथ द्विवेदी** 'वेदाचार्य' (पूर्व वेदविभागाध्यक्ष, शासकीय संस्कृत महाविद्यालय, भितरी, जिला सीधी, मध्यप्रदेश, मूल निवासी–ग्राम–धनौतीराय, पत्रालय–पिपरारामधर, जिला–देवरिया, उत्तरप्रदेश) एवं ग्रन्थ के सम्पादक विद्यावाचस्पति **प्रो. देवेन्द्र प्रसाद मिश्र** जी वेदादि शास्त्रों के विशेषज्ञ हैं, इनका विवेचन सर्वथा प्रामाणिक है। मुझे विश्वास है कि इनका यह ग्रन्थ विद्वानों में समादृत होगा। मैं लेखक एवं सम्पादक को इस कृति के लिए बधाई देता हूँ और उनका अभिनन्दन करता हूँ।

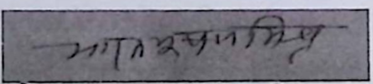

**(प्रो. भारतभूषण मिश्र)**

मङ्गलवार, श्रीपरशुरामजयन्ती
विक्रमाब्द २०७९,
वैशाखशुक्लपक्ष अक्षयतृतीया

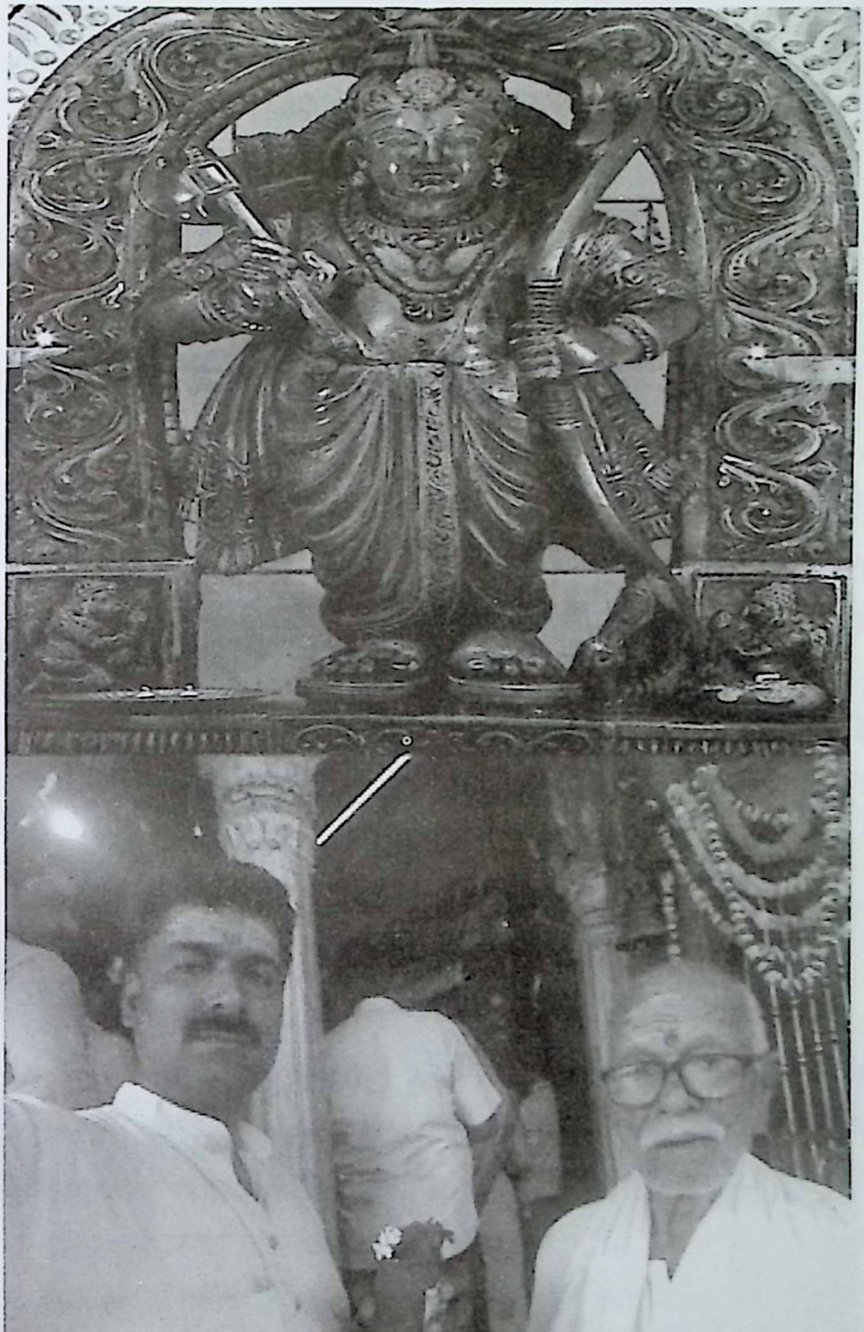

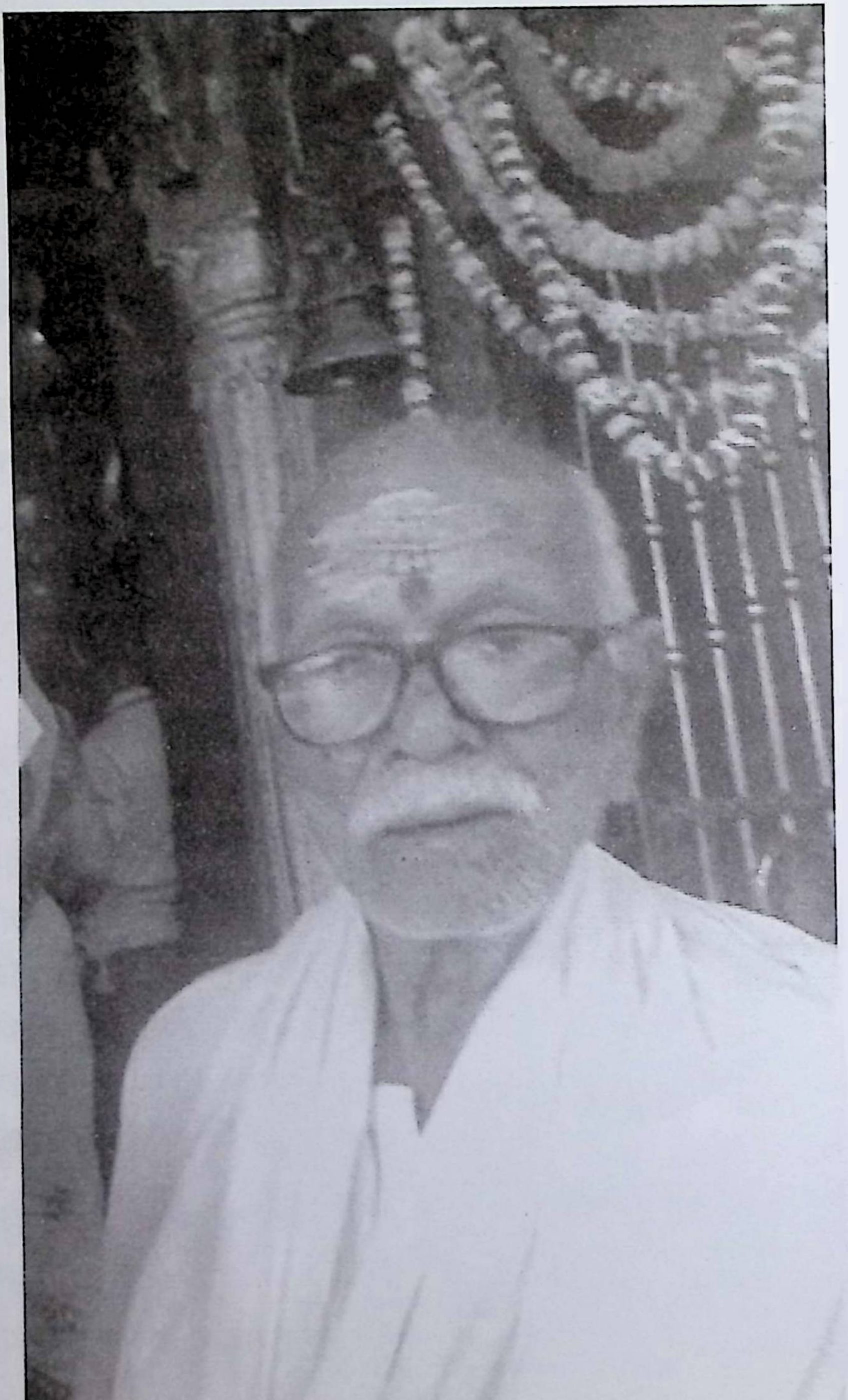

# भूमिका

**प्रो. देवेन्द्र प्रसाद मिश्र**
आचार्य एवं अध्यक्ष-वेदविभाग

संस्कृत और हिन्दी भाषा के महान् लेखक वेदाचार्य म.म. श्रीकेदारनाथ द्विवेदी जी द्वारा विरचित यह **'भगवान् श्रीपरशुराम एवं सोहनाग धाम'** नामक नवीन ग्रन्थ हिन्दीभाषानुरागी सहृदय विद्वद्वृन्दारकों की सेवा में प्रस्तुत किया जा रहा है। आदि कवि महामुनि श्रीवाल्मीकिजी के आदिकाव्य रामायण से लेकर निरन्तर प्रवाहित होती हुई सुरभारती की पावन कथासरिता अपने अमृतमय प्रवाह से आज भी सहृदयों के हृदय को अभिषिक्त कर रही है। हम महाकवि श्रीभवभूति जी के शब्दों में वाल्मीकि व्यास आदि प्राचीन कवियों के श्रीचरणों में प्रणाम करते हैं तथा परमात्मा की कला, उस नित्य वाग्देवता को प्रणाम करते हैं-

**इदं कविभ्यः पूर्वेभ्यो नमोवाकं प्रशास्महे ।**
**वन्देमहि च तां वाचममृतामात्मनः कलाम् ॥**

(उत्तररामचरितम् १/१)

समय की विषमता के कारण भगवत्-चरित लेखकों की परम्परा के विरल होने पर भी कुछ लेखक विद्यमान हैं, जिनकी अमृतमय भगवत्कथा-धारा गङ्गाधारा के समान निरन्तर प्रवाहित होती हुई समय की विषमता को न्यक्कृत करते हुए कथारस-पिपासु पाठकों के मनों को विशेष रूप से तृप्त करती है, ऐसे लेखकों में अग्रणी हैं धन्यनामा **महामहोपाध्याय श्रीकेदारनाथ द्विवेदी** 'वेदाचार्य'।

**१५ जनवरी सन् १९३४** ई. में **म.म. श्रीकेदारनाथ द्विवेदी जी** का जन्म उत्तर प्रदेश के देवरिया मण्डलान्तर्गत सलेमपुर जनपद में देवनदी सरयू के समीप ग्राम-धनौतीराय, पत्रालय-पिपरारामधर के साधारण ब्राह्मण परिवार में हुआ। पूर्वोपार्जित पुण्यराशि के प्रभाव से आपने धार्मिकशिरोमणि परोपकारप्रवण कर्मकाण्डप्रवीण धर्मशास्त्रधुरीण स्वनामधन्य ब्रह्मलीन **पण्डित श्रीरक्षा द्विवेदी** जी के पुत्रत्व को प्राप्त कर वंश को गौरवान्वित एवं विभूषित किया। दयामयी सौभाग्यवती माता **श्रीमती फूलपत्ती देवी** ने अपने पति के मूर्त्तिमन्त पुण्यपुञ्ज एवं स्वहृदयगत दयाभाव के अवतार के रूप में ही मानो अपने पुत्र को प्राप्त कर अत्यन्त धन्यता का अनुभव किया। **'प्रवर्त्तितो दीप इव प्रदीपात्'** इस युक्ति के अनुसार माता-पिता का पुण्यधन सहृदय एवं स्मृतिमान् यह पुत्र बाललीलाओं से कुल को आह्लादित करता हुआ **'केदारनाथ'** इस अन्वर्थ नाम को धारण करते हुए जनमानस में पूजित हुआ।

प्रारब्धजनित संस्कारों से विभूषित पुत्ररत्न को धर्मधन पिता ने भी वैदिक संस्कारों से संस्कारित किया, जिसके परिणामस्वरूप शीलवन्त जनों में कीर्तनीय एवं स्पृहणीयचरित बने इस बालक ने घर में रहते हुए ही **'श्रीपरशुराम चण्डिका वेद विद्यालय, सोहनाग'** से प्राथमिक एवं माध्यमिक अध्ययन पूर्ण किया।

चौदह विद्याएँ धर्म के स्थान हैं। अतः विप्र के लिए चतुर्दश विद्याओं का अध्ययन आवश्यक है। छः वेदाङ्ग-शिक्षा, कल्प, व्याकरण, निरुक्त, छन्द और ज्यौतिष। ये छः विद्यायें वेदों के अर्थ को जानने के लिये परमावश्यक हैं। वेदार्थ के उपबृंहण के लिए अठारह महापुराण एवं अठारह उपपुराण की एक विद्या में गणना की गई है। भारतीय षड्दर्शनों में न्याय तथा मीमांसा को दो विद्यायें,

धर्मशास्त्र (अठारह स्मृतियों को) ग्रन्थ को एक विद्या और चार वेद- ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद ये चार विद्यायें हैं। यथा-

**पुराणन्यायमीमांसाधर्मशास्त्राङ्गमिश्रिताः ।**
**वेदाः स्थानानि विद्यानां धर्मस्य च चतुर्दश ॥**

भगवती श्रुति के आदेश का परिपालन करते हुये पूज्य पिता **श्रीरक्षा द्विवेदीजी** ने अपने पुत्र **श्रीकेदारनाथ द्विवेदी** को कुलानुरूप संस्कृत विद्या एवं चौदह विद्याओं में वैदुष्य प्राप्त कराने के लिए ही **'श्रीपरशुराम चण्डिका वेद विद्यालय,** सोहनाग' में प्रविष्ट कराया।

**आधत्त पितरो गर्भं कुमारं पुष्करस्रजम्। यथेह पुरुषोऽसत्॥**
(शुक्लयजुर्वेद २/३३)

अर्थात् हे पितरों! इस कमल की माला धारण करने वाले कुमार को गर्भ के समान अपने संरक्षण में रखिये, जिससे यह उत्तम पुरुष बने। इस वेदवाणी को मानसपटल में रखते हुए पिता ने गुरुकुल में अध्ययन कराया।

पूज्य पिता जी की सत्प्रेरणा से उत्साहित पुत्र ने भी **'यः प्रीणयेत् सुचरितैः पितरं स पुत्रः'** इस ऋषिवाक् को चरितार्थ किया और बालक होते हुए भी प्रौढ़ के समान गम्भीरता से वेदादि शास्त्रों का अध्ययन किया। शिष्य के प्रतिभा से उत्साहित आचार्यों ने स्नेहपूर्वक इसे वेदादि शास्त्रों के गूढ़ रहस्यों का बोध कराया। ब्रह्मलीन प्रातःस्मरणीय गुरुवर **श्रीमान् कमलनाथ शुक्ल 'वेदधर्माचार्य'** के अमोघ आशीर्वाद तथा अन्य गुरुजनों, विप्रों के आशीर्वाद से **म.म.श्रीकेदारनाथ द्विवेदीजी** ने वेदादिशास्त्रों का मनोयोग से सफलतापूर्वक अध्ययन पूर्ण किया।

प्रस्तुत ग्रन्थ **'भगवान् श्रीपरशुराम एवं सोहनाग धाम'** में संस्कृत वाङ्मय में उपलब्ध साहित्य के आधार पर भगवान् श्रीपरशुराम के परम पवित्र यश का वर्णन किया गया है। मनुष्य जन्म का उद्देश्य भगवान् के नाम, लीला, गुण आदि का प्रतिपादन करना है। भगवान् श्रीवेदव्यास जी कहते हैं-

**मृषा गिरस्ता ह्यसतीरसत्कथा**
**न कथ्यते यद् भगवानधोक्षजः ।**
**तदेव सत्यं तदुहैव मङ्गलं**
**तदेव पुण्यं भगवद्गुणोदयम् ॥**

**तदेव रम्यं रुचिरं नवं नवं**
**तदेव शश्वन्मनसो महोत्सवम् ।**
**तदेव शोकार्णवशोषणं नृणां**
**यदुत्तमश्लोकयशोऽनुगीयते ॥**

(श्रीमद्भागवत १२/१२/४९-५०)

जिस वाणी के द्वारा घट-घटवासी अविनाशी भगवान् के नाम, लीला, गुण, धाम आदि का उच्चारण नहीं होता, वह वाणी भावपूर्ण होने पर भी निरर्थक है- सारहीन है, सुन्दर होने पर भी कुरूप है और उत्तमोत्तम विषयों का वर्णन करने वाली होने पर भी असत्कथा है। जो वाणी और वचन भगवान् के गुणों से परिपूर्ण रहते हैं, वे ही परम पावन हैं, वे ही मङ्गलमय हैं और वे ही परम सत्य हैं। जिन शब्दों के द्वारा भगवान् के परम पवित्र यश का गान होता है, वही परम रमणीय, रुचिकर एवं प्रतिक्षण नया-नया जान पड़ता है। उससे अनन्त काल तक मन को परमानन्द की अनुभूति होति रहती है। मनुष्यों का सम्पूर्ण शोक, चाहे वह समुद्र के समान लम्बा

और गहरा क्यों न हो, उस वचन के प्रभाव से सदा के लिए सूख जाता है–

**न तद् वचश्चित्रपदं हरेर्यशो**
**जगत्पवित्रं प्रगृणीत कर्हिचित् ।**
**तद् ध्वाङ्क्षतीर्थं न तु हंससेवितं**
**यत्राच्युतस्तत्र हि साधवोऽमलाः ॥**

(श्रीमद्भागवत १२/१२/५१)

जिस वाणी से चाहे वह रस, भाव, अलङ्कार आदि से युक्त ही क्यों न हो– जगत् को पवित्र करने वाले भगवान् के यश का कभी गान नहीं होता, वह तो कौवों के लिए उच्छिष्ट फेंकने के स्थान के समान अत्यन्त अपवित्र है, मानसरोवर निवासी हंस यद्वा ब्रह्मधाम में विहार करने वाले भगवच्चरणारविन्दाश्रित परमहंस भक्त उसका कभी सेवन नहीं करते। निर्मल हृदय वाले साधुजन तो वहीं निवास करते हैं जहाँ भगवान् रहते हैं।

भगवान् श्रीवेदव्यास जी के निर्देशानुसार श्रीविष्णु भगवान् एवं उनका उत्कर्ष, ऐश्वर्य ही विद्वानों, भक्तों द्वारा उपासनीय है। भगवत्कृपा का अवलम्ब लेकर जो व्यक्ति अपने आमुष्मिक कल्याण के लिए प्रवृत्त नहीं होता, ऐसे व्यक्ति को 'आत्महा' की संज्ञा दी गयी है–

**नृदेहमाद्यं सुलभं सुदुर्लभं**
**प्लवं सुकल्पं गुरुकर्णधारम् ।**
**मयाऽनुकूलेन नभस्वतेरितं**
**पुमान् भवाब्धिं न तरेत् स आत्महा ॥**

(श्रीमद्भागवत ११/२०/१७)

यह मनुष्य-शरीर समस्त शुभ फलों की प्राप्ति का मूल है और अत्यन्त दुर्लभ होने पर भी अनायास सुलभ हो गया है। इस संसार-सागर से पार जाने के लिये यह एक सुदृढ़ नौका है। शरण-ग्रहण मात्र से ही गुरुदेव इसके केवट बन कर पतवार का संचालन करने लगते हैं और स्मरण मात्र से ही मैं अनुकूल वायु के रूप में इसे लक्ष्य की ओर बढाने लगता हूँ। इतनी सुविधा होने पर भी जो शास्त्रप्रतिपादित धर्मानुष्ठान करके इस मनुष्य शरीर के द्वारा संसार-सागर से पार नहीं हो जाता, वह तो अपने हाथों अपने आत्मा का हनन-अधःपतन कर रहा है।

अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष और अभिनिवेश (मरण) इन पाँच क्लेशों से मुक्ति तथा काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद एवं मात्सर्य इन छः विकारों पर विजय प्रप्ति भगवदीय कृपा के बिना सम्भव नहीं है। भगवान् के लीलाओं के स्मरण से कुमति का निवारण होता है।

भगवान् के चरित्रों का प्रतिपादन करना ही विद्याप्रखरता का द्योतक है। गोस्वामी जी कहते हैं-

**सोइ सर्बग्य गुनी सोइ ग्याता।**
**सोइ महि मंडित पंडित दाता।।**
**धर्म परायन सोइ कुल त्राता।**
**राम चरन जाकर मन राता।।**

(श्रीमद्रामचरितमानस ७/१२७-१-२)

भगवान् परशुराम अष्ट सिद्धियों और नव निधियों को देने वाले हैं।

**सिद्धियाँ आठ हैं-**

**अणिमा गरिमा चैव महिमा लघिमा तथा ।**
**प्राप्तिः प्राकाम्यमीशित्वं वशित्वं चाष्ट सिद्धयः ।।**

(अमरकोष १/१)

अर्थात् अणिमा, गरिमा, महिमा, लघिमा, प्राप्ति, प्राकाम्य, ईशित्व और वशित्व ये आठ सिद्धियाँ हैं ।

**निधियाँ नौ हैं-**

**महापद्मश्च पद्मश्च शङ्खो मकरकच्छपौ।**
**मुकुन्दः कुन्दनीलौ च सर्वश्च निधयो नवः॥**

अर्थात् महापद्म, पद्म, शङ्ख, मकर, कच्छप, मुकुन्द, कुन्द, नील और खर्व ये नौ निधियाँ हैं।

देवों के सहायक अद्वितीय वीर पीड़ित पृथ्वी के इक्कीस बार रक्षक गोविप्र वंश के पालक वर्णाश्रम के संरक्षक श्रुतिपालक पन्द्रह हजार तीन सौ साठ किलोमीटर का समुद्र खाली कराकर भारतवर्ष के लिए भूमि के दाता, अत्याचारी, दुर्दान्त राजाओं के नाशक, लोकनमस्कृत भगवान् श्रीपरशुराम जी के जीवन आदर्शों से यह ग्रन्थ संवलित है।

## ● हैहयवंशी क्षत्रियों की उत्पत्ति

एक समय अत्यन्त सुन्दर रूपवान् तथा अपरिमित तेज वाले सूर्यपुत्र जो **'रेवन्त'** नाम से विख्यात थे, अपने मनोहर अश्वरत्न उच्चैःश्रवा पर आरुढ़ होकर भगवान् श्रीविष्णु के निवास स्थान बैकुण्ठलोक गये। श्रीविष्णु के आकांक्षी वे भास्करनन्द घोड़े पर सवार होकर जब वहाँ पहुँचे तब श्री लक्ष्मी जी की दृष्टि अश्व पर विराजमान 'रेवन्त' पर पड़ गयी। समुद्र से प्रादुर्भूत अपने भाई अलौकिक उच्चैःश्रवा घोड़े को देखकर वे महान् विस्मय में पड़ गयीं और उसके रूप को स्थिर नेत्रों से देखती रह गयी। भगवान् विष्णु ने लक्ष्मी जी से पूछा कि-हे प्रिये! दूसरे कामदेव के समान तेजोमय शरीर वाला यह कौन है जो घोड़े पर सवार होकर तीनों लोकों को मोहित करता हुआ इधर चला आ रहा है। भगवान् विष्णु

के पूछने पर भी दैववशात् लक्ष्मी जी ने कुछ नहीं कहा। इससे भगवान् विष्णु क्रोधित हो उठे और बोले–हे वामोरु! मेरे पास रहने पर भी तुम यदि एक अश्व को देखकर मोहित हो गयी हो, तो तुम अत्यन्त दारुण मर्त्यलोक में घोड़ी के रूप में जन्म ग्रहण करो–

**त्वं हयं मत्समीपस्था समीक्ष्य यदि मोहिता ।**
**वडवा भव वामोरु मर्त्यलोकेऽतिदारुणे ॥**

(श्रीमद्देवीभागवत ६/१७/६१)

हे प्रिये! तुम्हारा चित्त सभी ओर रमण करता है अत एव 'रमा' और तुम्हारी चञ्चलता के कारण तुम 'चला' कही जाओगी–

**सर्वत्र रमसे यस्माद्रमा तस्माद् भविष्यसि।**
**चञ्चलत्वाच्चलेत्येवं सर्वथैव न संशयः॥**

(श्रीमद्देवीभागवत ६/१७/५९)

तत्पश्चात् भगवती लक्ष्मी ने घोड़ी का रूप धारण कर पृथ्वीलोक में आशुतोष भगवान् महेश्वर की आराधना किया। वाणीविशारद भगवान् शंकर के वरदान से श्रीलक्ष्मी जी को दिव्य अश्व रूप में भगवान् विष्णु से मिलन हुआ। यमुना और तमसा के लोकपवित्र संगम पर भगवान् विष्णु मनोहर अश्व रूप धारण कर वहीं पर पहुँचे जहाँ घोड़ी का रूप धारण कर सिन्धुतनया श्रीलक्ष्मी जी तपस्या कर रही थीं। हयरूपधारिणी श्रीलक्ष्मी जी ने अश्व का रूप धारण किये हुए अपने पति गोविन्द को देखते ही उन्हे पहचान लिया। यमुना और तमसा के पवित्र संगम पर कामार्त उन दोनों का समागम हुआ। इस प्रकार वडवारूपधारिणी वे विष्णुप्रिया गर्भवती हो गयीं और वहीं पर उन्होंने सद्गुणों से सम्पन्न तथा सुन्दर पुत्र को जन्म दिया–

**तयोस्तु सङ्गमस्तत्र प्रवृत्तो मन्मथार्तयोः ।**
**कालिन्दीतमसासङ्गे पावने लोकविश्रुते ॥**
**सगर्भा सा तदा जाता वडवा हरिवल्लभा ।**
**सुषुवे सुन्दरं बालं तत्रैव सुगुणोत्तरम् ॥**

(श्रीमद्देवीभागवत ६/१९/३९-४०)

सद्गुणों से सम्पन्न वही पुत्र 'एकवीर' इस नाम से लोक में ख्याति प्राप्त किया और उसी से पृथ्वी पर **'हैहयवंश'** विस्तार को प्राप्त हुआ-

**एकवीरेति नाम्नासौ ख्यातिं यास्यति ते सुतः ।**
**तस्मात्तु हैहयो वंशो भुवि विस्तारमेष्यति ॥**

(श्रीमद्देवीभागवत ६/१८/५६)

तत्पश्चात् भगवान् श्रीविष्णु और श्रीलक्ष्मी जी पहले जैसा दिव्य देह धारण कर अपने बैकुण्ठधाम चले गये।

## ● हैहयवंशी क्षत्रियों-द्वारा भृगुवंशी ब्राह्मणों का संहार

कर्म वही है, जो बन्धन न करे और विद्या वही है जो मुक्ति के लिए हो-

**यथा न नश्यति तमः कृतया दीपवार्तया।**
**तत्कर्म यन्न बन्धाय सा विद्या या विमुक्तये॥**

(श्रीमद्देवीभागवत ६/१५/५५)

विद्या तथा तपस्या भगवान् के गुणानुवाद से फलवती होती है। शील, परोपकार, क्रोध का अभाव, क्षमा, धैर्य और सन्तोष- यह सब विद्या का फल है।

पूर्वकाल में हैहय-वंशी क्षत्रियों ने ब्रह्महत्याजनित पाप की उपेक्षा करके धन के लोभ से भृगुवंशी ब्राह्मण पुरोहितों का

कोपाविष्ट होकर समूलोच्छेदन कर दिया था। क्षत्रियों तथा भगवान् परशुराम जी से सम्बन्ध रखने वाली आश्चर्यजनक प्राचीन कथा है।

कार्तवीर्य नामक एक हैहयवंशी राजा थे, जिनकी हजार भुजाएँ थीं, वे परम बलशाली थे, उनका दूसरा नाम 'सहस्रार्जुन' भी था। वे भगवान् श्रीविष्णु जी के अवतार श्रीदत्तात्रेय के शिष्य तथा भृगुवंशी ब्राह्मणों के यजमान थे।

नृपश्रेष्ठ कार्तवीर्यार्जुन दानशील, धर्मनिष्ठ यज्ञ करने वाले महान् राजा थे। उन्होंने अनेक यज्ञ करके अपनी विपुल सम्पदा भृगुवंशी ब्राह्मणों को दान कर दी थी। राजा के द्वारा दिये गये दान से वे भृगुवंशी ब्राह्मण बड़े धनी हो गये तथा घोड़े, हाथी, रत्न आदि सम्पदा से युक्त हो जाने के कारण जगत् में वे अतीव प्रसिद्ध हो गये थे। भगवती श्रीजगदम्बिका के उपासक तथा भगवान् दत्तात्रेय जी के शिष्य परम सिद्ध महाराज कार्तवीर्यार्जुन ने दीर्घकाल तक राज्य किया। बहुत दिनों के पश्चात् उनके स्वर्ग चले जाने पर हैहयवंशी क्षत्रिय धनहीन हो गये–

**यज्वा परमधर्मिष्ठः सदा दानपरायणः।**
**ददौ वित्तं भृगुभ्योऽसौ कृत्वा यज्ञाननेकशः॥**
**धनिनस्ते द्विजा जाता भृगवो नृपदानतः।**
**हयरत्नसमृद्ध्याढ्याः सञ्जाताः प्रथिता भुवि॥**
**स्वर्याते नृपशार्दूले कार्तवीर्यार्जुने पुनः।**
**हैहया निर्धना जाताः कालेन महता नृप॥**

(श्रीमद्देवीभागवत ६/१६/१०-१२)

कालान्तर में हैहयवंशीय क्षत्रियों को कार्यविशेष के लिए धन की आवश्यकता पड़ गयी। तब वे धन माँगने की इच्छा से भृगुवंशी ब्राह्मणों के पास गये और उन ब्राह्मणों से विनम्रता पूर्वक

धन की याचना की, किन्तु लोभ के वशीभूत उन ब्राह्मणों ने कुछ नहीं दिया तथा बार-बार कहते रहे कि- 'हमारे पास नही है, हमारे पास नही है।' कुछ समय बाद भय और लोभ से ब्राह्मणों ने अपना-अपना धन पृथिवी के नीचे गाड़कर घर-द्वार छोड़कर पर्वतों पर चले गए और पर्वतों की गुफाओं में रहने लगे। तदनन्तर कष्ट झेल रहे निर्धन हैहयवंशी क्षत्रियों ने पुनः ब्राह्मणों के आश्रमों पर धन की याचना करने पहुँचे। ब्राह्मणों को आश्रम से बाहर गया हुआ देखकर वे हैहयवंशी क्षत्रिय धन के लिए वहाँ की जमीन खोदने लगे। ब्राह्मणों के घर की खोदायी में कुछ धन क्षत्रियों को प्राप्त हुआ। हैहयवंशी क्षत्रियों ने प्रायः सभी ब्राह्मणों के घर से सभी धन निकाल लिया। इसके पश्चात् वे उन पर्वत की गुफाओं में पहुँच गये, जहाँ भृगुवंशी ब्राह्मण ठहरे हुए थे। वहाँ पहुँचकर लोभी क्षत्रियों ने ब्राह्मणों का समूल नाश करने लगे। गर्भस्थ शिशुओं सहित ब्राह्मणों को नष्ट करते हुए क्षत्रिय इस पृथ्वी मण्डल पर घूमने लगे। उन्हें जहाँ कहीं भृगुवंशी बालक, वृद्ध तथा अन्य भी मिल जाते थे, वे पाप की परवाह किये बिना उन सभी को तीक्ष्ण बाणों से मार डालते थे-

**ययुस्ते गिरिदुर्गांश्च यत्र वै भृगवः स्थिताः।**
**आगर्भादनुकृन्तन्तश्चेरुश्चैव महीमिमाम्॥**
**प्राप्तान्प्राप्ताभृगून्सर्वान्निजघ्नुर्निशितैः शरैः।**
**आबालवृद्धानपरानवमन्य च पातकम्॥**

(श्रीमद्देवीभागवत ६/१६/२४-२५)

इस प्रकार धनलोलुप तथा पापकर्मों से अविभूत हैहयवंशी क्षत्रियों ने उन ब्राह्मणों को बहुत पीड़ित किया तथा उनका संहार किया। लोभ-परायण तथा पापबुद्धि हैहयवंशी क्षत्रियों ने भृगुकुल के समस्त ब्राह्मणों को मार डाला था-

**तस्माल्लोभाभिभूतस्तु किं न कुर्यान्नरः किल ।**
**हैहयैर्निहताः सर्वे भृगवः पापबुद्धिभिः ॥**

(श्रीमद्देवीभागवत ६/१६/५५)

इन पापबुद्धि हैहयवंशी क्षत्रियों का लोभ-परायणता के कारण ज्ञान नष्ट हो गया था, इन्हें यह ज्ञान नहीं था कि- अत्यन्त उग्र पाप अथवा पुण्य-कर्म का फल इसी लोक में प्राप्त हो जाता है-

**अत्युग्रपुण्यपापानामिहैव फलमाप्नुयात् ।**
**तस्माज्जुगुप्सितं कर्म त्यक्तव्यं भूतिमिच्छता ॥**

(श्रीमद्देवीभागवत ६/१६/३०)

## ● भगवती जगदम्बा की कृपा से भार्गव-ब्राह्मणी की जंघा से महर्षि और्व की उत्पत्ति

पापबुद्धि हैहयवंशी पापाचारी क्षत्रियों से पीड़ित भृगुवंश की स्त्रियाँ हिमालय पर्वत पर चली गयीं। उन्होंने हिमालय पर्वत में नदी के तट पर भगवती श्रीगौरी जी की मृण्मयी प्रतिमा स्थापित करके निराहार रहते हुए कठोर तप किया। एक समय स्वप्न में भगवती जगदम्बा ने उन उत्तम स्त्रियों के पास पहुँचकर कहा-तुम लोगों में से किसी की जंघा से एक पुरुष उत्पन्न होगा। मेरा अंशभूत वही शक्तिमान् पुरुष तुमलोगों का कार्य सिद्ध करेगा-

**स्वप्ने गत्वा तदा देवी प्राह ताः प्रमदोत्तमाः ।**
**युष्मासु मध्ये कस्याश्चिद्भविता चोरुजः पुमान् ॥**
**मदंशशक्तिसम्भिन्नः स वः कार्यं विधास्यति ।**
**इत्यादिश्य पराम्बा सा पश्चादन्तर्हिता भवत् ॥**

(श्रीमद्देवीभागवत ६/१७/७-८)

उनमें से एक भार्गव-ब्राह्मणी वंशवृद्धि हेतु अपनी एक जंघा में गर्भ धारण किया-

**दधार चोरुणैकेन गर्भं सा कुलवृद्धये ।**
**पलायनपरा दृष्टा क्षत्रियैर्ब्राह्मणी यदा ॥**
(श्रीमद्देवीभागवत ६/१७/१०)

पापाचारी हैहयवंशी क्षत्रियगण सगर्भा ब्राह्मणी की हत्या करने के लिए हाथ में तलवार लेकर उस कामिनी स्त्री की हत्या करने के लिये उसके पास पहुँच गये। गर्हित कर्म करने वाले क्षत्रियों को देखकर घबरायी हुई वह स्त्री रोने लगी और गर्भरक्षा के लिये भय से विह्वल होकर जोर-जोर से विलाप करने लगी। आँसू भरे नेत्रोंवाली तथा थर-थर काँपती हुई माता का रुदन सुनकर वह सुन्दर गर्भस्थ बालक (ऋषि और्व) कुपित होकर अपने तेज से क्षत्रियों की नेत्र-ज्योति का हरण करता हुआ जंघा का भेदन करके दूसरे सूर्य की भाँति शीघ्र ही बाहर निकल आया-

**साश्रुनेत्रां वेपमानां सङ्क्रुध्य बालकस्तदा ।**
**भित्त्वोरुं निर्जगामाशु गर्भः सूर्य इवापरः ॥**
**मुष्णन्दृष्टीः क्षत्रियाणां तेजसा बालकः शुभः ।**
(श्रीमद्देवीभागवत ६/१७/१५, १/२)

उस बालक की ओर देखते ही वे सभी लोभपरायण दुर्बुद्धि क्षत्रीगण दृष्टिहीन हो गये। नेत्रज्योति से विहीन क्षत्रीगण तेजवान् उस ब्राह्मणी माता के शरण में जाकर क्षमा याचना करने लगे। क्षत्रियों ने कहा- आप हमारे ऊपर कृपा कीजिये। फिर से नेत्रज्योति देकर इन समस्त क्षत्रियों को अपना सेवक बना लीजिए। अब हम लोग इस प्रकार का गर्हित कर्म कभी नहीं करेंगे। अब हम सभी भार्गव ब्राह्मणों के सेवक हो गये। हम लोगों ने अज्ञानवश जो भी पाप किया है उसे आप क्षमा करें। हम हैहयवंशी क्षत्रिय शपथ पूर्वक कहते हैं कि आज से कभी भी भृगुवंशी ब्राह्मणों के साथ हम वैरभाव नहीं रखेंगे और यथोचित व्यवहार करेंगे-

**शरणं ते प्रपन्नाः स्मो देहि चक्षूंषि मानदे ।**
**अन्धत्वं मरणादुग्रं कृपां कर्तुं त्वमर्हसि ॥**
**पुनर्दृष्टिप्रदानेन सेवकान्क्षत्रियान्कुरु ।**
**उपरम्य च गच्छेम सहिताः पापकर्मणः ॥**
**अतःपरं न कर्तव्यमीदृशं कर्म कर्हिचित् ।**
**भार्गवाणां तु सर्वेषां सेवकाः स्मो वयं किल ॥**
**अज्ञानाद्यत्कृतं पापं क्षन्तव्यं तत्त्वयाधुना ।**
**वरं नातः परं क्वापि भृगुभिः क्षत्रियैः सह ॥**
**कर्तव्यं शपथैः सम्यग्वर्तितव्यं तु हैहयैः ।**

(श्रीमद्देवीभागवत ६/१७/२४-२७, १/२)

ब्राह्मणी ने कहा- क्षत्रियों के द्वारा अपने बान्धवों और यहाँ तक कि गर्भस्थित बालकों का वध किये जाने की बात जानकर कोपाविष्ट इसी बालक ने आप लोगों के नेत्र स्तम्भित कर दिये हैं। जब आप लोग निरापराध, धर्मनिष्ठ तथा तपस्वी भार्गव ब्राह्मणों और गर्भस्थ बालकों को भी धन लोलुपता में पड़कर मार रहे थे तभी मैने इसे अपनी जंघा में गर्भ रूप से एक सौ वर्ष तक धारण किये रखा। भृगुवंश की वृद्धि के लिए इस गर्भस्थ बालक नें छहों अंगों सहित सम्पूर्ण वेदों का बड़े सहज भाव से अध्ययन कर लिया है और यह अपने पितृजनों के वध से अत्यन्त कुपित होकर आप लोगों का संहार करना चाहता है-

**अनागसो धर्मपरांस्तापसान्धनकाम्यया ।**
**गर्भानपि यदा यूयं भृगूनघ्नंस्तु पुत्रकाः ॥**
**तदायमूरुणा गर्भो मया वर्षशतं धृतः ।**
**षडङ्गश्चाखिलो वेदो गृहीतोऽनेन चाञ्जसा ॥**
**गर्भस्थेनापि बालेन भृगुवंशविवृद्धये ।**
**सोऽपि पितृवधान्नूनं क्रोधेद्धो हन्तुमिच्छति ॥**

(श्रीमद्देवीभागवत ६/१७/३३-३५)

ब्राह्मणी का वचन सुनकर हैहयों ने जंघा से उत्पन्न महर्षि आप्नवान के पुत्र बालक रूप मुनिश्रेष्ठ और्व को प्रणाम किया और वे विनय से युक्त होकर उनकी स्तुति करने लगे-

**तच्छ्रुत्वा वचनं तस्या हैहयास्तुष्टुवुश्च तम् ।**
**प्रणेमुर्विनयोपेता ऊरुजं मुनिसत्तमम् ॥**

(श्रीमद्देवीभागवत ६/१७/३८)

तत्पश्चात् प्रसन्न होकर उस बालक ने उन नेत्रहीन क्षत्रियों से कहा-हे राजाओं! अब तुमलोग मेरी कही हुई बात पर विश्वास करके अपने-अपने घर लौट जाओ। दैव ने जो विधान सुनिश्चित कर दिये हैं, वे अवश्य होकर रहते हैं, ज्ञानी व्यक्ति को इस विषय में चिन्ता नहीं करनी चाहिए-

**अवश्यम्भाविभावास्ते भवन्ति देवनिर्मिताः।**
**नात्र शोकस्तु कर्तव्यः पुरुषेण विजानता॥**

इस प्रकार उनके कहने पर उन हैहयवंशी क्षत्रियों को दृष्टि प्राप्त हो गयी और वे और्व मुनी (उरु से उत्पन्न) उस बालक से आज्ञा लेकर आनन्दपूर्वक अपने-अपने घर चले गये-

**इति तेन समादिष्टा हैहयाः प्राप्तलोचनाः।**
**और्वमामन्त्र्य जग्मुस्ते सदनानि यथारुचि॥**

(श्रीमद्देवीभागवत ६/१७/४२)

च्यवन के पुत्र 'आप्नवान' हैं, आप्नवान के पुत्र और्व हैं और और्व के पुत्र सौ जमदग्निपुरस्सर (पुरोगम) कहे गये हैं। नहुष की पुत्री नाहुषी (ऋची) और च्यवन के पुत्र आप्नवान से और्व उत्पन्न हुये। आप्नवान की स्त्री का नाम नाहुषी अर्थात् नहुष पुत्री ऋची है।

## परशुराम का कैलाश-गमन, शिव जी के दर्शनार्थ गणेश से अनुरोध तथा गणेश का एकदन्त-वर्णन प्रसङ्ग

विश्वात्मा भगवान् एकदन्त का चरित सम्पूर्ण मङ्गलों का मङ्गल करने वाला है। ब्रह्मवैवर्तपुराण के अनुसार इक्कीस बार हैहयवंशी क्षत्रियों का वध करने के पश्चात् श्रीपरशुराम आशुतोष भगवान् शङ्कर के दर्शन के लिए कैलाश गए। श्रीपरशुराम जी कैलाश जाकर भगवान् शिव जी के दर्शन के लिए श्रीगणेश जी से अनुरोध करते हैं। श्रीगणेश जी के रोके जाने पर भी परशुराम जी शिव-भवन में प्रवेश करने के लिए उद्यत होते हैं। श्रीगणेश जी उन्हें समझाते हैं और न मानने पर परशुराम जी को स्तम्भित करके अपनी सूँड़ में लपेटकर सभी लोकों में घुमाते हुए गोलोक में सर्वजगन्निवास श्रीकृष्ण का दर्शन कराकर भूतल पर उन्हें छोड़ देते हैं। होश में आने पर श्रीरेणुकानन्दवर्धन परशुराम कुपित होकर श्रीगणेश जी पर भगवान् शिव से प्राप्त फरसे का प्रहार करते हैं। फरसे के प्रहार से श्रीगणेश जी का एक दाँत टूट जाता है। श्रीगणेश जी के एकदन्त-वर्णन-प्रसङ्ग को श्रीनारायण ने देवर्षि नारद जी को सुनाया था।

श्रीनारायण कहते हैं- नारद! श्रीहरिका कवच धारण करके जब परशुराम ने पृथ्वी को क्षत्रियों से रहित कर दिया, तब वे अपने गुरुदेव आशुतोष भगवान् शिव को नमस्कार करने और गुरुपत्नी भगवती अम्बा शिवा को तथा दोनों गुरुपुत्र श्रीकार्तिकेय और श्रीगणेश जी को, जो गुणों में साक्षात् नारायण के समान हैं, दर्शन के लिए कैलास को चले । वे भृगुवंशी महात्मा मन के समान वेगशाली थे, अत एव उसी क्षण कैलास पर जा पहुँचे। वहाँ उन्होंने

अत्यन्त रमणीय परम मनोहर नगर देखा। वह नगर बड़े-बड़े देवपथों से सुशोभित था, जो अत्यन्त मनोहारी था । वहाँ की भूमि सोने की भूमिकी-सी थी, जिनपर शुद्ध स्फटिक के सदृश मणियाँ जड़ी हुई थीं। कैलाश में चारों ओर सिंदूर की-सी रंगवाली मणियों की वेदियाँ निर्मित थीं। वह राशि-की-राशि मुक्ताओं से युक्त और मणियों के मण्डपों से समलंकृत था। उसमें यक्षों के एक अरब दिव्य भवन थे, जो रत्नों से परिपूर्ण, यक्षेन्द्रगणों से परिवेष्टित और मणिनिर्मित किवाड़, खम्भे और सीढ़ियों से शोभायमान हो रहे थे। कैलाश दिव्य सुवर्ण-कलशों, चाँदीके बने हुए श्वेत चॅवरों, रत्नों के आभूषणों से शोभयमान हो रहे थे। उद्दीप्त होती हुई सुन्दरियों, हाथों में चित्रलिखित पुत्तलिकाएँ लिये हुए निरन्तर स्वच्छन्दता पूर्वक हँसते और खेलते हुए सुन्दर-सुन्दर बालकों एवं बालिकाओं तथा स्वर्गगङ्गा के तटपर उगे हुए पारिजात के वृक्षसमूहों से शुशोभित थे। कैलाश पर्वत खिले हुए सुगन्धित पुष्पसमूहों से युक्त, कल्पवृक्षों का आश्रय लेनेवाले कामधेनु से पुरस्कृत, सिद्धविद्या में अत्यन्त निपुण पुण्यवान् सिद्धों द्वारा सेवित था। जो तीन लाख योजन ऊँचे और सौ योजन के विस्तार वाले थे। जिनमें सैकड़ों मोटी- मोटी डालियाँ थीं, जो असंख्य शाखा समूहों और असंख्य फलों से युक्त थे। वहाँ की दिशाएँ परम मनोहर शब्द करने वाले विभिन्न प्रकार के पक्षिसमूहों से व्याप्त थे। शीतल-सुगन्ध वायु जिन्हें कम्पायमान कर रही थी, ऐसे अविनाशी वटवृक्षों से, सहस्रों पुष्पोद्यानों से, सैकड़ों सरोवरों से तथा मणियों एवं रत्नों से बने हुए सिद्धेन्द्रों के लाखों भवनों से वह नगर परम सुशोभित था। इस प्रकार उस कैलाश की सुन्दरता को देखकर परशुराम का मन अत्यन्त प्रसन्नता से खिल उठा। वहीं उन्हें शंकरजी का शोभाशाली रमणीय आश्रम दीख पड़ा। देवशिल्पी विश्वकर्मा ने बहुमूल्य मणियों द्वारा उसकी

रचना की थी। वह पंद्रह योजन ऊँचा और चार योजन विस्तृत था। आश्रम के चारों ओर अत्यन्त सुन्दर सुडौल चौकोर परकोटा बना हुआ था। दरवाजोंपर नाना प्रकार की चित्रकारियों से समलङ्कृत रत्नों के दरवाजे लगे थे। वह श्रेष्ठ मणियों की वेदियों से युक्त था।

भृगुनन्दन परशुरामने उस आश्रम के प्रधानद्वार के दाहिनी ओर श्रीवृषेन्द्र को और बायीं ओर श्रीसिंह तथा श्रीनन्दीश्वर, श्रीमहाकाल, भयंकर श्रीपिंगलाक्ष, श्रीविशालाक्ष, श्रीबाण, महाबली श्रीविरूपाक्ष, श्रीविकटाक्ष, श्रीभास्कराक्ष, श्रीरक्ताक्ष, श्रीविकटोदर, श्रीसंहारभैरव, भयंकर श्रीकालभैरव, श्रीरुरुभैरव, ईशकी-सी आभावाले श्रीमहाभैरव, श्रीकृष्णाङ्गभैरव, दृढपराक्रमी श्रीक्रोधभैरव, श्रीकपालभैरव, श्रीरुद्रभैरव तथा सिद्धेन्द्र, रुद्रगण, विद्याधर, गुह्यक, भूत, प्रेत, पिशाच, कूष्माण्ड, ब्रह्मराक्षस, वेताल, दानव, जटाधारी योगीन्द्र, यक्ष, किंपुरुष और किन्नर समूहों को देखा। उन्हें देखकर भृगुनन्दनने उनके साथ चर्चा किया। तत्पश्चात् श्रीनन्दिकेश्वर की आज्ञा ले वे प्रसन्न मनसे शिवभवन में आगे बढ़ने को उद्यत हुए। आगे बढ़ने पर उन्हें बहुमूल्य रत्नोंके बने हुए सैकड़ों मन्दिर दिखाई दिये, जो अमूल्य रत्नोंद्वारा निर्मित चमचमाते हुए कलशों से परम सुशोभित थे। अमूल्य रत्नों के बने हुए किवाड़, जिनमें हीरे जड़े हुए थे और मोतियाँ एवं निर्मल शीशे लगे हुए थे, उन मन्दिरोंकी शोभा को बढ़ा रहे थे। श्रीपरशुरामने उनके भीतरी द्वार को देखा, जो नाना प्रकार की चित्रकारी से चित्रित तथा हीरे मोतियों की गुँथी हुई मालाओं से देदीप्यमान हो रहा था। उसकी बायीं ओर श्रीकार्तिकेय और दाहिनी ओर श्रीगणेश तथा भगवान् शिव-समान पराक्रमी विशालकाय श्रीवीरभद्र विराजमान थे। वहाँ मुख्य-मुख्य पार्षद और क्षेत्रपाल भी रत्नाभरणों से विभूषित हो रत्ननिर्मित सिंहासनों पर विराजमान थे। महान् बल-पराक्रम से सम्पन्न भृगुवंशी श्रीपरशुराम उन सबसे

वार्तालाप करके हाथ में फरसा लिये हुए शीघ्र ही आगे बढ़ने लगे। उन्हें आगे बढ़ते देखकर श्रीगणेशजी ने कहा-'भाई ! क्षणभर ठहर जाओ। इस समय देवाधिदेव महादेव शयन कर रहे हैं। मैं उन परमेश्वर की आज्ञा लेकर यहाँ आता हूँ और आपको साथ ले चलूँगा। कुछ समय के लिए रुक जाओ। श्रीगणेश की बात सुनकर देवगुरु बृहस्पति के समान-वक्ता महाबली श्रीपरशुराम बोले-

**यास्याम्यन्तः पुरंभ्रातःप्रणामंकर्त्तुमीश्वरम् ।**
**प्रणम्यमातरंभक्त्यायास्या मित्वरितंगृहम् ॥**
**त्रिस्सप्तकृत्वोनिर्भूपांकृत्वापृथ्वींचलीलया ।**
**कार्त्तवीर्य्यः सुचन्द्रश्चहतोयस्यप्रसादतः ॥**

(ब्रह्मवैवर्तपुराण गणपतिखण्ड ४२/२)

भाई श्रीगणेशजी! मैं परमेश्वर को प्रणाम करने के लिये अन्तःपुर में जा रहा हूँ और सभक्ति माता परमेश्वरी श्रीपार्वती जी को प्रणाम करके यथाशीघ्र ही घरको लौट जाऊँगा। आशुतोष भगवान् शिव सगुण-निर्गुण, भक्तों के लिये अनुग्रह के मूर्तरूप, सत्य, सत्यस्वरूप, ब्रह्मज्योति, सनातन, स्वेच्छामय, दयासिन्धु, दीनबन्धु, मुनियों के ईश्वर, आत्मा में रमण करने वाले, पूर्णकाम, व्यक्त-अव्यक्त, परात्पर, पर-अपर के प्रणेता, देव राज इन्द्र के समान सम्मानित, पुरातन, परमात्मा, ईशान, सबके आदि, अविनाशी, समस्त मङ्गलों के मङ्गलस्वरूप, सम्पूर्ण मङ्गलों के कारण, सभी मङ्गलों के प्रदाता, शान्त, षडैश्वर्ये के प्रदाता, परमोत्कृष्ट, समदर्शी, प्रसन्नवदन, भक्तवत्सल, शरणागत रक्षक और भक्तों के अभयप्रदाता हैं, जिनसे मैंने अनेक प्रकार की विद्याओं और अनेक प्रकार के परम दुर्लभ शस्त्रों को प्राप्त किया है, उन देवाधिदेव आशुतोष जगदीश्वर गुरु का इसी समय मैं दर्शन लाभ प्राप्त करने का अभिलाषी हूँ-

**सर्वमङ्गलमाङ्गल्यं सर्वमङ्गलकारणम् ।**
**सर्वमङ्गलदंशान्तं सर्वै श्वर्य्यप्रदंवरम् ॥**
**आशुतोषं प्रसन्नास्यंशरणागतवत्सलम् ।**
**भक्ताभयप्रदं भक्तवत्सलं समदर्शनम् ॥**
**इत्थं परशुरामोऽस्था दुक्त्वा गणपतेः पुरः।**
**वाचामधुरया तत्र समुवाचगणेश्वरः ॥**

(ब्रह्मवैवर्तपुराण गणपतिखण्ड ४२/७-९)

भृगुनन्दन श्रीपरशुराम जी के अनुरोध पर श्रीगणेशजी ने उनको बहुत तरह से समझाया कि इस समय भगवान् शिव और भगवती माताजी अन्तःपुर में हैं। इसलिए आपको वहाँ नहीं जाना चाहिये, किन्तु श्रीपरशुरामजी हठ करते रहे। श्रीपरशुराम जी ने शास्त्रीय युक्तियों द्वारा अपना अंदर जाना प्रशस्त बताया। परस्पर दोनों में सम्भाषण होता रहा। श्रीगणेशजी विनय पूर्वक ही श्रीपरशुराम को - रोकते रहे, किन्तु जब श्रीपरशुराम ने बलपूर्वक प्रवेश करना चाहा तो श्रीगणेशजी ने उन्हें रोक दिया। तब परस्पर वाग्युद्ध होने लगा। अन्ततः श्रीपरशुरामने श्रीगणेशजी पर अपना फरसा उठा लिया। तब श्रीकार्तिकेयजी ने बीच में आकर श्रीपरशुराम जी को समझाया। श्रीपरशुरामने ने श्रीगणेशजी को मार्ग से हटाने के लिए धक्का दे दिया, जिससे श्रीगणेश जी गिर पड़े। तत्पश्चात् उठकर श्रीगणेश जी ने श्रीपरशुराम जी को डांट-फटकार लगाया। तब श्रीपरशुराम ने पुनः अपना कुठार उठा लिया। तदनन्तर श्रीगणेशजी ने अपनी सूँड़ को लंबा कर लिया और उसमें श्रीपरशुरामजी को लपेटकर घुमाने लगे। श्रीगणेश जी श्रीपरशुराम जी को इस प्रकार से सूँड़ में लपेटकर घुमा रहे थे जैसे छोटे से साँप को गरुड़ ऊपर उठा लेता है। योगबल से शिवपुत्र श्रीगणेश ने श्रीपरशुराम जी को सूँड़ में उठाकर स्तम्भित कर दिया और सप्तद्वीप, सप्तपर्वत, सप्तसागर,

भूर्लोक, भुवर्लोक, स्वर्लोक, जनलोक, तपोलोक, ध्रुवलोक, गौरीलोक, शम्भुलोक श्रीपरशुराम जी को दिखा दिये। तत्पश्चात् उन्हें जलनिधि में फेंक दिया। श्रीपरशुराम जी जब समुद्र में तैरने लगे तो उन्हें पुनः पकड़कर उठा लिया और घुमाते हुए वैकुण्ठ दिखलाकर फिर गोलोकधाम में अकारण करुणा वरुणालय सर्वजगन्निवास भगवान् श्रीकृष्ण के दर्शन कराये। उस समय भगवान् रत्नाभरणों से विभूषित हो रत्ननिर्मित सिंहासन पर विराजमान थे। सर्वेश्वरी श्रीराधाजी उनके वक्षःस्थल से सटी हुई थीं। वे करोड़ों सूर्यो के समान देदीप्यमान हो रहे थे। उनकी परम सुन्दर दो भुजाएँ थीं, हाथ में मुरली शोभा पा रही थी, परम मनोहर रूप था और वे मन्द-मन्द मुस्करा रहे थे। श्रीगणेश जी ने श्रीपरशुराम जी को श्रीकृष्ण का दर्शन कराकर प्रणाम कराया। सम्पूर्ण पापों का नाश करने वाले इष्टदेव श्रीकृष्ण का दर्शन कराकर श्रीगणेशजी ने श्रीपरशुराम के भ्रुणहत्याजनित पापों को दूर कर दिया-

**गणेशस्यवचः श्रुत्वा प्रहस्य भृगुनन्दनः ।**
**तामुवाच महाकोपान्निष्ठुरं वचनं मुने ॥**

(ब्रह्मवैवर्तपुराण गणपतिखण्ड ४२/१५)

यद्यपि पापजनित यातना भोगे बिना नष्ट नहीं होती, तथापि श्रीपरशुराम को थोड़ी ही भोगनी पड़ी। थोड़े में ही श्रीपरशुराम जी के पापों का प्रायश्चित्त श्रीकृष्ण के दर्शन से हो गया। क्षणभर के बाद श्रीपरशुराम जी की चेतना वापस लौट आयी और वे वेग पूर्वक पृथ्वी पर गिर गये। श्रीगणेश द्वारा किया गया स्तम्भन भी दूर हो गया। तब श्रीपरशुराम जी ने अपने अभीष्ट देव श्रीकृष्ण एवं अपने गुरु जगद्गुरु भगवान् शिव द्वारा दिये गये परम दुर्लभ स्तोत्र और कवच का स्मरण किया-

अहो श्रुतं किं वचनमपूर्वं नीतिसंयुतम् ।
इदमेवमहोनैवं श्रुतमीश्वरवक्त्रतः ॥
श्रुतं श्रुतौ वाक्यमिदं कामिनांच विकारिणाम् ।
निर्विकारस्य च शिशोर्नदोषः कश्चिदेवहि ।
यास्याम्यन्तःपुरं भ्रातस्तव किं तिष्ठ बालक ॥
(ब्रह्मवैवर्तपुराण गणपतिखण्ड ४२/१६-१७)

इसके बाद श्रीपरशुराम अपने अमोघ फरसे को, जिसकी प्रभा ग्रीष्म ऋतु के मध्याह्नकालिक सूर्य की प्रभा से सतगुनी थी और जो तेज में शिव-तुल्य था, श्रीगणेश पर चला दिए। पिता के उस अमोघ अस्त्र को आते देखकर स्वयं गणेश्वर ने उसे अपने बायें दाँत से पकड़ लिया, जिससे अस्त्र व्यर्थ न हो। तत्पश्चात् देवाधि देव भगवान् शङ्करजी के बल से वह फरसा वेग पूर्वक गिरकर मूलसहित श्रीगणेश के बाँए दाँत को काटकर पुनः श्रीपरशुराम के हाथ में लौट आया-

गणेशवचंनं श्रुत्वा सततदारागतः सुधीः ।
पर्शुहस्तस्सवैरामो निर्भयोगन्तुमुद्यतः ॥
गणेश्वरस्तदा दृष्ट्वा शीघ्रमुत्थाय यत्नतः ।
वारयामास सप्रीत्या चकार विनयं पुनः ॥
गमस्नं प्रेरयामास हुंकृत्वा तु पुनः पुनः ।
बभूव चततस्तत्र वाग्युद्धं हस्तकर्षणैः ॥
पर्शुनिक्षेपणं कर्त्तुं मनश्चक्रे भृगुस्तदा ।
हाहाकृत्वा कार्त्तिकेयो बोधयामाससंसदि ॥
अव्यर्थमस्त्रं हे भ्रातर्गुरुपुत्रे कथं क्षिपेः ।
गुरुवद्गुरुपुत्रञ्च मा भवान्हन्तुमर्हति ॥
पर्शुं क्षिपन्तं कुपितं रक्तपद्मदलेक्षणम् ।
गणेशो रोधयामास निवर्त्तस्वेन्युवाचतम् ॥

**पुनर्गणेशं रामश्च प्रेरयामास कोपतः ।**
**पपात पुरतो वेगान्मानहीनो गजाननः ॥**

(ब्रह्मवैवर्तपुराण गणपतिखण्ड ४४/१-७)

यह देखकर श्रीवीरभद्र, श्रीकार्तिकेय और श्रीक्षेत्रपालादि पार्षद तथा आकाश में देवगण भय-भीत होकर आर्तनाद करने लगे। श्रीगणेश जी का वह दाँत खून से लतपथ होकर घोष करता हुआ पृथ्वी पर गिर पड़ा, मानो लाल गेरू से युक्त स्फटिक का पर्वत धराशायी हो गया हो। उस महान् शब्द से भयभीत होकर पृथ्वी कम्पायमान हो उठी। कैलासवासी प्राणी डरके मारे तत्क्षण मूच्छित हो गये। निद्रा के स्वामी जगदीश्वर शिव की निद्रा तत्क्षण भंग हो गयी। भगवान् शिव भगवती पार्वतीजी के साथ अन्तःपुर से बाहर आ गये। दाँत टूटने के कारण श्रीगणेशजी घायल हो गये थे और उनका मुख रक्तरंजित था, किन्तु श्रीगणेश्वर जी का क्रोध शान्त हो चुका था तथा वे परम लज्जित होकर मन्द-मन्द मुस्कान करते हुए सिर झुका कर बैठे थे। महागणपति जी को इस दशा में देखकर माता पार्वतीजी ने श्रीकार्तिकेय जी से पूछा- वत्स ! यह सब कैसे हुआ? माता जी के पूछने पर श्रीकार्तिकेय जी ने सभय पूर्वापरका सारा वृत्तान्त उन्हें सुनाया। सम्पूर्ण वृत्तान्त सुनकर माता श्रीदुर्गाजी क्रोधित हो गईं। भगवती दयालुतावशात् रोने लगीं और सर्वेश्वरशम्भुके सामने पुत्र गणेश को हृदय से लगाकर प्रणतिपूर्वक बोलीं-

**सर्वे जानन्ति जगति दुर्गाशङ्करकिङ्करीम् ।**
**अपेक्षा रहिता दासी तस्यावै जीवनं वृथा ॥**
**ईश्वरस्य समाः सर्वास्तृणपर्वतजातयः ।**
**दासीपुत्रस्य शिष्यस्य दोषः कश्येति च प्रभो ॥**
**विचारं कर्तुमुचितं त्वञ्च धर्मविदांवरः ।**
**वीरभद्रः कार्त्तिकेयः पार्षदाः सन्ति शाक्षिणः ॥**

(ब्रह्मवैवर्तपुराण गणपतिखण्ड ४४/१-३)

भगवन् ! जगत् में सभी लोग आपकी (शङ्कर की) किंकरी मुझ दुर्गा को जानते हैं कि यह अपेक्षा रहित दासी है, उसका जीवन व्यर्थ है। किन्तु परमेश्वर के लिये तृण से लेकर पर्वत पर्यन्त सभी जातियाँ समान हैं, अतः दासीपुत्र गणेश और आपके शिष्य परशुराम-इन दोनों में कौन दोषी है? इस पर आपको विचार करना चाहिए, क्योंकि आप धर्मज्ञों में श्रेष्ठ हैं। वीरभद्र, कार्त्तिकेय और पार्षदगण इसके साक्षी हैं। भला, गवाही के काम में झूठ कौन बोलेगा? ये दोनों भाई इन लोगों के लिये समान हैं। धर्म-निर्णय के अवसर पर गवाही देते समय सत्पुरुषों के लिये शत्रु और मित्र एक समान हो जाते हैं क्योंकि जो गवाह गवाही के विषय को ठीक-ठीक जानते हुए भी सभा में काम, क्रोध, लोभ अथवा भय के कारण झूठी गवाही देता है, वह अपनी सौ पीढ़ियों को नरक में गिराकर स्वयं भी कुम्भीपाक नरक में जाता है-

**साक्ष्ये मिथ्यां कोवदेद्वाद्वावेषां भ्रातरौ समौ ।**
**साक्ष्ये समे शत्रुमित्रे शतां धर्मनिरूपणे ॥**
**साक्षीसभायां यत्साक्ष्यं जानन्नप्यन्यथावदेत् ।**
**कामतः क्रोधतो वापि लोभेन च भयेन च ॥**
**स याति कुम्भीपाकञ्च निपात्यशतपूरुषम् ।**
**तैश्चसार्द्धं वसेत्तत्र यावच्चन्द्रदिवाकरम् ॥**

(ब्रह्मवैवर्तपुराण गणपतिखण्ड ४४/४-६)

यद्यपि मैं इन दोनों को समझाने तथा इसका निर्णय करने में समर्थ हूँ, तथापि आपके समक्ष मेरा आज्ञा देना श्रुति में निन्दित कहा गया है।

भगवन् ! सभा में राजा के वर्तमान रहते भृत्योंकी प्रभाका उसी प्रकार मूल्य नहीं होता, जैसे सूर्य के उदय होनेपर पृथ्वी पर जुगनू की कोई गणना नहीं रह जाती। परित्याग के भय से डरी हुई

मैं चिरकाल तक तपस्या करके आपके चरणारविन्दों को प्राप्त किया है। हे जगदीश्वर! दारुण पुत्र-स्नेह के कारण क्रोध, शोक और मोह के वशीभूत होकर मैंने जो कुछ कहा है, उसे क्षमा कीजिये क्योंकि यदि आपने मेरा परित्याग कर दिया तो फिर पुत्र से क्या लाभ ? उत्तम कुल में उत्पन्न हुई पतिव्रता नारी के लिये पति सौ पुत्रों से बढ़कर है। नीच कुल में उत्पन्न होने वाली, दुष्टस्वभाव वाली, ज्ञानहीन और माता-पिता के दोष से निन्दित नारी अपने पति को नहीं मानती। उत्तम कुलमें पैदा हुई स्त्री अपने निन्दित, पतित, मूर्ख, दरिद्र, रोगी और जड पति को भी सदा श्रीविष्णु के समान मानती हैं। तेजस्वियों में श्रेष्ठ अग्नि अथवा सूर्य पतिव्रता के तेज की सोलहवीं कला की समानता नहीं कर सकते। महादान, पुण्यप्रद व्रतोपवास और तप-ये सभी पति-सेवा के सोलहवें अंश के भी समान नहीं हैं-

**कुत्सितं पतितं मूढं दरिद्रं रोगिणं जडम् ।**
**कुलजा विष्णुतुल्यं च कान्तं पश्यति संततम् ॥**
**हुताशनो वा सूर्यो वा सर्वतेजस्विनां परः ।**
**पतिव्रतातेजसश्च कलां नार्हन्ति षोडशीम् ॥**
**महादानानि पुण्यानि व्रतान्यनशनानि च ।**
**तपांसि पतिसेवायाः कलां नार्हन्ति षोडशीम् ॥**

(ब्रह्मवैवर्तपुराण गणपतिखण्ड ४४/१३-१५)

उत्तम कुलमें जन्म लेने वाली स्त्रियों के लिये पुत्र, पिता या सहोदर भाई भी पति के समतुल्य नहीं होता। स्वामी से इतना कहकर दुर्गा परमेश्वरी ने अपने सामने परशुराम को देखा, जो निर्भय होकर आशुतोष भगवान् शिव जी के चरणारविन्दों की सेवा में लगे थे। तब पार्वती जी ने श्रीपरशुराम जी से कहा- हे महाभाग राम ! तुम । ब्रह्मवंश में उत्पन्न हुए हो। तुम्हारी बुद्धि सदसत् का

विवेचन करनेवाली है। तुम महर्षि जमदग्नि के पुत्र और योगियों के गुरु देवाधिदेव महादेव के शिष्य हो। लक्ष्मी के अंश से उत्तम कुल में उत्पन्न सती-साध्वी रेणुका जी तुम्हारी माता हैं। आपके नाना जी विष्णुभक्त और मामा जी उनसे भी बड़े वैष्णव हैं। आप मनुवंश में प्रादुर्भूत हुए राजा रेणुक के दौहित्र हो। साधु स्वभाव वाले शूरवीर राजा विष्णुयशा आपके मामा हैं। आप किसके दोष से ऐसे दुर्धर्ष हो गये हो ?-

**अहो राम महाभागब्रह्मवंश्योऽसि पण्डितः ।**
**पुत्रोऽसि जमदग्नेश्च शिष्यो वै योगिनां गुरोः ॥**
**माता ते रेणुकासाध्वी पद्मांशासत्कुलोद्भवा ।**
**मातामहो वैष्णवश्च मातुलश्च ततोऽधिकः ॥**
**त्वञ्च रेणुकभूपस्य मनुवंशोद्भवस्य च ।**
**दौहित्रो मातुलः साधुः शूरो विष्णुपदाश्रयः ॥**
**कस्य दोषेण दुर्द्धर्षस्त्वं न जानेऽप्यशुद्धधीः ।**
**येषां दाषैर्जनो दुष्टस्तमृतेशुद्धमानसः ॥**

(ब्रह्मवैवर्तपुराण गणपतिखण्ड ४४/१८-२१)

इस त्रुटि का कारण मुझे ज्ञात नहीं हो पा रहा है, क्योंकि कुल के दोष से मनुष्य दूषित हो जाता है, जबकि आपके सभी सगे-सम्बन्धी निर्मल मनवाले हैं। आपने करुणा सागर गुरु और अमोघ फरसा प्राप्तकर पहले क्षत्रिय जाति पर परीक्षा करके पुनः गुरु-पुत्र श्रीगणेश जी पर परीक्षा की है। वेदादि शास्त्रों में 'गुरु को दक्षिणा देने का विधान है',- जबकी आपने गुरुपुत्र के दाँत को ही तोड़ दिया-

**गुरवेदक्षिणादानमुचितञ्चश्रुतौश्रुतम् ।**
**भग्नोदन्तस्तत्सुतस्यच्छिन्धिमस्तकमप्यहो ॥**

**गणेश्वरं रणेजित्वा स्थितश्चेदावयोः पुरः ।**
**स त्वं लब्ध्वाशिषो लोके पूजितोऽभूर्जगत्रये ॥**

(ब्रह्मवैवर्तपुराण गणपतिखण्ड ४४/२३-२४)

अब उसका मस्तक भी काट डालो। आशुतोष भगवान् शंकर के वरदान तथा अमोघवीर्य फरसे से तो चूहों को खाने वाला सियार सिंह और शार्दूल को भी मार सकता है। जितेन्द्रिय पुरुषों में श्रेष्ठ गणेश्वर आपके-जैसे लाखों- करोड़ों जन्तुओं को मार डालने की शक्ति रखता है, किन्तु वह मक्खी पर हाथ नहीं उठाता। श्रीकृष्णके अंश से उत्पन्न हुआ यह श्रीगणेश श्रीकृष्ण के ही समान तेजस्वी है। अन्य देवता श्रीकृष्ण की कलाएँ हैं, इसीलिए गणेश जी की अग्रपूजा होती है-

**त्वद्विधं लक्षकोटिञ्च हन्तुं शक्तो गणेश्वरः ।**
**जितेन्द्रियाणां प्रवरो न हिहन्तिचमक्षिकाम् ॥**
**तेजसाकृष्णतुल्योऽयं कृष्णांशश्च गणेश्वरः ।**
**देवाश्चान्येकृष्णकलाः पूजास्य पुरतस्ततः ॥**

(ब्रह्मवैवर्तपुराण गणपतिखण्ड ४४/२६-२७)

भगवती पार्वतीजी क्रोधवश परशुरामको मारने के लिये उद्यत हो गईं। ऐसी स्थिति में परशुराम ने मन-ही-मन गुरुको प्रणाम करके अपने इष्टदेव भगवान् श्रीकृष्ण का चिन्तन किया। तदनन्तर भगवती श्रीदुर्गापरमेश्वरी ने अपने सामने एक तेजस्वी बौने ब्राह्मण-बटु को उपस्थित देखा। उनकी कान्ति करोड़ों सूर्यो के सदृश्य थी। उनके दाँत स्फटिक के समान स्वच्छ थे-

**इत्युक्ता पार्वती रोषात्तं रामं हन्तुमुद्यता ।**
**रामः सस्मारतं कृष्णं प्रणम्य मनसा गुरुम् ॥**
**एतस्मिन्नंतरेदुर्गा ददर्श पुरतो द्विजम् ।**
**अतीववामनं बालं सूर्यकोटिसमप्रभम् ॥**

(ब्रह्मवैवर्तपुराण गणपतिखण्ड ४४/२९-३०)

वे शुक्ल वस्त्र, शुक्ल यज्ञोपवीत, दण्ड, छत्र और ललाटपर उज्ज्वल तिलक धारण किये हुए थे। उनके गले में तुलसी की माला सुशोभित हो रही थी। उनका रूप परम मनोहर था, मुखपर मन्द-मन्द मुस्कान थी और वे रत्नों के बाजूबंद, कङ्कण और रत्नमाला से विभूषित थे। श्रीचरणों में रत्नों के नूपुर थे। मस्तक पर महार्घ रत्नों के मुकुट की उज्ज्वल कांति थी और कपोलों पर रत्ननिर्मित दो कुण्डल देदीप्यमान हो रहे थे, जिनसे उनकी विशेष शोभा थी। वे भक्तों के ईश और भक्तवत्सल थे तथा भक्तों को बायें हाथ से स्थिरमुद्रा और दाहिने हाथ से अभयमुद्रा दिखा रहे थे। उनके साथ नगर के हँसते हुए बालक और बालिकाओं की टोली थी और कैलासवासी आबालवृद्ध सभी उनकी ओर हर्षपूर्वक देख रहे थे। देदीप्यमान उस बालक को देखकर पुत्रों तथा भृत्यों सहित देवाधिदेव महादेव ने भक्तिपूर्वक नमन किया। तदनन्तर **जगदम्बा दुर्गा** ने भी दण्ड की भाँति भूमिपर लेटकर नमन किया-

**तं दृष्ट्वा सम्भ्रमाच्छम्भुः सभृत्यः सहपुत्रकः ।**
**मूर्ध्ना भक्त्या प्राणमच्च दुर्गायै दण्डवद्भुवि ॥**
**आशिषं प्रददौ बालः सर्वेभ्यो वांछितप्रदाम् ।**
**तं दृष्ट्वा बालकाः सर्वे महाश्चर्य्ये ययुर्भिया ॥**

(ब्रह्मवैवर्तपुराण गणपतिखण्ड ४४/३६-३७)

अलौकिक तेज से समन्वित उस बालक ने सबको अभीष्टप्रद आशीर्वाद प्रदान किया। उन्हें देखकर कैलाशवासी सभी बालक भय के कारण आश्चर्यचकित थे। इसके बाद शिवजी ने भक्तिपूर्वक वेदोक्त षोडशोपचार विधि से उनकी पूजा की और फिर सिर झुकाकर काण्वशाखा में कहे गए सूक्त द्वारा उन सनातन भगवान्

वामन की स्तुति की। उस समय उनके सभी अङ्ग पुलकित हो रहे थे। रत्नसिंहासन पर आसीन भगवान् वामन से आशुतोष शिव जी बोले–

**दत्त्वा तस्मै शिवो भक्त्यातूचारांस्तु षोडश ।**
**पूजाञ्चकार श्रुत्युक्तां परिपूर्णतमस्य च ॥**
**तुष्टाव काण्वशाखोक्तस्तोत्रेण नतकन्धरः ।**
**पुलकांकित सर्वाङ्गो भगवन्तं सनातनम् ॥**

(ब्रह्मवैवर्तपुराण गणपतिखण्ड ४४/३८–३९)

ब्रह्मन् ! जो आत्माराम हैं, उनके विषय में कुशल–क्षेम पुछना विडम्बना की बात है। क्योंकि वे स्वयं कुशल के आधार और कुशल–अकुशल के दाता हैं। श्रीकृष्ण की सेवा के फलस्वरूप आज आप मुझे अतिथिरूप में प्राप्त हुए हैं, इससे मेरा जन्म सुफल और जीवन परमधन्य हो गया–

**आत्मारामेषु कुशलप्रश्नोतीवविडंबनम् ।**
**तेशश्वत्कुशलाधाराः कुशलाः कुशलप्रदाः ॥**
**अद्यमे सफलं जन्म जीवितञ्च सुजीवितम् ।**
**प्राप्तस्त्वमतिथिर्ब्रह्मन् कृष्णसेवा फलोदयात् ॥**

(ब्रह्मवैवर्तपुराण गणपतिखण्ड ४४/४१–४२)

अकारण करुणावरुणालय श्रीकृष्ण लोगों के उद्धार के लिये पुण्यक्षेत्र भारत में अपनी पूर्ण कलाओं से अवतरित हुए हैं। जिसने अतिथि का आदर–सत्कार किया है, उसने मानो सभी देवताओं की पूजा कर ली, क्योंकि जिसपर अतिथि प्रसन्न हो जाता है, उसपर स्वयं श्रीहरि प्रसन्न हो जाते हैं–

**अतिथिः पूजितो येन पूजिताः सर्वदेवताः ।**
**अतिथिर्यस्य सन्तुष्टस्तस्यतुष्टोहरिः स्वयम् ॥**

**स्नानेनसर्वतीर्थेषु सर्वदानेनयत्फलम् ।**
**सर्वव्रतोपवासेन सर्वयज्ञेषुदीक्षया ॥**

(ब्रह्मवैवर्तपुराण गणपतिखण्ड ४४/४४-४५)

सम्पूर्ण तीर्थों में स्नान करने से, सबकुछ दान करने से, सम्पूर्ण व्रतोपवास से, सम्पूर्ण यज्ञों में दीक्षित होने से, तपस्याओं से और नित्य-चितिकादि विविध कर्मानुष्ठानों से जो फल प्राप्त होता है-यह अतिथिसेवा की सोलहवीं कलाकी बराबरी नहीं कर सकता। अतिथि जिसके घर से निराश एवं रुष्ट होकर चला जाता है, उसका पुण्य नष्ट हो जाता है-

**अतिथिर्यस्य भग्नाशो याति रुष्टश्च मन्दिरात् ।**
**कोटिजन्मार्जितं पुण्यं तस्य नश्यति निश्चितम् ॥**

(ब्रह्मवैवर्तपुराण गणपतिखण्ड ४४/४७)

आशुतोष श्रीशङ्कर जी के वचन सुनकर जगत्पति श्रीहरि संतुष्ट हो गये और मेघ के समान गम्भीर वाणी में बोले- शिवजी! आपलोगों के कोलाहल को जानकर श्रीकृष्णभक्त परशुराम की रक्षा करने के लिये इस समय मैं श्वेतद्वीप से उपस्थित हुआ हूँ, क्योंकि कृष्णभक्तों का कहीं अमङ्गल नहीं होता-

**श्वेतद्वीपादागतोऽहैज्ञात्वा कोलाहलञ्चवः ।**
**अस्य रामस्य रक्षार्थकृष्णभक्तस्य साम्प्रतम् ॥**
**नैतेषां कृष्णभक्तानामशुभं विद्यतेक्वचित् ।**
**रक्षामितांश्चक्रहस्तो गुरुमन्यं विनाशिव ॥**

(ब्रह्मवैवर्तपुराण, गणपतिखण्ड ४४/५६-५७)

गुरु के कोप के अतिरिक्त अन्य अवस्थाओं में मैं हाथ में चक्र लेकर भक्तों की रक्षा करता हूँ। गुरु के रुष्ट होने पर मैं रक्षा नहीं करता, क्योंकि गुरु की अवहेलना बलवती होती है। गुरु की

सेवा से हीन व्यक्ति से बढ़कर दूसरा पापी नहीं होता। अरे ! जिनकी कृपा से मनुष्य सब कुछ देखता है, वह पिता सबके लिये सबसे बढ़कर माननीय और पूजनीय होता है। पिता मनुष्यों के जन्म देने के कारण जनक, रक्षा करने के कारण पिता और बड़ा करने के कारण कलारूप से प्रजापति है– पिता से माता गर्भ में धारण करने एवं पालन–पोषण करने से सतगुनी बढ़कर मान्या, पूज्या और वन्दनीया है। वह जन्मदात्री वसुन्धरा के समान है। अन्नदाता माता से भी सौगुना वन्दनीय, पूज्य और मान्य है, क्योंकि अन्न के बिना शरीर नही रह सकता। भगवान् विष्णु ही कलारूप से अन्नदाता होते हैं–

**मान्यः पूज्यश्च सर्वेभ्यः सर्वेषां जनको भवेत् ।**
**अहो यस्य प्रसादेन सर्वान्पश्यति मानवः ॥**
**जनकोजन्मदानाच्च रक्षणाच्च पितानृणाम् ।**
**ततो विस्तारकरणात्कलया स प्रजापतिः ॥**
**पितुः शतगुणं माता पोषणाद् गर्भधारणात् ।**
**वन्द्या पूज्या च मान्या च प्रसूस्स्याद्वैवसुन्धरा ॥**

(ब्रह्मवैवर्तपुराण, गणपतिखण्ड ४४/५९–६१)

अभीष्टदेवता अन्नदाता से भी सतगुना श्रेष्ठ होता है। विद्या और मन्त्र प्रदान करने वाला गुरु अभीष्टदेवता से भी सतगुना बढ़कर है। अज्ञानरूपी अन्धकार से परिवृत हुए समस्त पदार्थों को ज्ञानदीपक रूपी नेत्र से आलोकित कराता है, उससे बढ़कर भला बान्धव कौन हो सकता है ? गुरु से प्राप्त मन्त्र और तपसे अभीष्ट सुख, सर्वज्ञता और सम्पूर्ण सिद्धियों की प्राप्ति होती है, अत एव गुरु से बढ़कर बान्धव दूसरा कौन होगा? गुरु के द्वारा प्रदान की गयी विद्या के बल से मनुष्य सभी जगह यथासमय विजयी होता

है। इसलिये संसार में गुरु से बढ़कर पूज्य और गुरु से अधिक प्रिय बन्धु कौन हो सकता है? जो मूर्ख विद्यामद या धनमद से अंधा होकर ज्ञान एवं मन्त्र प्रदान करने वाले सद्गुरु की सेवा मन, वाणी तथा कर्म से नहीं करता, उसे ब्रह्महत्या सदृश पाप लगते हैं। दरिद्र, पतित एवं क्षुद्र गुरु के साथ भी सामान्य मनुष्यवत् आचरण करता है, वह तीर्थस्नायी होने पर भी अपवित्र है और उसका शास्त्रीय कर्मों में अधिकार नहीं है। जो छल-कपट करके माता, पिता, भार्या, गुरुपत्नी और गुरुका परिपालन नहीं करता, वह बड़ा पापी है। गुरु ही ब्रह्मा, गुरु ही विष्णु, गुरु ही महेश्वरदेव, गुरु ही परब्रह्म, गुरु ही सूर्यरूप, गुरु ही चन्द्र, इन्द्र, वायु, वरुण और अग्निरूप हैं-

**गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुर्गुरुर्देवो महेश्वरः ।**<br>
**गुरुरेवपरंब्रह्मगुरुर्भास्कररूपकः ॥**<br>
**गुरुश्चन्द्रस्तथेन्द्रश्च वायुश्च वरुणोऽनलः ।**<br>
**सर्व रूपो हि भगवान्परमात्मास्वयं गुरुः ॥**

(ब्रह्मवैवर्तपुराण, गणपतिखण्ड ४४/७०-७१)

गुरु स्वयं सर्वरूपी ऐश्वर्यशाली परमात्मा हैं। वेद से उत्तम दूसरा शास्त्र नहीं है, श्रीकृष्ण से बढ़कर दूसरा देवता नहीं है, गङ्गा के समान दूसरा तीर्थ नहीं है और तुलसी से उत्तम दूसरा पुष्प नहीं है-

**नास्ति वेदात् परं शास्त्रं न हि कृष्णात् परः सुरः ।**<br>
**नास्ति गङ्गासमं तीर्थं न पुष्पं तुलसीपरम् ॥**

(ब्रह्मवैवर्तपुराण, गणपतिखण्ड ४४/७२)

पृथ्वी से बढ़कर दूसरा क्षमाशील नहीं है, पुत्र से अधिक दूसरा कोई प्रिय नहीं है, दैव से बढ़कर शक्ति नहीं है और एकादशी से उत्तम व्रत नहीं है। भगवान् शालग्राम से बढ़कर यन्त्र नहीं है,

भारत से श्रेष्ठ क्षेत्र नहीं है, और वृन्दावन के समान पुण्यस्थान नहीं है। मोक्षदायिनी सप्तपुरियों में काशी और वैष्णवों में शिव के समान दूसरा नहीं है। भगवती पार्वती से बड़ी कोई पतिव्रता नहीं है और श्रीगणेश से उत्तम कोई जितेन्द्रिय नहीं है। विद्या के समान कोई बन्धु नहीं है और गुरु से बढ़कर कोई अन्य हितकारी पुरुष नहीं है। विद्या प्रदान करने वाले गुरु के पुत्र और पत्नी भी गुरु के सदृश ही आदरणीय होते हैं। गुरु की स्त्री और पुत्र की परशुराम जी ने अवहेलना की है, उसी का सम्मार्जन करने के लिये मैं तुम्हारे घर कैलाश आया हूँ। भगवान् श्रीवामन शिवजी से ऐसा कहकर भगवती श्रीदुर्गा परमेश्वरी को समझाते हुए सत्य के साररूप उत्तम वचन बोले- देवि ! मैं नीतिसम्मत, वेद का तत्त्वरूप तथा परिणाम में सुखदायक वचन कहता हूँ, मेरे उस शुभ वचनको सुनो-

**शृणु देवि प्रवक्ष्यामि मदीयं वचनं शुभम् ।**
**नीतियुक्तं वेदसारं परिणामसुखावहम् ॥**

(ब्रह्मवैवर्तपुराण, गणपतिखण्ड ४४/७९)

हे गिरिराजकिशोरी ! तुम्हारे लिये जैसे गणेश और कार्तिकेय हैं, ठीक उसी प्रकार रेणुकानन्दवर्धन परशुराम भी हैं। सर्वज्ञे ! इनके प्रति तुम्हारे तथा शंकरजी के स्नेह में भेदभाव नहीं है। अत एव हे सर्वेश्वरी पराम्बा ! सब पर विचार करके जो यथोचित हो वैसा करो। पुत्र के साथ पुत्र का यह परस्पर विवाद दैवदोष से घटित हुआ है। दैव को मिटाने में भला कौन समर्थ हो सकता है? दैव महाबली है। वत्से ! **आपके पुत्र श्रीगणेश का 'एकदन्त' नाम वेदों में विख्यात है।** वरानने ! सभी देवगण उन्हें प्रणाम करते हैं। सर्वेश्वरि! **सामवेदोक्त** अपने पुत्र श्रीगणेश के इस **नामाष्टक स्तोत्र** का श्रवण करो। हे जगदम्बा ! गणेश जी का नामाष्टक स्तोत्र अत्यन्त उत्तम तथा सम्पूर्ण विघ्नों का नाशक है-

**पुत्रेण सार्द्धं पुत्रस्य विवादो दैवदोषतः ।**
**दैवं हन्तुं को हि शक्तो देवञ्च बलवत्तरम् ॥**
**पुत्राभिधानं वेदेषु पश्य वत्से वरानने ।**
**एकदन्त इतिख्यातं सर्वदेवनमस्कृतम् ॥**
**पुत्र नामाष्टकं स्तोत्रं सामवेदोक्तमीश्वरि ।**
**शृणुष्वावहितं मातः सर्वविघ्नहरं परम् ॥**

(ब्रह्मवैवर्तपुराण, गणपतिखण्ड ४४/८२-८४)

हे जगदम्बा ! आपके पुत्र के **गणेश, एकदन्त, हेरम्ब, विघ्ननायक, लम्बोदर, शूर्पकर्ण, गजवक्त्र** और **गुहाग्रज**-ये आठ नाम हैं। इन आठों नामों का अर्थ सुनो- शिवप्रिये ! यह उत्तम स्तोत्र सभी स्तोत्रों का सारभूत और सम्पूर्ण विघ्नों का नाशक है। **ग** ज्ञानार्थ वाचक और **ण** निर्वाणवाचक है। इन दोनों **गण** के जो ईश हैं, उन परब्रह्म **गणेश** की मैं वन्दना करता हूँ। **एक** शब्द प्रधानार्थक है और **दन्त** का बलवाचक है: अत: जिनका बल सबसे बढ़कर है, उन **एकदन्त** को मैं प्रणाम करता हूँ। **हे** दीनार्थवाचक और **रम्ब** पालक का वाचक है, अत एव दोनों का पालन करने वाले **हेरम्ब** को मैं नतेनमूर्ध्ना नमन करता हूँ। **वित्र** विपत्तिवाचक और **नायक** खण्डनार्थक है, इस प्रकार जो विपत्ति के विनाशक हैं, उन **विघ्ननायक** का मैं अभिनन्दन करता हूँ। **प्राचीन काल में विष्णु द्वारा दिये गये नैवेद्यों तथा पिता द्वारा समर्पित अनेक प्रकार के मिष्टान्नों के खाने से जिनका उदर लम्बा हो गया है, उन लम्बोदर की मैं वन्दना करता हूँ ।** जिनके कर्ण शूर्पाकार, विघ्न-निवारण के हेतु, सम्पत्तियों के प्रदाता और ज्ञानरूप हैं, उन **शूर्पकर्ण** को मैं शिरसा नमन करता हूँ। जिनके मस्तक पर मुनि द्वारा दिया गया विष्णु का प्रसाद रूप पुष्प विद्यमान है और जो गजेन्द्र के श्रीमुख से युक्त हैं, उन **गजवक्त्र** को मैं प्रणाम करता हूँ।

जो गुह अर्थात् **स्कन्द** से पहले जन्म लेकर शिव-भवन में आविर्भूत हुए हैं तथा समस्त देवगणों में जिनकी अग्रपूजा होती है, उन **गुहाग्रज** देवकी मैं वन्दना करता हूँ। दुर्गापरमेश्वरि ! अपने पुत्र श्रीगणेश के नामों से संयुक्त इस उत्तम नामाष्टक स्तोत्र को पहले वेद में देख लीजिए, तत्पश्चात् इसप्रकार क्रोध कीजिए। नाना अर्थो से संयुक्त एवं शुभकारक इस नामाष्टक स्तोत्र का तीनों संध्याओं के समय नित्य पाठ करता है, वह सुखी और सर्वत्र विजयी होता है। भक्त पाठक के पास से विघ्न उसी प्रकार दूर भाग जाते हैं, जैसे गरुड़ के समीप से साँप दूर भाग जाते हैं। श्रीगणेश्वर की कृपा से वह अवश्यमेव परम ज्ञानी हो जाता है, पुत्रार्थी को पुत्र तथा भार्या की कामना वाले साधक को उत्तम स्त्री मिल जाती है तथा महामूर्ख निश्चय ही विद्वान् और श्रेष्ठ कवि हो जाता है। यथा-

## ● गणेश-नामाष्टकस्तोत्रम्

**विष्णुरुवाच -**

**गणेशमेकदन्तं च हेरम्बं विघ्ननायकम् ।**
**लम्बोदरं शूर्पकर्णं गजवक्त्रं गुहाग्रजम् ॥**
**नामाष्टार्थं च पुत्रस्य शृणु मातर्हरप्रिये ।**
**स्तोत्राणां सारभूतं च सर्वविघ्नहरं परम् ॥**
**ज्ञानार्थवाचको गश्च णश्च निर्वाणवाचकः ।**
**तयोरीशं परं ब्रह्म गणेशं प्रणमाम्यहम् ॥**
**एकशब्दः प्रधानार्थो दन्तश्च बलवाचकः ।**
**बलं प्रधानं सर्वस्मादेकदन्तं नमाम्यहम् ॥**
**दीनार्थवाचको हेश्च रम्बः पालकवाचकः ।**
**दीनानां परिपालकं हेरम्बं प्रणमाम्यहम् ॥**
**विपत्तिवाचको विघ्नो नायकः खण्डनार्थकः ।**
**विपत्खण्डनकारकं नमामि विघ्ननायकम् ॥**

विष्णुदत्तैश्च नैवेद्यैर्यस्य लम्बोदरं पुरा ।
पित्रा दत्तैश्च विविधैर्वन्दे लम्बोदरं च तम् ॥
शूर्पाकारौ च यत्कर्णौ च विघ्नवारणकारणौ ।
सम्पदौ ज्ञानरूपौ च शूर्पकर्ण नमाम्यहम् ॥
विष्णुप्रसादपुष्पं च यन्मूर्ध्नि मुनिदत्तकम् ।
तद् गजेन्द्रवक्त्रयक्तं गजवक्त्रं नमाम्यहम् ॥
गुहस्याग्रे च जातोऽयमाविर्भूतो हरालये ।
वन्दे गुहाग्रजं देवं सर्वदेवाग्रपूजितम् ॥
एतन्नामाष्टकं दुर्गे नामभिः संयुतं परम् ।
पुत्रस्य पश्य वेदे च तदा कोपं तथा कुरु ॥
एतन्नामाष्टकं स्तोत्रं नानार्थसंयुतं शुभम् ।
त्रिसंध्यं यः पठेन्नित्यं स सुखी सर्वतो जयी ॥
ततो विघ्नाः पलायन्ते वैनतेयाद् यथोरगाः ।
गणेश्वरप्रसादेन महाज्ञानी भवेद् ध्रुवम् ॥
पुत्रार्थी लभते पुत्रं भार्यार्थी विपुलां स्त्रियम् ।
महाजडः कवीन्द्रश्च विद्यावांश्च भवेद् ध्रुवम् ॥

(ब्रह्मवैवर्तपुराण, गणपतिखण्ड ४४/८५-९८)

भगवती पार्वती को वेदोक्त वचनों से समझा-बुझाकर भगवान् विष्णु परशुराम से हितकारक और परिणाम में सुखदायक मेघ के समान गम्भीर वाणी में बोले- हे राम ! तुमने अकल्याणकर मार्गपर स्थित हो क्रोधवश श्रीगणेश का दाँत तोड़ डाला है, इससे तुम श्रुति के मतानुसार यथार्थ में अपराधी हो। अतः मेरे द्वारा बतलाये हुए स्तोत्र से देवताओं में श्रेष्ठ महागणपति का स्तवन करके पुनः काण्वशाखा में कहे हुए स्तोत्र द्वारा जगदम्बा श्रीदुर्गापरमेश्वरी की स्तुति करो-

नारायण उवाच

पार्वतीं बोधयित्वा तु विष्णूराममुवाचह ।
हितं सारं नीतिसारं परिणामसुखावहम् ॥

विष्णुरुवाच

रामत्वमधुनासत्यमपराधीश्रुतेर्मते ।
कोपात्कृत्वादन्तभङ्गंगणेशस्यस्थितोऽशिवे ॥

स्तोत्रेणैवमयोक्तेन स्तुत्वागणपतिं परम् ।
काण्वशाखोक्तविधिनास्तौहिदुर्गाञ्जगत्प्रसूम् ॥

श्रीकृष्णस्यपराशक्तिर्बुद्धिरूपा जगत्प्रभोः ।
अस्याञ्चतवरुष्टायां हताबुद्धिर्भविष्यति ॥

सर्वशक्तिस्वरूपेयमनयाशक्तिमज्जगत् ।
अनयाशक्तिमान्कृष्णोनिर्गुणः प्रकृतेः परः ॥

सृष्टिकर्त्तुंनशक्तश्चब्रह्मशक्त्याऽनयाविना ।
वयमस्यां प्रसूताश्च ब्रह्मविष्णुमहेश्वराः ॥

सुरसंघेऽसुरग्रस्तेकालेघोरतरेद्विज ।
तेजस्सुसर्वदेवानामाविर्भूता पुरासती ॥

कृष्णाज्ञयाऽसुरान्हत्वादत्त्वातेभ्यः पदन्ततः ।
दक्षपत्न्यां जनिं लेभे दक्षस्यतपसापुरा ॥

भार्य्याभूत्वाशङ्करस्य पुनः पत्युश्चनिन्दया ।
देहं त्यक्त्वा शैलपत्न्यां जनिं लेभे पुरासती ॥

शङ्करस्तपसालब्धो योगीन्द्राणां गुरोर्गुरुः ।
लब्धोगणपतिः पुत्रः कृष्णांशः कृष्णसेवया ॥

यं ध्यायस्येवनित्यं किं तं न जानासिबालक ।
स एवभगवान्कृष्णश्चांशेन गिरिजासुतः ॥

कृताञ्जलिर्नतोभूत्वा स्तौहिदुर्गोशिवप्रियाम् ।
शिवां शिवप्रदां शैवां शिवबीजां शिवेश्वरीम् ॥

शिवायाः स्तोत्रराजेन पुराशूलिकृतेनवै ।
त्रिपुरस्यवधे घोरे ब्रह्मणाप्रेरितेन च ॥

इत्युक्त्वाश्रीपदं शीघ्रं जगामश्रीनिकेतनम् ।
गतेहरौहरिं स्मृत्वा रामस्तां स्तोतुमुद्यतः ॥

स्तोत्रेण विष्णुदत्तेन सर्वविघ्नहरेणच ।
धर्मार्थकाममोक्षाणां कारणेन चनारद ॥

कृताञ्जलिपुटो भूत्वास्नात्वा गङ्गोदके शुभे ।
गुरुप्रणम्यभक्त्तेशं धृत्वाधौतेचवाससी ॥

आचम्यनत्वामूर्ध्नातां भक्तिनम्रात्मकन्धरः ।
पुलकाञ्चितसर्वाङ्गश्चानन्दाश्रुसमन्वितः ॥

(ब्रह्मवैवर्तपुराण, गणपतिखण्ड ४६/१-१७)

भगवती दुर्गा जगदीश्वर श्रीकृष्ण की परा शक्ति एवं बुद्धिस्वरूपा हैं। इनके क्रोधित हो जाने पर तुम्हारी बुद्धि भ्रष्ट हो जायगी । सर्वशक्तिस्वरूपा श्रीदुर्गा से ही जगत् शक्तिमान् हुआ है। जो प्रकृति से परे और निर्गुण हैं, वे श्रीकृष्ण भी इन्हीं से शक्तिमान हुए हैं। पराम्बा की शक्ति के बिना श्रीब्रह्माजी सृष्टि रचना नहीं कर सकते। हम-ब्रह्मा, विष्णु और महेश्वर इन्हीं से प्रादुभूर्त हुए हैं। प्राचीनकाल में जब असुरों ने देवसमुदाय को अपने अधीन कर लिया था, उस भयंकर समय में ये सती सम्पूर्ण देवताओं के तेज से आविर्भूत हुई थीं-

**भ्रुवौ च संध्ययोस्तेजः श्रवणावनिलस्य च ।**
**अन्येषां चैव देवानां सम्भवस्तेजसां शिवा ॥**
**ततः समस्तदेवानां तेजोराशिसमुद्भवाम् ।**
**तां विलोक्य मुदं प्रापुरमरा महिषार्दिताः ॥**

(श्रीदुर्गासप्तशती २/१८-१९)

श्रीकृष्ण की आज्ञा से जगदम्बा ने असुरों का वध करके देवताओं का पद उन्हें प्रदान किया। तत्पश्चात् दक्ष की तपस्या के कारण दक्षपत्नी के गर्भ से प्रादुर्भूत हुईं। उस जन्म में सती आशुतोष भगवान् शंकर की भार्या हुईं। कालान्तर में पति की निन्दा-श्रवण के कारण अपने शरीर का परित्याग कर परमेश्वरी ने शैलराज के घर उनकी पत्नी देवी मैना के गर्भ से जन्म धारण किया। तपस्या कर के योगीन्द्रों के परमगुरु आशुतोष शङ्कर को पति के रूप में प्राप्त किया और सर्वजगन्निवास श्रीकृष्ण की सेवा से श्रीकृष्ण के अंशभूत गणेश्वर को पुत्ररूप में प्राप्त किया । भगवान् श्रीकृष्ण ही अपने अंश से पार्वती-पुत्र गणेश के रूप में प्रकट हुए। भगवती दुर्गा मङ्गलस्वरूपा, कल्याणदायिनी, शिवपरायणा, मङ्गल की कारण और मङ्गल की अधीश्वरी हैं, उन शिवप्रिया दुर्गा की तुम **शिवा-स्तोत्रराज** के द्वारा स्तुति करो। त्रिपुरों के भयंकर वध के अवसर पर ब्रह्मा की प्रेरणा से आशुतोष भगवान् शङ्कर जी ने शिवा के स्तोत्रराज से श्रीदुर्गापरमेश्वरी का स्तवन किया।

परशुराम जी से भगवान् विष्णु इस प्रकार कहने के पश्चात् शीघ्र ही वैकुण्ठ को चले गये। भगवान् श्रीहरि के चले जाने पर परशुराम हरि स्मरण करके श्रीविष्णु द्वारा प्रदत्त **शिवा-स्तोत्रराज** से भगवती का स्तवन किया। **शिवा-स्तोत्रराज** सम्पूर्ण विघ्नों का नाशक तथा धर्म-अर्थ-काम-मोक्ष का कारण है, से दुर्गा की स्तुति

करने का संकल्प किये। भृगुनन्दन ने गङ्गा के शुभ जल में स्नान करके धुले हुए वस्त्र धारण किये। इसके बाद अञ्जलि बाँधकर भक्तेश्वर गुरु को प्रणाम किया और आचमन करके दुर्गा को सिर झुकाकर प्रणाम किया। उस समय भक्ति के कारण श्रीपरशुराम जी के कंधे झुके हुए थे, आँखों में आनन्दाश्रु छलक आये थे और सारा अङ्ग पुलकायमान हो रहा था। परशुराम जी बोले–हे परमेश्वरि ! गोलोकधाम में जब परिपूर्णतम श्रीकृष्ण सृष्टि–रचना के लिये उद्यत हुए, उस समय उनके शरीर से आपका प्रादुर्भाव हुआ था। माते ! आपकी कान्ति करोड़ों सूर्यों के समान थी। आप वस्त्र और अलंकारों से विभूषित थीं। देदीप्यमान शरीर पर अग्नि में तपाकर शुद्ध की हुई साड़ी धारण कर रखी थीं। तरुणावस्था थी। ललाट पर सिंदूर की बेंदी सुशोभित हो रही थी। मालती की मालाओं से मण्डित सुन्दर चोटी थी। बड़ा ही मनभावन स्वरूप था। मुखपर मन्द–मुस्कान थी। परमेश्वरि ! आपकी मूर्ति बड़ी सुन्दर थी, उसका प्रतिपादन करना अत्यन्त कठिन है। आप मुमुक्षुओं को मोक्ष प्रदान करने वाली तथा स्वयं महाविष्णु की विधि हो। आप सबको मोहित कर लेने वाली माया हो। आपको देखकर विश्वात्मा श्रीकृष्ण तत्क्षण मोहित हो गये। उस समय आप उनसे सम्भावित होकर सहसा मुस्कराती हुई भाग गईं। इसीलिए सत्पुरुष आपको **मूलप्रकृति** ईश्वरी श्रीराधा कहते हैं। उस समय अचानक श्रीकृष्ण ने आपको बुलाकर वीर्य का आधान किया। उससे एक महान् डिम्ब प्रादुर्भूत हुआ। उस डिम्ब से महाविराट् की प्राकट्यता हुई, जिसके रोमकूपों से सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड स्थित हैं। फिर श्रीराधा के श्रृङ्गारक्रम से आपका निःश्वास प्रकट हुआ। वह निःश्वास महावायु हुआ और वही विश्वको धारण करनेवाला विराट् के नाम से जाना गया। आपके पसीने से विश्वगोलक पिघलने के कारण विश्व का निवास स्थान

वह विराट् जल की राशि हो गया। उस समय आपने अपने को पाँच भागों में विभक्त करके पाँच मूर्ति धारण किया था। उनमें से परमात्मा श्रीकृष्ण की जो प्राणाधिष्ठात्री मूर्ति हैं, उन्हें भविष्यवेत्ता कृष्णप्राणाधिका **श्रीराधा** कहते हैं। जो मूर्ति वेदादि शास्त्रों की जननी तथा वेदाधिष्ठात्री है, उस पवित्रतमा मूर्ति को मनीषीगण **सावित्री** नाम से अभिहित करते हैं। वह शान्तरूपिणी ऐश्वर्य की अधिष्ठात्री है, उस सत्त्वस्वरूपिणी पवित्र मूर्ति को संतगण **लक्ष्मी** नाम से पुकारते हैं। अरे ! राग की अधिष्ठात्री देवी तथा सत्पुरुषों को उत्पन्न करने वाली मातेश्वरी को, जिनकी मूर्ति शुक्ल वर्ण की है, उन विद्या की अधिष्ठात्री देवी की मूर्ति को शास्त्रज्ञ **सरस्वती** कहते हैं–

**रागाधिष्ठातृदेवी या शुक्लमूर्तिस्सतांप्रसूः ।**
**सरस्वतीं तां शास्त्रज्ञां शास्त्रज्ञाः प्रवदन्त्यहो ॥**
**बुद्धिर्विद्यासर्वशक्तेर्यामूर्तिरधिदेवता ।**
**सर्वमङ्गलमङ्गल्या सर्वमङ्गलरूपिणी ॥**
**सर्वमङ्गलबीजस्य शिवस्य निलयेऽधुना ॥**
**शिवे शिवा स्वरूपात्वं लक्ष्मीर्नारायणान्तिके ।**
**सरस्वती च सावित्री वेदसूर्ब्रह्मणः प्रिया ॥**

(ब्रह्मवैवर्तपुराण, गणपतिखण्ड ४५/३०–३३)

हे मातेश्वरि ! आप इस समय आशुतोष भगवान् शिव के भवन कैलाश में विराजमान हो तथा बुद्धि, विद्या आदि समस्त शक्तिओं की अधिदेवता, सम्पूर्ण मङ्गलों की मङ्गलस्थान, सर्वमङ्गलरूपिणी और सम्पूर्ण मङ्गलों की कारण हो, हे मातेश्वरि! आप शिव के समीप **शिवा** या **पार्वती**, नारायण के सन्निकट **श्रीलक्ष्मी** और ब्रह्मा की प्रिया वेदजननी **सावित्री** एवं **सरस्वती** हो। परिपूर्णतम एवं परमानन्दस्वरूप रासेश्वर श्रीकृष्णकी तुम

परमानन्दरूपिणी **श्रीराधा** हो–

**राधारासे श्वरस्यैव परिपूर्णतमस्य च ।**
**परमानन्दरूपस्य परमानन्दरूपिणी ॥**
**त्वत्कलांशांशकलया देवानामपि योषितः ॥**
**त्वंविद्यायोषितः सर्वास्सर्वेषां वीजरूपिणी ।**
**छायासूर्य्यस्य चन्द्रस्य रोहिणीसर्वमोहिनी ॥**

(ब्रह्मवैवर्तपुराण, गणपतिखण्ड ४५/३४–३६)

देवाङ्गनाएँ भी तुम्हारे कलांश की अंशकला से उत्पन्न हुई हैं। समस्त स्त्रीयाँ आपकी विद्यास्वरूपा हैं और आप सबकी कारणरूपा हो। जगदम्बिके ! सूर्यकी पत्नी **छाया**, चन्द्रमा की भार्या सर्वमोहिनी **रोहिणी**, इन्द्र की पत्नी **शची**, कामदेव की पत्नी ऐश्वर्यशालिनी **रति**, वरुण की पत्नी **वरुणानी**, वायु की पत्नी प्राणप्रिया **स्त्री**, अग्निकी प्रिया **स्वाहा**, कुवेर की सुन्दरी **भार्या**, यम की पत्नी **सुशीला**, नैऋत की **जाया कैटभी**, ईशान की पत्नी **शशिकला**, मनुकी पत्नी **शतरूपा**, कर्दम की भार्या **देवहूति**, वसिष्ठ की पत्नी **अरुन्धती**, कश्यप की पत्नी देवमाता **अदिति**, मुनि अगस्त्य की पत्नी **लोपामुद्रा**, गौतम की पत्नी **अहल्या**, सबकी आधार रूपा **वसुन्धरा**, **गङ्गा**, **तुलसी** एवं भूभाग की सम्पूर्ण श्रेष्ठ **सरिताएँ**–उक्त सभी तथा इनके अतिरिक्त जो अन्य स्त्रियाँ हैं, वे सभी आपकी कला से उत्पन्न हुई हैं–

**विद्याः समस्तास्तव देवि भेदाः**
**स्त्रियः समस्ताः सकला जगत्सु।**
**त्वयैकया पूरितमम्बयैतत्**
**का ते स्तुतिः स्तव्यपरा परोक्तिः॥**

(श्रीदुर्गासप्तसती ११/६)

तुम मनुष्यों के घर में गृहलक्ष्मी, राजाओं के भवनों में राजलक्ष्मी, तपस्वियों की तपस्या और ब्राह्मणों की गायत्री हो-

**गृहलक्ष्मीर्गृहे नृणां राजलक्ष्मीश्च राजसु ।**
**तपस्विनां तपस्यात्वं गायत्री ब्राह्मणस्यच ॥**

(ब्रह्मवैवर्तपुराण, गणपतिखण्ड ४५/४२)

**या श्रीः स्वयं सुकृतिनां भववनेष्वलक्ष्मीः**
**पापात्मनां कृतधियां हृदयेषु बुद्धिः ।**
**श्रद्धा सतां कुलजनप्रभवस्य लज्जा**
**तां त्वां नताः स्म परिपालय देवि विश्वम् ॥**

(श्रीदुर्गासप्तसती ४/५)

तुम सत्पुरुषों के लिये सत्त्वस्वरूपा और दुष्टों के लिये कलहकी अङ्कुर हो। निर्गुण की **ज्योति**, सगुण की **शक्ति**, सूर्य में **प्रभा**, अग्नि में **दाहकता-शक्ति**, जल में **शीतलता**, चन्द्रमा में **शोभा**, भूमि में **गन्ध** और आकाश में **शब्द**, तुम्हीं हो। भूख-प्यास आदि तथा प्राणियों की समस्त शक्ति तुम्हीं हो। सबकी उत्पत्ति की कारण, साररूपा, स्मृति, मेधा, बुद्धि या विद्वानों की ज्ञानशक्ति तुम्हीं हो। जगन्निवास श्रीकृष्णने आशुतोष शिवजी को कृपापूर्वक सम्पूर्ण ज्ञानकी प्रसविनी जो शुभ विद्या प्रदान की थी, वह तुम्हीं हो, उसी विद्या से भगवान् शिवजी मृत्युञ्जय हुए हैं। ब्रह्मा, विष्णु और महेश की सृष्टि, पालन और संहार करने वाली त्रिविध शक्तियो के रूप में तुम्हीं विद्यमान हो, अत एव तुम्हें प्रणाम है। जब मधु-कैटभ के भय से डरकर ब्रह्मा काँप उठे थे, उस समय जिनकी स्तुति करके वे भयमुक्त हुए थे, उन महादेवी को मैं सिर झुकाकर नमन करता हूँ। मधु- कैटभ के युद्ध में जगत् के रक्षक भगवान् विष्णु जिन परमेश्वरी का स्तवन कर के शक्तिमान् हुए थे, उन

दुर्गापरमेश्वरी को मैं प्रणाम करता हूँ। त्रिपुर के महायुद्ध में रथसहित आशुतोष शिवजी के गिर जाने पर सभी देवताओं ने जिनका स्तवन किया था, उन महादुर्गा को मैं प्रणाम करता हूँ। जिनका स्तवन करके वृषरूपधारी विष्णु के द्वारा उठाये गये स्वयं शिव ने त्रिपुर का संहार किया था, उन महादुर्गा को मैं प्रणाम करता हूँ। जिनकी आज्ञा से सदा वायुदेव बहते हैं, सूर्यदेव तपते हैं, इन्द्रदेव वर्षा करते हैं और अग्निदेव जलाते हैं उन महादुर्गा को मैं शिरसा प्रणति निवेदित करता हूँ। जिनकी आज्ञा से काल सदा वेगपूर्वक चक्कर काटता रहता है और मृत्यु जीव-समुदाय में विचरती रहती है, उन दुर्गा को मैं नमस्कार करता हूँ। जिनके आदेश से सृष्टिकर्ता ब्रह्मा सृष्टि की रचना करते हैं, पालनकर्ता विष्णु रक्षा करते हैं और संहर्ता शङ्कर समय आने पर संहार करते हैं, उन दुर्गा को मैं प्रणाम करता हूँ। जिनके बिना स्वयं भगवान् श्रीकृष्ण, जो ज्योतिः स्वरूप एवं निर्गुण हैं, सृष्टि-रचना करने में समर्थ नहीं होते, उन देवी को मेरा प्रणाम है। जगदीश्वरी ! रक्षा करो, रक्षा करो, रक्षा करो, मेरे अपराध को क्षमा कर दो। बच्चे के अपराध करने से माता कुपित नहीं होती।

परशुरामजी इतना कहकर श्रीदुर्गापरमेश्वरी को प्रणाम करके रोने लगे। परशुराम जी की स्तुति से दुर्गा प्रसन्न हो गयीं और शीघ्र ही उन्हें अभय का वरदान देती हुई बोलीं- 'हे वत्स ! तुम अमर हो जाओ, बेटा! अब शान्ति धारण करो, शिवजी की कृपा से सदा सर्वत्र तुम्हारी विजय हो, सर्वान्तरात्मा भगवान् श्रीहरी तुम पर प्रसन्न रहें, श्रीकृष्ण में और कल्याणदाता गुरुदेव शिव में तुम्हारी सुदृढ़ भक्ति बनी रहे।

जिसकी इष्टदेव तथा गुरु में शाश्वती भक्ति होती है, उसपर यदि सभी देवता कुपित हो जायँ तो भी उसका अनिष्ट नहीं सकते।

तुम तो श्रीकृष्ण के भक्त और आशुतोष शिव के शिष्य हो तथा मुझ गुरुपत्नी की स्तुति कर रहे हो, इस लिये किसकी शक्ति है जो तुम्हें मार सके। अरे! जो अन्यान्य देवताओं के भक्त हैं यद्वा उनकी भक्ति न करके निरंकुश ही हैं, तथापि विश्वात्मा श्रीकृष्ण के भक्त हैं तो उनका कहीं भी अमङ्गल नहीं हो सकता। रेणुकानन्दवर्धन भार्गव ! भला, जिन भाग्यवानों पर बलवान् चन्द्रमा प्रसन्न हैं तो दुर्बल तारागण रुष्ट होकर उनका क्या बिगाड़ सकते हैं। सभामें महान् आत्मबल से सम्पन्न सुखी नरेश जिसपर संतुष्ट है, उसका दुर्बल भृत्यवर्ग कुपित होकर क्या कर लेगें ? इस प्रकार कहकर भगवती पार्वती हर्षित हो परशुराम को शुभाशीर्वाद देकर अन्तःपुर में चली गयीं, तब तुरंत हरि-नाम का घोष गूंज उठा-

**अहोनकृष्णभक्तानामशुभं विद्यते क्वचित् ।**
**अन्यदेवेषु ये भक्तानभक्ता वा निरङ्कुशाः ॥**
**चन्द्रमाबलवांस्तुष्टो येषां भाग्यवतां भृगो ।**
**तेषां तारागणारुष्टाः किं कुर्वंति च दुर्बलाः ॥**
**यस्मै तुष्टपालयति नरदेवो महान्सुखी ।**
**तस्य किं वा करिष्यन्ति रुष्टा भृत्याश्चदुर्बलाः ॥**
**इत्युक्ता पार्वती तुष्टा दत्त्वा रामाय चाशिषम् ।**
**जगमान्तः पुरं तूर्ण हर्षशब्दो बभूवह ॥**

(ब्रह्मवैवर्तपुराण, गणपतिखण्ड ४५/६३-६६)

जो मनुष्य **काण्वशाखोक्त स्तोत्र** का पूजा के समय, यात्रा के अवसरपर यद्वा प्रातःकाल नित्यपाठ करता है, वह अवश्य ही अपनी अभीष्ट वस्तु प्राप्त कर लेता है। इसके पाठ से पुत्रार्थी को पुत्र, कन्यार्थी को कन्या, विद्यार्थीको विद्या, प्रजार्थी को प्रजा, राज्यभ्रष्ट को राज्य और धनहीन को धन की प्राप्ति होती है। जिनके ऊपर गुरु, देवता, राजा अथवा बन्धु-बान्धव कुपित हो गये हों,

उसके लिये **काण्वशाखोक्त स्तोत्र** की कृपा से प्रसन्न होकर वरदाता हो जाते हैं। **जिसे चोर-डाकुओं ने घेर लिया हो, साँप ने डस लिया हो, जो भयानक शत्रु के चंगुल में फँस गया हो अथवा व्याधिग्रस्त हो, वह काण्वशाखोक्त स्तोत्र के स्मरण मात्र से मुक्त हो जाता है।** राजद्वार पर, श्मशान में, कारागार में और बन्धन में पड़ा हुआ तथा अगाध जलराशि में डूबता हुआ मनुष्य इस स्तोत्र के प्रभाव से मुक्त हो जाता है। स्वामिभेद, पुत्र भेद तथा भयंकर मित्र भेद के अवसरपर **काण्वशाखोक्त स्तोत्र** के स्मरणमात्र से निश्चय ही अभीष्टार्थ की प्राप्ति होती है। जो स्त्री वर्ष पर्यन्त भक्तिपूर्वक श्रीदुर्गापरमेश्वरी की भलीभाँति पूजा-अर्चना करके हविष्यान्न खाकर **काण्वशाखोक्त स्तोत्रराज** को सुनती है, वह महावन्ध्या हो तो भी प्रसववाली हो जाती है। उसे ज्ञानी एवं चिरजीवी दिव्य पुत्र प्राप्त होता है। छः महीने तक **काण्वशाखोक्त स्तोत्रराज** का श्रवण करने से दुर्भगा सौभाग्यवती हो जाती है। जो काकवन्ध्या और मृतवत्सा नारी भक्ति पूर्वक नौ मासतक **काण्वशाखोक्त स्तोत्रराज** को सुनती है, वह निश्चय ही पुत्र पाती है। जो कन्या की माता तो है परंतु पुत्र से हीन है, वह यदि पाँच महीने तक कलशपर श्रीदुर्गापरमेश्वरी की यथाविधि पूजा करके **काण्वशाखोक्त स्तोत्रराज** को श्रवण करती है तो उसे अवश्य ही पुत्र की प्राप्ति होती है।

श्रीपरशुराम ने हर्षमग्न-चित्तसे श्रीदुर्गापरमेश्वरी की स्तुति करके पुनः श्रीहरि द्वारा बतलाये गये स्तोत्रसे **गणेश्वर-स्तवन** किया-

**स्तुत्वा तां परशुरामो हर्षप्रफुल्लमानसः ।**
**स्तोत्रेण हरिणोक्तेन सतुष्टावगणाधिपम् ॥**

(ब्रह्मवैवर्तपुराण, गणपतिखण्ड ४६/१)

तत्पश्चात् परशुराम ने विविध भाँति के नैवेद्य, धूप, दीप, गन्ध और तुलसीपत्र के अतिरिक्त अन्य नाना प्रकार के पुष्पों से भक्ति पूर्वक श्रीगणेश जी की पूजा किया। परशुरामने भक्तिभावपूर्वक भाई श्रीगणेशजी का सम्यक् प्रकार से पूजन करके गुरुपत्नी भगवती पार्वती और गुरुदेव आशुतोष शिव को प्रणाम किया तथा आशुतोष भगवान् शिव की आज्ञा ले परशुराम जी कैलाश से जाने को उद्यत हुए।

भगवान् नारायण से देवर्षि नारदजी ने पूछा– प्रभो! परशुरामने जब विविध नैवेद्यों तथा पुष्पोंद्वारा भगवान् श्रीगणेशजी की पूजा–अर्चना सम्पन्न की थी तो उस समय उन्होंने तुलसी को छोड़ क्यों दिया ? पाप नाशिनी मनोहारिणी तुलसी सम्पूर्ण पुष्पों में श्रेष्ठ हैं, तथापि श्रीगणेशजी तुलसी को क्यों नहीं ग्रहण करते ?–

**पूजां भगवतश्चक्रे रामो गणपतेर्यदा ।**
**नैवेद्यैर्विविधैः पुष्पैस्तुलसीं च विना कथम् ।।**

(ब्रह्मवैवर्तपुराण, गणपतिखण्ड ४६/४)

श्रीनारायण बोले–देवर्षि नारद ! ब्रह्मकल्प की एक घटना घटित हुई थी, जो अत्यन्त गुह्य एवं मनोहारिणी है। उस प्राचीन ऐतिहासिक तथ्य को मैं आपको बताता हूँ। प्राचीन समय की बात है। कि नवयौवन–सम्पन्ना श्रीतुलसीदेवी नारायणपरायण हो तपस्या के निमित्त तीर्थों में भ्रमण करती हुई गङ्गा के तटपर पहुंचीं। वहाँ उन्होंने श्रीगणेशजी को देखा, जो परम सुन्दर नवयुवक थे, वे परम् सुन्दर एवं शुद्ध पीताम्बर धारण किये हुए थे, जिनका सम्पूर्ण शरीर में चन्दन के लेप से सुशोभित एवं सुगन्धित हो रहा था, वे बहुमुल्य रत्नों के आभूषणों से आभूषित थे, जिनके मन को सुन्दरता आकर्षित नहीं कर सकती थी, वे कामनाओं से रहित, जितेन्द्रियों

में सर्वश्रेष्ठ और योगीन्द्रों के परमगुरु हैं तथा मन्द-मन्द मुस्कान के साथ जन्म, मृत्यु और जरा का नाश करने वाले जगन्निवास श्रीकृष्ण के चरणारविन्दों का ध्यान कर रहे थे। श्रीगणेश जी को देखते ही तुलसी का मन गणेश की ओर आकर्षित हो गया और तुलसीजी उनसे लम्बोदर तथा गजमुख होने का कारण पूछकर गणेश जी का उपहास करने लगीं। ध्यान-भङ्ग होने पर श्रीगणेशजी ने पूछा-वत्से! तुम कौन हो ? किसकी कन्या हो ? यहाँ तुम्हारे आने का प्रयोजन क्या है ? माता ! यह मुझे बताओ क्योंकि तपस्वियों का ध्यान भङ्ग करना सदा पाप जनक एवं अमङ्गलकारी होता है। शुभे ! विश्वात्मा श्रीकृष्ण आपका कल्याण करें, कृपानिधि विघ्न का विनाश करें और मेरे ध्यान-भङ्ग से उत्पन्न हुआ दोष तुम्हारे लिये अमङ्गलकारी न हो। श्रीगणेश जी के पूछने पर तुलसी ने कहा- प्रभो ! मैं धर्मात्मज की नवयुवती कन्या हूँ और तपस्या में संलग्न हूँ। मेरी यह तपस्या पति-प्राप्ति की कामना से है। अत एव आप मेरे स्वामी हो जाइये। तुलसी की बात सुनकर बुद्धिनिधि श्रीगणेशजी श्रीहरिका स्मरण करते हुए विदुषी तुलसी से मधुरवाणी में बोले- हे माता ! विवाह करना बड़ा भयङ्कर होता है, इसलिए विवाह करने की मेरी इच्छा नहीं है, क्योंकि विवाह दुःखदायी होता है, विवाह से सुख कभी नहीं मिलता यह हरि-भक्ति में व्यवधान का कारण, तपस्या के नाश का कारण, मोक्ष द्वार का किवाड़, भव-बन्धन की रस्सी, गर्भवास का कारक, सदा तत्त्वज्ञान का छेदक और संशयों का उद्गम स्थान है। इसलिये महाभागे! मेरी ओर से मन लौटा लो और किसी अन्य पति की खोज करो। श्रीगणेश के इस प्रकार के प्रतिकूल वचन सुनकर तुलसीजी कुपित हो गईं तथा साध्वी तुलसी ने श्रीगणेशजी को शाप देते हुए बोलीं- तुम्हारा विवाह होगा। यह सुनकर शिव-तनय सुरश्रेष्ठ श्रीगणेशजी ने भी तुलसीजी को शाप

दिया- देवि ! तुम निस्संदेह असुर द्वारा ग्रस्त होओगी, ततः परम महापुरुषों के शाप से तुम वृक्ष हो जाओगी, हे देवर्षि नारद ! श्रीगणेशजी तुलसी जी को इस प्रकार से शाप देकर चुप हो गये-

**इत्याकर्ण्य सुरश्रेष्ठस्तां शशाप शिवात्मजः ।**
**देवि त्वमसुरग्रस्ता भविष्यसि न संशयः ॥**
**तत्पश्चान्महतां शापाद्वृक्षस्त्वं भवितेतिच ।**
**महातपस्वीत्युक्त्वा तां विरराम च नारद ॥**

(ब्रह्मवैवर्तपुराण, गणपतिखण्ड ४६/२९-३०)

गणेशजी के शाप को सुनकर तुलसी ने सुरश्रेष्ठ श्रीगणेशजी की स्तुति की। स्तुति से प्रसन्न होकर श्रीगणेश ने तुलसी से कहा-मनोरमे ! तुम पुष्पोंकी सारभूता होओगी और कलांश से स्वयं नारायणकी प्रिया बनोगी, महाभागे ! यद्यपि सभी देवता तुमसे प्रेम करेंगे, परन्तु श्रीकृष्ण के लिये तुम विशेष प्रिया होओगी । तुम्हारे द्वारा की गयी पूजा मनुष्यों के लिये मुक्तिदायिनी होगी तथापि तुम मेरे लिये सर्वदा त्याज्य रहोगी-

**पुष्पाणां सारभूता त्वं भविष्यसि मनोरमे ।**
**कलांशेन महाभागे स्वयं नारायणप्रिया ॥**
**प्रिया त्वं सर्वदेवानां श्रीकृष्णस्यविशेषतः ।**
**पूजा विमुक्तिदानृणां मया भोग्या न नित्यशः ॥**

(ब्रह्मवैवर्तपुराण, गणपतिखण्ड ४६/३२-३३)

तुलसी से इसप्रकार कहकर सुरश्रेष्ठ गणेश पुनः तप में लग गये। श्रीगणेशजी श्रीहरि की आराधना में व्यग्र होकर बदरीनाथ के सन्निकट गये। तुलसी देवी दुःखित हृदय से पुष्कर में जा पहुँची और निराहार रहकर वहाँ चिरकाल तक तपस्या में संलग्न हो गयीं। तदनन्तर मुनिवर के तथा श्रीगणेश के शाप से वह दीर्घकाल

शङ्खचूड की प्रिय पत्नी बनी रहीं । कालान्तर में असुरराज शङ्खचूड भगवान् शङ्करजी के त्रिशूल से मारा गया, ततःपरम् नारायणप्रिया तुलसी कलांश से वृक्षभाव को प्राप्त हो गयीं। यह वृत्तान्त तत्त्वरूप तथा मोक्ष प्रदान करने वाला है।

तत्पश्चात् महाभाग श्रीपरशुराम श्रीगणेशजी का यथाविधि पूजन कर तथा आशुतोष शङ्करजी और भगवती माता पार्वती को प्रणाम कर तपस्या के लिये चले गये। श्रीगणेश समस्त सुरश्रेष्ठों तथा मुनिवरों से वन्दित एवं पूजित होकर में शिव-पार्वती के समिप विराजमान हो गये। गणपतिखण्ड को जो भक्त मनुष्य ध्यानपूर्वक सुनता है, उसे राजसूय यज्ञ के फल की प्राप्ति होती है। पुत्रहीन मनुष्य इसके पाठ जनित फल से श्रीगणेश की कृपा से धीर, वीर, धनी, गुणी, चिरंजीवी, यशस्वी, पुत्रवान्, विद्वान्, श्रेष्ठ कवि, जितेन्द्रिय, विविध सम्पदाओं का दाता, परम पवित्र, सदाचारी, प्रशंसनीय, श्रीविष्णुभक्त, अहिंसक, दयालु और तत्त्वज्ञानविशारद पुत्र को प्राप्त करता है। वन्ध्या स्त्री वस्त्र, अलंकार और चन्दन द्वारा भक्ति पूर्वक श्रीगणेश की यथाविधि पूजा करके और गणपतिजी की कथा को सुनकर पुत्र को जन्म देती है-

**भक्त्यागणेशं संपूज्य वस्त्रालङ्कारचन्दनैः ।**
**श्रुत्वागणपतेः खण्डं महाबन्ध्या प्रसूयते ॥**
**मृतवत्सा काकवन्ध्या ब्रह्मन्पुत्रं लभेद्ध्रुवम् ।**
**अदूष्य दूषणपरा शुद्धा चैव लभेत्सुतम् ॥**
**संपूर्ण ब्रह्मवैवर्त श्रुत्वा यल्लभते फलम् ।**
**तत्फलं लभते मर्त्यः श्रुत्वेदं खण्डमुत्तमम् ॥**

(ब्रह्मवैवर्तपुराण, गणपतिखण्ड ४६/४५-४७)

जो भक्त मनुष्य नियमपरायण हो मन में जिस किसी भी

कामना को लेकर इसे सुनता या पढ़ता है, सुरश्रेष्ठ गणेश्वर उसकी सभी कामनाएँ पूर्ण कर देते हैं-

**वाञ्छां कृत्वा तु मनसि शृणोति परमास्थितः ।**
**तस्मै ददाति सर्वेष्टं सुरश्रेष्ठो गणेश्वरः ॥**

(ब्रह्मवैवर्तपुराण, गणपतिखण्ड ४६/४८)

## भगवान् श्रीहरि के विविध अवतार

भक्तवत्सल भगवान् के जितने भी अवतार हैं, सभी शाश्वत सुख के समुद्र हैं। सभी कल्याणों के हेतु मीन, वराह, कच्छप, नरसिंह तथा वामन आदि भगवान् के चौबीस अवतारों के चरणारविन्दों में साष्टाङ्ग प्रणाम करता हूँ। परशुराम, रघुवीर श्रीराम एवं श्रीकृष्ण आदि सभी अवतारों की पवित्र कीर्ति संसार को पवित्र करने वाली है। बुद्ध, कल्कि, व्यास, पृथु, हरि, हंस, मन्वन्तर, यज्ञ, ऋषभ, हयग्रीव, ध्रुववरदायी श्रीहरि, धन्वन्तरि, नर-नारायण, दत्तात्रेय, कपिलदेव तथा सनक-सनन्दन-सनातन और सनत्कुमार सभी भक्तों पर कृपा करें। भगवान् श्रीहरि के चौबीसों अवतारों के रूप एवं उनकी लीलाएँ अत्यन्त सुन्दर हैं। श्रीहरि के चौबीस अवतार-

**मत्स्यः कूर्मो वराहो नृहरिबटुपरश्वायुधा रामकृष्णौ**
**बुद्धः कल्की कुमारर्षभमनुपृथवो मोहिनी व्यासयज्ञौ ।**
**दत्तो देवर्षिनारायणकपिलहयग्रीववैद्येशहंसा**
**विष्णोरंशा जयन्ति ध्रुववरदगजत्राणत्रिभ्यां सहैते ॥**

(श्रीमद्भागवत अन्वितार्थ प्रकाशिका टीका १/३/२६, पृ. सं. ५८)

भगवान् के जितने भी अवतार हैं, उनके नाम, रूप, लीला आदि अनन्त तथा अवर्णनीय हैं। जीवों का उद्धार करने के लिये अवतार लेकर भगवान् लीलाओं का विस्तार करते हैं। जिस भक्त का मन भगवान् के जिस रूप में लग जाता है, उसी रूप में रम

जाता है और उसी रूप से सम्बन्धित प्रेम-भाव जग जाता है। भगवान् के सभी रूप अनन्त सुख के निधि हैं, अतः प्रेमभाव की तरंगों का आर-पार भला कौन पा सकता है! सभी अवतार नित्य हैं और ध्यान करते ही हृदय को प्रेमानन्द से प्रकाशित कर देते हैं। परिणामस्वरूप भक्तसाधक ऐसा सुखी हो जाता है, जैसे दरिद्र को बहुमूल्य धन मिल गया हो। भक्तों को इस प्रकार का दुर्लभ अनुभव तभी होता है, जब वह गम्भीर रहस्यों को समझे । जिस प्रकार केशों की कुटिलता दूषण न होकर भूषण है, उसी प्रकार मीन, वाराह आदि भगवान् के अवतार भी भक्तों को सुख देने वाले हैं। भगवान् के सभी चौबीस अवतार नित्य एवं पूर्ण हैं।

भगवान् के बहुत-से दिव्य अवतार हुए हैं, जो देवोचित गुणों से सम्पन्न थे। ब्रह्मवादी मुनियों ने पुराणों में उनका गान किया है। भगवान् के इन अवतारों का वर्णन करने में देवता भी चकरा जाते हैं- इस विषय में पुराण ही प्रमाण है, जिसका वैदिक श्रुतियों द्वारा समर्थन होता है। सम्पूर्ण जगत् के गुरु तथा कीर्तन करने-योग्य सर्वशक्तिमान भगवान् के अवतारों का वर्णन यहाँ पर संक्षेप से ही किया गया है। अनुपम शक्तिशाली भगवान् विष्णु के अवतारों की बारम्बार चर्चा करने से पितरों को प्रसन्नता होती है। जो हाथ जोड़कर आदर-पूर्वक इन अवतार-कथाओं को सुनता है, उसके पितरों को भी अक्षय तृप्ति प्राप्त होती है। जो मनुष्य योगेश्वर भगवान् श्रीहरि की योगमाया द्वारा प्रकट हुए अवतारों की इन लीला-कथाओं को सुनता है, वह सब पापों से मुक्त हो जाता है तथा भगवान् की कृपा से शीघ्र ही उसे ऋद्धि, समृद्धि एवं प्रचुर भोग-सबकी प्राप्ति हो जाती है-

एते चान्ये च बहवो दिव्या देवगुणैर्युताः ।
प्रादुर्भावाः पुराणेषु गीयन्ते ब्रह्मवादिभिः ॥

यत्र देवाश्च मुह्यन्ति प्रादुर्भावानुकीर्तने ।
पुराणं वर्तते यत्र वेदश्रुतिसमाहितम् ॥

एतदुद्देशमात्रेण प्रादुर्भावानुकीर्तनम् ।
कीर्तितं कीर्तनीयस्य सर्वलोकगुरोः प्रभोः ॥

प्रीयन्ते पितरस्तस्य प्रादुर्भावानुकीर्तनात् ।
विष्णोरतुलवीर्यस्य यः शृणोति कृताञ्जलिः ॥

एतास्तु योगेश्वरयोगमायाः
श्रुत्वा नरो मुच्यति सर्वपापैः ।
ऋद्धिं समृद्धिं विपुलांश्च भोगान्
प्राप्नोति सर्वं भगवत्प्रसादात्॥
(हरिवंशपुराण, हरिवंशपर्व ४१/१७०-१७४)

निश्चयपूर्वक कोई आचार्य यह नहीं कह सकता कि अमुक अवतार का अमुक ही कारण है। एक ही अवतार के अनेक कारण कहे जाते हैं, फिर भी कोई यह नहीं कह सकता कि बस यही कारण इस अवतार के हैं, अन्य नहीं। भक्तवत्सल भगवान् श्रीरामजी का ही अवतार ले लीजिये। इसका हेतु क्या कहेंगे? मनुशतरूपा-तप, या भानुप्रताप-रावण का उद्धार, या सुर-विप्र-संत की रक्षा? फिर ये सभी कारण हैं या नहीं कौन जानता है? ग्रन्थान्तरों में इस अवतार के लिये श्रीकिशोरीजी की प्रार्थना भी पायी जाती है। अत एव यह कोई नहीं कह सकता कि बस यही कारण है। **यही और ऐसा ही भगवदवतार का कारण है** यह इसलिये नहीं कहा जा सकता कि सामान्यतः जो कुछ कारण

अवतार का देख पड़ता है उससे कुछ विलक्षण ही कारण तब मालूम पड़ने लगता है जब अवतार लेकर भगवान् लीला करने लगते हैं। उस समय कहना तथा मानना पड़ता है कि अवतार का जो कारण अवतार से पहले कहा गया वह गौण था और जो लीला देखने से मालूम पड़ा वह अनुमानतः मुख्य है। शंका हो सकती है कि तब 'मुख्य कारण ही बतलाकर अवतार क्यों नहीं होता, गौण ही क्यों विख्यात किया जाता है?', इसका उत्तर एक तो इस प्रकार हो सकता है कि **परोक्षवादो ऋषयः परोक्षो हि मम प्रियः** (श्रीमद्भागवत) इस अपनी परोक्षप्रियता के कारण भगवान् अपने अवतार के मुख्य प्रयोजन को छिपाते हैं। दूसरे, यह कि अवतार के जिन कारणों में तात्कालिक जगत्-हित या किसी एक प्रधान भक्त का हित समाया रहता है उन्हें गौण कह सकते हैं तथा वही विख्यात भी किये जाते हैं। और जिनसे अनन्तकाल के लिये सर्वसाधारण जगत् का हित होता रहता है, उन्हें मुख्य कह सकते हैं और उन मुख्य कारणों का गोपनियता कार्यसमाप्ति तक इसलिये रहती है कि जितनी सुविधा और उत्तमता गोपनियता में रहती है उतनी सर्वसाधारण में प्रकट कर देने से नहीं होती- **अवतारा ह्यसंख्येया हरेः सत्त्वनिधेर्द्विजाः** (श्रीमद्भागवत) के अनुसार हरि के अवतारों का अन्त तो लग ही नहीं सकता, अतः भगवत् कृपा से वेदादि शास्त्रों में प्रतिपादित परमप्रसिद्ध चौबीस अवतारों का संक्षिप्त वर्णन करने का प्रयास किया है। अवतार-हेतु-प्रसङ्ग में कविकुल-कैरवकलापकलाधर पुज्यपाद श्रीगोस्वामी जी महाराज ने अपने श्रीरामचरितमानस में कहा है-

**राम अतर्क्य बुद्धि मन बानी ।**
**मत हमार अस सुनहि सयानी ॥**

**तदपि संत मुनि बेद पुराना ।**
**जस कछु कहहिं स्वमति अनुमाना ॥**
**तस मैं सुमुखि सुनावौं तोही ।**
**समुझि परै जस कारन मोही ॥**

श्रीरामचन्द्र जी बुद्धि, मन और वाणी तीनों से अतर्क्य हैं। हे सयानी! सुनो। यह हमारा मत है। तो भी सन्त, मुनि, वेद और पुराण अपनी–अपनी बुद्धि के अनुसार जैसा कुछ कहते हैं, और जैसा कुछ कारण मुझे समझ पड़ता है, हे सुमुखि ! मैं तुमको वैसा सुनाता हूँ ।

**जब जब होइ धरम कै हानी ।**
**बाढ़हिं असुर अधम अभिमानी ॥**
**करहिं अनीति जाइ नहिं बरनी ।**
**सीदहिं बिप्र धेनु सुर धरनी ॥**
**तब तब प्रभु धरि बिबिध सरीरा ।**
**हरहिं कृपानिधि सज्जन पीरा ॥**

जब–जब धर्म की हानि होती है। नीच अधर्मी अभिमानी असुर बढ़ते हैं और ऐसा करते हैं कि जो वर्णन नहीं किया जा सकता तथा ब्राह्मण, गौ, देवता और पृथ्वी पीड़ित होते हैं तब दयासागर प्रभु तरह–तरह के शरीर धरकर सज्जनों की पीड़ा हरते हैं।

**असुर मारि थापहिं सुरन्ह राखहिं निज श्रुति सेतु ।**
**जग बिस्तारहिं बिसद जस रामजन्म कर हेतु ॥**
(श्रीमद्रामचरितमानस १/१२१/१–८)

असुरोंको मारकर देवताओं को स्थापित करते, अपने वेदों

की मर्यादा रखते और जगत् में अपने निर्मल उज्ज्वल यश को फैलाते हैं। - यह श्रीरामजन्म का हेतु है।

**सोइ जस गाइ भगत भव तरहीं ।**
**कृपासिंधु जनहित तनु धरहीं ॥**
**रामजनम के हेतु अनेका ।**
**परम बिचित्र एक तें एका ॥**

वही यश गा-गाकर भक्त भवसागर पार होते हैं। कृपासिंधु भगवान् भक्तों के लिये शरीर धारण करते हैं श्रीरामचन्द्रजी के जन्म के अनेक कारण हैं जो एक-से-एक बड़े ही विचित्र हैं।

**जनम एक दुइ कहौं बखानी ।**
**सावधान सुनु सुमति भवानी ॥**

मैं दो-एक जन्म बखानकर कहता हूँ। हे भवानी! हे सुन्दर बुद्धिवाली! सावधान होकर सुनो।

**द्वारपाल हरिके प्रिय दोऊ ।**
**जय अरु बिजय जान सब कोऊ ॥**
**बिप्र स्राप तें दूनौं भाई ।**
**तामस असुर देह तिन्ह पाई ॥**
**कनककसिपु अरु हाटक लोचन ।**
**जगत बिदित सुरपति मद मोचन ॥**

भगवान् विष्णु के दोनों ही प्रिय द्वारपालों जय और विजय को सब कोई जानता है। उन दोनों भाइयों ने विप्र (श्रीसनकादिक ऋषि) के शाप से तामसी असुर शरीर पाया (जो) हिरण्यकशिपु और हिरण्याक्ष (हो) इन्द्र के मद (गर्व) को छुड़ाने वाले जगत् में प्रसिद्ध हुए ।

**बिजई समर बीर बिख्याता ।**
**धरि बराह बपु एक निपाता ॥**
**होइ नरहरि दूसर पुनि मारा ।**
**जन प्रहलाद सुजस बिस्तारा ॥**

संग्राम में विजयी और वीरों में विख्यात हुए। भगवान् ने एक को (हिरण्याक्ष को) वराह का शरीर धरकर मारा, फिर नृसिंह हो दूसरे को मारा और भक्त प्रह्लाद का सुन्दर यश फैलाया ।

**भए निसाचर जाइ तेइ महाबीर बलवान ।**
**कुंभकरन रावन सुभट सुर बिजई जग जान ॥**

(श्रीमद्रामचरितमानस १/१२२/१-८)

वे ही जाकर महावीर बलवान् कुम्भकर्ण और रावण (नामक) राक्षस हुए, जो बड़े ही योद्धा और देवताओं को पराजय करने वाले हुए। उन्हें जगत् जानता है।

## ● श्रीमत्स्य-अवतार

ब्रह्माजी ब्राह्म नामक नैमित्तिक प्रलय के समय प्रलय-पयोधि में शयन कर रहे थे। उस समय उनके मुखों से वेद निकले, जिन्हें हयग्रीव नामक दैत्य चुराकर पाताल भाग गया। उस प्रलयकाल में समस्त औषधियों के बीज, प्राणियों के सूक्ष्म शरीर और सप्तर्षियों की रक्षा के लिये भगवान् श्रीहरि ने एक विशाल मत्स्य का रूप धारण किया और चक्रवर्ती सम्राट् राजर्षि सत्यव्रत से कहा कि वे इन सबको लेकर एक विशाल नौका पर आरूढ़ हो जायें। राजा सत्यव्रत ने ऐसा ही किया और भगवान् मत्स्य ने उस नौका का पूरे प्रलयकाल तक संचालन करते हुए राजा सत्यव्रत और सप्तर्षियों को ब्रह्मतत्त्व का उपदेश दिया तथा सृष्टि के मूल तत्त्वों की रक्षा की।

तदनन्तर उन्होंने प्रलयान्त में हयग्रीव दैत्य का वधकर वेदों को लाकर पुनः ब्रह्माजी को सौंप दिया। भगवान् श्रीहरि का मत्स्यरूप धारण ही मत्स्यावतार कहलाता है-

**मत्स्यो युगान्तसमये मनुनोपलब्धः**
**क्षोणीमयो निखिलजीवनिकायकेतः ।**
**विस्त्रंसितानुरुभये सलिले मुखान्मे**
**आदाय तत्र विजहार ह वेदमार्गान् ॥**

(श्रीमद्भागवत २/७/१२)

## श्रीवराह-अवतार

**वराह** शब्द का आध्यात्मिक अर्थ **वर** और **अह** अर्थात् श्रेष्ठ यज्ञ है। श्वेतवाराहकल्प में परम पराक्रमी दितिपुत्र हिरण्याक्ष पृथ्वी को लेकर रसातल में चला गया, इससे चिन्तित होकर पितामह ब्रह्माजी ने भगवान् श्रीहरि का स्मरण किया। स्मरण करते ही भगवान् उनके नासाछिद्र से वराह-शिशु के रूप में निकल पड़े और देखते-ही-देखते उन्होंने विशाल पर्वताकार श्वेतवराह का रूप धारणकर समुद्र के जल में प्रवेश किया और रसातल से पृथ्वी को लाने को उद्यत हुये। यह देखकर हिरण्याक्ष क्रुद्ध हो गदा लेकर श्रीहरि से युद्ध करने लगा, परंतु उन वराहरूपधारी श्रीहरि ने हिरण्याक्ष को लीलापूर्वक हाथ से ही प्रहार कर मार डाला और पृथ्वी को पुनः पूर्ववत् प्रतिष्ठित किया-

**यत्रोद्यतः क्षितितलोद्धरणाय बिभ्रत्**
**क्रौडीं तनुं सकलयज्ञमयीमनन्तः ।**
**अन्तर्महार्णव उपागतमादिदैत्यं**
**तं दंष्ट्रयाद्रिमिव वज्रधरो ददार ॥**

(श्रीमद्भागवत २/७/१)

परमात्मा का जो वाराह नामक अवतार है, वह श्रुति में वर्णित है। उस अवतार के समय सुरश्रेष्ठ भगवान् विष्णु ने वाराहरूप धारण कर पर्वत और वन सहित समुद्र तक की सारी पृथ्वी का जल से उद्धार किया था चारों वेद उनके चार चरण और यूप उनकी दाढ़ें हैं। यज्ञ दाँत और श्येनचित् आदि चिति मुख है। साक्षात् अग्नि ही उनकी जिह्वा, कुशा रोमावलि और ब्रह्म मस्तक है। उनका तप महान् है दिन और रात्रि उनके नेत्र हैं, वे दिव्यस्वरूप हैं। वेद उनका अङ्ग और श्रुतियाँ आभूषण हैं। हविष्य नासिका, सुवा थूथन और सामवेद का गम्भीर घोष ही उनका स्वर है। वे महान् हैं धर्म और सत्य उनका स्वरूप है। वे श्रीसम्पन्न तथा क्रम और विक्रम के द्वारा सम्मानित हैं। प्रायश्चित्त उनके नख और पशु उनके घुटने हैं। वे धीर तथा विशाल भुजाओं से युक्त हैं। उद्गाता अन्त्र, होम लिङ्ग तथा बड़ी-बड़ी औषधियाँ उनके अण्डकोश और वीर्य हैं। वायु अन्तरात्मा, मन्त्र नितम्ब और निचोड़कर निकाला हुआ सोमरस ही उनका रक्त है । वेदी ही स्कन्ध, हविष्य गन्ध तथा हव्य और कव्य उनका प्रचण्ड वेग है। प्राग्वंश उनका शरीर है। वे परम कान्तिमान् और नाना प्रकार की दीक्षाओं से सम्पन्न हैं। दक्षिणा ही उनका हृदय है। महान् सत्र उन महान् योगी का स्वरूप है। वेदों का स्वाध्याय उनके ओठों का आभूषण है और प्रवर्ग्य नामक कर्म की आवृत्ति ही उनका भूषण है । अनेक प्रकार के छन्दों की गति उनका मार्ग है और वे गोपनीय उपनिषद्रूपी आसनपर विराजमान रहते हैं। जल में पड़ने वाली छाया ही पत्नी की भाँति उस समय उनकी सहायिका थी और वे मेरुपर्वत के शिखर के समान ऊँचे जान पड़ते थे । उन सहस्रों सिरवाले भगवान् वाराह ने, जो देवताओं के आदिकारण हैं, एकार्णव के जल में प्रवेश करके उसमें डूबी हुई पर्वत, वन और काननों सहित समुद्र तक की सारी पृथ्वी को अपनी दाढ़ से ऊपर

उठाकर सम्पूर्ण लोकों के हित की कामना से पुनः उसे जल के ऊपर स्थिरतापूर्वक स्थापित कर दिया। इस प्रकार प्रकट होकर समस्त प्राणियों का हित चाहने वाले यज्ञात्मा भगवान् वराह ने समुद्र-जल को धारण करने वाली समूची पृथ्वी का पूर्वकाल में उद्धार किया था-

**वाराहस्तु श्रुतिमुखः प्रादुर्भावो महात्मनः ।**
**यत्र विष्णुः सुरश्रेष्ठो वाराहं रूपमास्थितः ।**
**महीं सागरपर्यन्तां सशैलवनकाननाम् ॥**
**वेदपादो यूपदंष्ट्रः क्रतुदन्तश्चितीमुखः ।**
**अग्निजिह्वो दर्भरोमा ब्रह्मशीर्षो महातपाः ॥**

**अहोरात्रेक्षणो दिव्यो वेदाङ्गः श्रुतिभूषणः ।**
**आज्यनासः स्रुवातुण्डः सामघोषस्वनो महान् ॥**

**धर्मसत्यमयः श्रीमान् क्रमविक्रमसत्कृतः ।**
**प्रायश्चित्तनखो धीरः पशुजानुर्महाभुजः ॥**

**उद्गात्रन्तो होमलिङ्गः फलबीजमहौषधिः ।**
**वाय्वन्तरात्मा मन्त्रस्फिग्विकृतः सोमशोणितः ॥**

**वेदीस्कन्धो हविर्गन्धो हव्यकव्यातिवेगवान् ।**
**प्राग्वंशकायो द्युतिमान् नानादीक्षाभिराचितः ॥**

**दक्षिणाहृदयो योगी महासत्रमयो महान् ।**
**उपाकर्मोष्ठरुचकः प्रवर्त्यावर्तभूषणः ॥**

**नानाछन्दोगतिपथो गुह्योपनिषदासनः ।**
**छायापत्नीसहायो वै मेरुशृङ्ग इवोच्छ्रितः ॥**

**महीं सागरपर्यन्तां सशैलवनकाननाम् ।**
**एकार्णवजले भ्रष्टामेकार्णवगतः प्रभुः ॥**

**दंष्ट्र्या यः समुद्धृत्य लोकानां हितकाम्यया ।**
**सहस्त्रशीर्षो देवादिश्चकार पृथिवीं पुनः ॥**

**एवं यज्ञवराहेण भूत्वा भूतहितार्थिना ।**
**उद्धृता पृथिवी सर्वा सागराम्बुधरा पुरा ॥**

(हरिवंशपुराण, हरिवंशपर्व ४१/२८-३८)

## ● कच्छप-अवतार

सम्पूर्ण सृष्टि प्रजापति कश्यप की सन्तान है, देवता और दैत्य भी उन्हीं के पुत्र हैं, परन्तु तमोगुणी स्वभाव और बलपूर्वक स्वर्गप्राप्ति की आकांक्षा के कारण दैत्य प्रायः देवताओं पर आक्रमण करते रहते थे। इन युद्धों में विजयश्री कभी देवताओं को तो कभी दैत्यों का वरण करती थी। बलि के दैत्याधिपति बनने पर मदोन्मत्त दैत्यों ने स्वर्गपर अधिकार कर लिया। पराजित देवता पितामह ब्रह्मा जी की शरण में गये। पितामह ब्रह्मा जी ने वेदवाणी द्वारा भगवान् श्रीहरि की स्तुति की और उनसे देवताओं के कष्टों का निवारण करने की प्रार्थना की। श्रीहरि ने देवताओं को सलाह दी कि तुम लोग अपने बन्धुत्व का स्मरण कराकर दैत्यों से सन्धि कर लो-

**अरयोऽपि हि सन्धेयाः सति कार्यार्थगौरवे ।**
**अहिमूषकवद्देवा ह्यर्थस्य पदवीं गतैः ॥**

(श्रीमद्भागवत ८/६/२०)

दैत्यों को अमृत का प्रलोभन देकर उनके साथ समुद्र-मन्थन करो, इससे तुम्हें अमृत की प्राप्ति होगी, जिसे पीकर तुम अमर हो जाओगे। श्रीहरि की योजना के अनुसार देवताओं ने दैत्यों से सन्धि कर ली। अमृतपान के लिये वे भी समुद्र-मन्थन हेतु तैयार हो गये। नागराज वासुकि ने नेती और मन्दराचल ने मथानी बनना स्वीकार कर लिया। जब समुद्र-मन्थन प्रारम्भ हुआ तो आधारहीन मन्दराचल,

समुद्र में डूबने लगा। यह देखकर भगवान् श्रीहरि ने एक लाख योजन विस्तृत पीठवाले कच्छप का रूप धारण किया और मन्दरगिरि को अपनी पीठपर धारण कर समुद्र-मन्थन का कार्य सुचारु रूप से सम्पादित किया। इस प्रकार देवताओं के हित के लिये उन परम प्रभु ने कच्छपावतार लिया-

**क्षीरोदधावमरदानवयूथपाना-**
**मुन्मथ्नताममृतलब्धय आदिदेवः ।**
**पृष्ठेन कच्छपवपुर्विदधार गोत्रं**
**निद्राक्षणोऽद्रिपरिवर्तकषाणकण्डूः ॥**

(श्रीमद्भागवत २/७/१३)

**पृष्ठे भ्राम्यदमन्दमन्दरगिरिग्रावाग्रकण्डूयना-**
**न्निद्रालोः कमठाकृतेर्भगवतः श्वासानिलाः पान्तु वः ।**
**यत्संस्कारकलानुवर्तनवशाद् वेलानिभेनाम्भसां**
**यातायातमतन्द्रितं जलनिधेर्नाद्यापि विश्राम्यति ॥**

(श्रीमद्भागवत १२/१३/२)

## ● श्रीनृसिंहावतार

भगवान् श्रीहरि के वैकुण्ठलोक में जय-विजय नाम के दो पार्षद थे। एक बार उन्होंने अभद्रता पूर्वक सनकादि मुनियों को श्रीहरि के धाम में जाने से रोक दिया। इससे क्रोधित होकर मुनियों ने उन्हें तीन जन्म तक दैत्ययोनि में जन्म लेने का शाप दे दिया। इसी कारण से जय-विजय-प्रथम जन्म में दितिपुत्र हिरण्याक्ष और हिरण्यकशिपु के-रूप में उत्पन्न हुए। परम करुणामय प्रभु तो सदा अपने जनों का हित ही करना चाहते हैं, अतः उन्होंने वराह-अवतार लेकर हिरण्याक्ष का वधकर उसका उद्धार कर दिया। अपने भाई की मृत्यु से अत्यन्त क्रोधित हो हिरण्यकशिपु भगवान् श्रीहरि से बदला लेने के लिये कठोर तप करने लगा। उसके तप से प्रसन्न हो

ब्रह्माजी प्रकट हुए और वर माँगने को कहा। हिरण्यकशिपु ने वर माँगा कि– 'हे प्रभो! यदि आप मुझपर प्रसन्न हैं तो अपनी सृष्टि के सभी प्राणियों से मुझे अवध्य कर दीजिये, साथ ही मेरी मृत्यु न घर के अन्दर हो न बाहर, न पृथ्वी पर हो न आकाश में, न जल में हो न थल में, न रात्रि में हो न दिन में और न ही अस्त्र से हो न शस्त्र से।' वर देने के लिये वचनबद्ध ब्रह्माजी ने 'तथास्तु' कह दिया। फिर क्या था, हिरण्यकशिपु के अत्याचारों से त्रैलोक्य कम्पित हो उठा। दैत्यराज हिरण्यकशिपु का पुत्र प्रह्लाद अत्यन्त सात्त्विक और श्रीहरि का परम भक्त था। जब हिरण्यकशिपु को यह बात ज्ञात हुई तो वह क्रोध से पागल हो उठा और प्रह्लाद को मार डालने के लिये उसने सभी सम्भव प्रयास किये, परन्तु भगवद्भक्तिरूपी कवच में सुरक्षित भक्त प्रह्लाद का वह बाल भी बाँका न कर सका। अन्त में उसने अपने सभाभवन के ही एक अग्नितप्त लोहे के स्तम्भ में प्रह्लाद को बँधवा दिया और तलवार से उसका वध करने को उद्यत हो बोला–बता, तेरा हरि कहाँ है ? देखता हूँ, तुझे मरने से कौन बचाता है ? प्रह्लाद ने विनम्र भाव से कहा– पिताजी ! वे श्रीहरि तो सर्वत्र हैं, वे तो मुझ में भी हैं, आप में भी, इस खड्ग में भी हैं और इस खम्भे में भी। प्रह्लाद की बातें सुनकर हिरण्यकशिपु क्रोध से पागल हो उठा और सिंहासन से कूदकर उसने उस खम्भे पर घूँसे से प्रहार किया। ठीक उसी समय उस खम्भे से ब्रह्माण्ड फटने–जैसी भयंकर गर्जना हुई और ब्रह्माजी तथा अपने भक्त प्रह्लाद की वाणी को सत्य करने तथा जड़–चेतन–सर्वत्र अपनी व्यापकता सिद्ध करने के लिये भगवान् श्रीहरि उस खम्भे से नृसिंहरूप में प्रकट हो गये। उनका आधा शरीर सिंह जैसा और आधा शरीर मनुष्य सदृश था। उसी नृसिंहरूप से उन्होंने हिरण्यकशिपु को पकड़ लिया और सभाभवन की देहलीपर ले जाकर उसे अपनी

जाँघों पर गिरा लिया और सायंकाल अपने वज्रसदृश नखों से उसका हृदय फाड़कर मार डाला। यथा-

**त्रैविष्टपोरुभयहा स नृसिंहरूपं**
**कृत्वा भ्रमद्भ्रुकुटिदंष्ट्रकरालवक्त्रम् ।**
**दैत्येन्द्रमाशु गदयाभिपतन्तमारा-**
**दूरौ निपात्य विददार नखैः स्फुरन्तम् ॥**

(श्रीमद्भागवत २/७/१४)

हरिवंश महापुराण के अनुसार नृसिंहावतार की कथा इस प्रकार है- नरसिंह अवतार में भगवान् ने नरसिंहरूप धारण करके हिरण्यकशिपु नामक दैत्य का वध किया था। राजन्! पहले सत्ययुग में देवताओं का शत्रु हिरण्यकशिपु समस्त दैत्यों का आदि पुरुष था। उसे अपने बल का बड़ा घमंड था। उसने साढ़े ग्यारह हजार वर्षों तक बड़ी भारी तपस्या की। वह सदा जप और उपवास में संलग्न रहता था। दृढ़ आसन लगाकर मौनावलम्बनपूर्वक दृढ़ता के साथ उत्तम व्रत का पालन करता था। तदनन्तर उसके इन्द्रिय संयम, मनोनिग्रह, ब्रह्मचर्य, तपस्या और शौच-संतोषादि नियमों के पालन से ब्रह्माजी उसके ऊपर बहुत प्रसन्न हुए।

स्वयम्भू भगवान् ब्रह्माजी हंस से युक्त सूर्य के समान तेजस्वी विमानद्वारा स्वयं वहाँ पधारे। उनके साथ आदित्य, वसु, साध्य, मरुद्गण, अन्य देवगण, रुद्रगण, विश्वेदेव, यक्ष, राक्षस, किंनर, दिशाएँ, विदिशाएँ, नदियाँ, समुद्र, नक्षत्र, मुहूर्त, आकाशचारी महान् ग्रह, तपस्यामें बढ़े- चढ़े देवर्षि, सिद्ध, सप्तर्षि, परम पुण्यात्मा राजर्षि, गन्धर्व तथा अप्सराएँ भी थीं। सम्पूर्ण देवताओंसे घिरे हुए ब्रह्मवेत्ताओं में श्रेष्ठ चराचर-गुरु श्रीमान् ब्रह्मा उस दैत्य से इस प्रकार बोले- उत्तम व्रत का पालन करने वाले दैत्यराज ! तुम मेरे भक्त हो।

तुम्हारी इस तपस्या से मैं बहुत प्रसन्न हूँ, तुम्हारा भला हो। तुम कोई वर माँगो और मनोवाञ्छित भोग प्राप्त करो।

हिरण्यकशिपु बोला– लोकपितामह ! मुझे देवता, असुर, गन्धर्व, यक्ष, नाग, राक्षस, मनुष्य और पिशाच किसी तरह मार न सकें। तपस्वी ऋषि–महर्षि कुपित होकर मुझे शाप न दें, मैं आपसे यही वर माँगता हूँ। शस्त्र से, न अस्त्र से, न पर्वत अथवा वृक्ष से, न सूखे से, न गीले से और न दूसरे ही किसी आयुध से मेरा वध हो। जो मेरे सेवक, सेना और वाहनों सहित मुझे एक ही थप्पड़ से मार डालने में समर्थ हो, उसी के हाथ से मेरी मृत्यु हो। मैं ही सूर्य, चन्द्रमा, वायु, अग्नि, जल, आकाश, नक्षत्र और दसों दिशाओं के रूप में स्थित रहूँ। मैं ही काम और क्रोध का अधिष्ठाता होऊँ। मैं ही वरुण, इन्द्र, यम, धनाध्यक्ष कुबेर, यक्ष एवं किम्पुरुषों का स्वामी होऊँ। नृपश्रेष्ठ ! उस दैत्य के यों कहने पर स्वयम्भू भगवान् ब्रह्मा ठठाकर हँस पड़े और उस समय उस दैत्यराज से इस प्रकार बोले–

**वाराह एष कथितो नारसिंहमतः शृणु ।**
**यत्र भूत्वा मृगेन्द्रेण हिरण्यकशिपुर्हतः ॥**

**पुरा कृतयुगे राजन् सुरारिर्बलदर्पितः ।**
**दैत्यानामादिपुरुषश्चचार तप उत्तमम् ॥**

**दश वर्षसहस्त्राणि शतानि दश पञ्च च ।**
**जपोपवासनिरतः स्थानमौनदृढव्रतः ॥**

**ततः शमदमाभ्यां च ब्रह्मचर्येण चानघ ।**
**ब्रह्मा प्रीतोऽभवत् तस्य तपसा नियमेन च ॥**

**तं वै स्वयम्भूर्भगवान् स्वयमागत्य भूपते ।**
**विमानेनार्कवर्णेन हंसयुक्तेन भास्वता ॥**

आदित्यैर्वसुभिः साध्यैर्मरुद्भिर्दैवतैः सह ।
रुद्रैर्विश्वसहायैश्च यक्षराक्षसकिंनरैः ॥

दिशाभिर्विदिशाभिश्च नदीभिः सागरैस्तथा ।
नक्षत्रैश्च मुहूर्तैश्च खेचरैश्च महाग्रहैः ॥

देवर्षिभिस्तपोवृद्धैः सिद्धैः सप्तर्षिभिस्तथा ।
राजर्षिभिः पुण्यतमैर्गन्धर्वैश्चाप्सरोगणैः ॥

चराचरगुरुः श्रीमान् वृतः सर्वैः सुरैस्तथा ।
ब्रह्मा ब्रह्मविदां श्रेष्ठो दैत्यं वचनमब्रवीत् ॥

प्रीतोऽस्मि तव भक्तस्य तपसानेन सुव्रत ।
वरं वरय भद्रं ते यथेष्टं काममाप्नुहि ॥

हिरण्यकशिपुरुवाच

न देवासुरगन्धर्वा न यक्षोरगराक्षसाः ।
न मानुषाः पिशाचाश्च निहन्युर्मां कथंचन ॥

ऋषयो वा न मां शापैः क्रुद्धा लोकपितामह ।
शपेयुस्तपसा युक्ता वरमेतं वृणोम्यहम् ॥

न शस्त्रेण न चास्त्रेण गिरिणा पादपेन वा ।
न शुष्केण न चार्मेण स्यान्न चान्येन मे वधः ॥

पाणिप्रहारेणैकेन सभृत्यबलवाहनम् ।
यो मां नाशयितुं शक्तः स मे मृत्युर्भविष्यति ॥

भवेयमहमेवार्कः सोमो वायुहुताशनः ।
सलिलं चान्तरिक्षं च नक्षत्राणि दिशो दश ॥
अहं क्रोधश्च कामश्च वरुणो वासवो यमः ।
धनदश्च धनाध्यक्षो यक्षः किम्पुरुषाधिपः ॥

**एवमुक्तस्तु दैत्येन स्वयम्भूर्भगवांस्तदा ।**
**उवाच दैत्यराजं तं प्रहसन् नृपसत्तम ॥**

(हरिवंशपुराण, हरिवंशपर्व ४१/३९-५५)

ब्रह्माजी ने कहा - तात! ये दिव्य और अद्भुत वर मैंने तुम्हें दे दिये। तुम इन सम्पूर्ण अभीष्टों को प्राप्त कर लोगे, इसमें संशय नहीं है। यों कहकर भगवान् ब्रह्मा आकाश में स्थित, ब्रह्मर्षि गणों से सेवित वैराजपद नामक ब्रह्मधाम को चले गये। तदनन्तर देवता, नाग, गन्धर्व और मुनि वह वरदान सुनकर पितामह ब्रह्माजी के पास गये। वहाँ पहुँचकर इन्द्र आदि देवताओं ने भगवान् ब्रह्मा से अपने मानसिक भय को इस प्रकार सूचित किया। देवताओंने कहा- भगवन् ! इस वर के प्रभाव से तो वह असुर हम लोगों को सदा ही महान् कष्ट पहुँचाता रहेगा। अतः आप प्रसन्न होइये और उसके वध का भी कोई उपाय सोचिये, क्योंकि आप ही सम्पूर्ण भूतों के आदिस्रष्टा, स्वयम्भू, सर्वव्यापी, हव्य-कव्य के निर्माता, अव्यक्त प्रकृति और ध्रुवस्वरूप हैं। उस समय देवताओं का यह लोकहितकारी वचन सुनकर उन प्रजापतिदेव भगवान् ब्रह्मा ने समस्त देवताओं मे इस प्रकार की बात कही- देवताओ! उस असुर को अपनी तपस्या का फल अवश्य प्राप्त होगा। फल-भोग के द्वारा जब तपस्या की समाप्ति हो जायगी, तब भगवान् विष्णु स्वयं ही उसका वध करेंगे।

कमलयोनि ब्रह्माजी के मुख से यह बात सुनकर समस्त देवता प्रसन्नतापूर्वक अपने-अपने दिव्य स्थानों को चले गये। वह वर पाते ही दैत्य हिरण्यकशिपु समस्त प्रजा को कष्ट देने लगा, क्योंकि ब्रह्माजी के उस वरदान से उसका घमंड बहुत बढ़ गया था। सबसे पहले आश्रमों में रहने वाले उत्तम व्रत के पालक, सत्यधर्म परायण तथा जितेन्द्रिय महाभाग मुनियों को उसने पीड़ा देना आरम्भ किया। तीनों लोकों में रहने वाले देवताओं को हराकर त्रिलोकी के

राज्य को अपने वश में करके वह महान् असुर दानव स्वर्ग में रहने लगा। वरदान के मद से उन्मत्त हुआ वह दानव जब देवलोकमें निवास करता था, उन दिनों उसने दैत्योंको तो यज्ञका भागी बनाया और देवताओंको उससे वञ्चित कर दिया। तब आदित्य, रुद्र, विश्वेदेव और मरुद्गण आदि मिलकर शरणागतवत्सल, वेद एवं यज्ञस्वरूप, ब्रह्माजीके भी आराध्यदेव, सनातन ब्रह्मरूप महाबली भगवान् विष्णुकी शरणमें गये। भूत, वर्तमान और भविष्य जिनका स्वरूप है, जो सब कुछ करनेमें समर्थ तथा समस्त लोकों द्वारा वन्दित हैं, उन्हीं सर्वव्यापी नारायण की उन शरणागत देवताओं ने शरण ली–

**ब्रह्मोवाच**

**एते दिव्या वरास्तात मया दत्तास्तवाद्भुताः ।**
**सर्वान् कामानिमांस्तात प्राप्स्यसि त्वं न संशयः ॥**

**एवमुक्त्वा तु भगवाञ्जगामाकाशमेव हि ।**
**वैराजं ब्रह्मसदनं ब्रह्मर्षिगणसेवितम् ॥**

**ततो देवाश्च नागाश्च गन्धर्वा मुनयस्तथा ।**
**वरप्रदानं श्रुत्वा ते पितामहमुपस्थिताः ॥**

**विभुं विज्ञापयामासुर्देवा इन्द्रपुरोगमाः ॥**

**देवा ऊचुः**

**वरेणानेन भगवन् बाधयिष्यति नोऽसुरः ।**
**ततः प्रसीद भगवन् वधोऽप्यस्य विचिन्त्यताम् ॥**

**भवान् हि सर्वभूतानां स्वयम्भूरादिकृद् विभुः ।**
**स्रष्टा च हव्यकव्यानामव्यक्तप्रकृतिर्भुवः ॥**

ततो लोकहितं वाक्यं श्रुत्वा देवः प्रजापतिः ।
प्रोवाच भगवान् वाक्यं सर्वान् देवगणांस्तदा ॥

अवश्यं त्रिदशास्तेन प्राप्तव्यं तपसः फलम् ।
तपसोऽन्तेऽस्य भगवान् वधं विष्णुः करिष्यति ॥

एतच्छ्रुत्वा सुराः सर्वे वाक्यं पङ्कजसम्भवात् ।
स्वानि स्थानानि दिव्यानि जग्मुस्ते वै मुदान्विताः ॥

लब्धमात्रे वरे चापि सर्वाः सोऽबाधत प्रजाः ।
हिरण्यकशिपुर्दैत्यो वरदानेन दर्पितः ॥

आश्रमेषु महाभागान् मुनीन् वै शंसितव्रतान् ।
सत्यधर्मरतान् दान्तान् पुरा धर्षितवांस्तु सः ॥

देवांस्त्रिभुवनस्थांस्तु पराजित्य महासुरः ।
त्रैलोक्यं वशमानीय स्वर्गे वसति दानवः ॥

यदा वरमदोन्मत्तो न्यवसद् दानवो दिवि ।
यज्ञियान् कृतवान् दैत्यान् देवांश्चैवाप्ययज्ञियान् ॥

आदित्याश्च ततो रुद्रा विश्वे च मरुतस्तथा ।
शरण्यं शरणं विष्णुमुपाजग्मुर्महाबलम् ॥

वेदयज्ञमयं ब्रह्म ब्रह्मदेवं सनातनम् ।
भूतं भव्यं भविष्यं च प्रभुं लोकनमस्कृतम् ।
नारायणं विभुं देवाः शरणं शरणागताः ॥

(हरिवंशपुराण, हरिवंशपर्व ४१/५६-७०)

देवताओं ने भगवान् विष्णु से कहा – देवेश्वर! आप हिरण्यकशिपु के भय से अब हमारी रक्षा करें। सुरश्रेष्ठ ! आप हम ब्रह्मा आदि देवताओं के भी परम पालक हैं। आप ही हमारे परम

देवता और आप ही हमारे परम गुरु हैं। आपके नेत्र प्रफुल्ल कमलदल के समान शोभा पाते हैं। आप शत्रुपक्ष को भय देने वाले हैं। प्रभो! आप दैत्यों के विनाश के लिये हमारे शरणदाता हों । भगवान् विष्णु ने कहा- देवताओ ! भय छोड़ दो। मैं तुम्हें अभय देता हूँ। तुम शीघ्र ही पहले की भाँति स्वर्गलोक प्राप्त कर लोगे। जो वरदान पाकर घमंड में भर गया है तथा जो देवेश्वरों के लिये अवध्य हो गया है, उस दितिपुत्र दानवराज हिरण्यकशिपु को उसके सेवकों सहित मार डालता हूँ। वैशम्पायन जी कहते हैं- राजन् ! यों कहकर भगवान् विष्णु ने उन देवेश्वरों को तो विदा कर दिया और स्वयं हिरण्यकशिपु के सभा भवन में पधारे। उस समय उन प्रभु ने अपना आधा शरीर मनुष्य का-सा बना लिया था और आधा सिंहका-सा। इस प्रकार नृसिंहरूप धारण करके वे एक हाथ से दूसरे हाथ को रगड़ते हुए वहाँ आये। उनके शरीर का वर्ण सजल मेघ के समान श्याम था। उनका शब्द भी जलपूर्ण मेघ की गर्जना के समान ही गम्भीर था। उनके उद्दीप्त तेज और वेग भी बरसने वाले बादल के ही तुल्य थे। यद्यपि दैत्य हिरण्यकशिपु अत्यन्त बलवान्, तेजस्वी, दर्प में भरे हुए सिंह के समान पराक्रमी तथा बलाभिमानी दैत्यों द्वारा सुरक्षित था, तो भी भगवान् नृसिंह ने उसे एक ही थप्पड़ से मारकर यमलोक पहुँचा दिया।

**देवा ऊचुः**

**त्रायस्व नोऽद्य देवेश हिरण्यकशिपोर्भयात् ।**
**त्वं हि नः परमो धाता ब्रह्मादीनां सुरोत्तम ॥**

**त्वं हि नः परमो देवस्त्वं हि नः परमो गुरुः ।**
**उत्फुल्लाम्बुजपत्राक्षः शत्रुपक्षभयंकरः ।**
**क्षयाय दितिवंशस्य शरणयस्त्वं भवस्व नः ॥**

विष्णुरुवाच

भयं त्यजध्वममरा ह्यभयं वो ददाम्यहम् ।
तथैवं त्रिदिवं देवाः प्रतिपत्स्यथ माचिरम् ॥

एष तं सगणं दैत्यं वरदानेन दर्पितम् ।
अवध्यममरेन्द्राणां दानवेन्द्रं निहन्म्यहम् ॥

वैशम्पायन उवाच

एवमुक्त्वा स भगवान् विसृज्य त्रिदशेश्वरान् ।
हिरण्यकशिपो राजन्नाजगाम हरिः सभाम् ॥

नरस्य कृत्वार्धतनुं सिंहस्यार्धतनुं प्रभुः ।
नारसिंहेण वपुषा पाणिं निष्पिष्य पाणिना ॥

जीमूतघनसंकाशो जीमूतघननिःस्वनः ।
जीमूतघनदीप्तौजा जीमूत इव वेगवान् ॥

दैत्यं सोऽतिबलं दीप्तं दृप्तशार्दूलविक्रमम् ।
दृप्तैर्दैत्यगणैर्गुप्तं हतवानेकपाणिना ॥

(हरिवंशपुराण, हरिवंशपर्व ४१/७१-७८)

## श्रीवामन-अवतार

एक बार देवताओं और दैत्यों में युद्ध हुआ, जिसमें देवगण पराजित हो गये और दैत्यों ने स्वर्गपर अधिकार कर लिया। पुत्रों की इस दुर्दशा को देखकर देवमाता अदिति बहुत दुःखी हुई। उन्होंने अपने पति महर्षि कश्यप से परामर्श करके भगवान् विष्णु की आराधना प्रारम्भ की। महर्षि कश्यप भी भगवान् विष्णु के प्रीत्यर्थ गहन तपस्या में लीन हो गये। इन दम्पती की आराधना से प्रसन्न हो भगवान् विष्णु ने उन्हें दर्शन दिये और वर माँगने को कहा। तब देवमाता अदिति ने वरदान माँगा- 'प्रभो ! मेरे पुत्रका राज्य और

यज्ञभाग पुनः उसे प्राप्त हो जाय।' कश्यपजी ने कहा- 'हे प्रभो! आप इन्द्र के छोटे भाई उपेन्द्र बनकर शत्रुओं से उसकी रक्षा करें।' भगवान् ने 'तथास्तु' कहकर दोनों की इच्छा पूरी करने का वचन दिया। कालान्तर में भाद्रपदमास के शुक्लपक्ष की द्वादशी तिथि को अभिजित मुहूर्त में भगवान् का कश्यप-अदिति के यहाँ मंगलमय चतुर्भुजरूप में प्राकट्य हुआ। तदनन्तर भगवान् बलिका उद्धार करने के लिये वामन ब्रह्मचारी का रूप धारणकर बलि के यज्ञ-मण्डप में पहुँचे। राजा बलि ने महारानी विन्ध्यावली के साथ भगवान् वामन का पूजन किया। वामन भगवान् ने कहा- 'राजन् ! अग्निहोत्रके लिये मुझे मेरे पग से केवल तीन पग भूमि दे दीजिये और मुझे कुछ नहीं चाहिये।' भगवान् की बात सुनकर बलि ने हँसते हुए कहा- अच्छी बात है, जितनी तुम्हारी इच्छा हो, उतना ले लो। - यह कहकर वे जैसे ही संकल्प करने चले, वैसे ही - दैत्यगुरु शुक्राचार्य ने उन्हें रोक दिया कि ये स्वयं भगवान् - श्रीहरि हैं, तीन पग में तो ये सारा ब्रह्माण्ड नाप लेंगे और तुम्हें राज्यश्री से हीन कर देंगे। इस पर बलिने कहा- जिनके लिये यज्ञ-यागादि किये जाते हैं, वे भगवान् - विष्णु ही यदि स्वयं दान लेने उपस्थित हैं तो मैं अवश्य - दूँगा। शुक्राचार्य ने बलि को शाप दे दिया कि मेरी - आज्ञा का उल्लंघन करने के कारण तुम श्रीहीन हो जाओगे। इस पर भी सत्यप्रतिज्ञ बलि ने संकल्प कर तीन पग भूमि वामन भगवान् को दान कर दी। फिर तो वही = हुआ, जो शुक्राचार्य ने कहा था, वामन भगवान् ने अपने एक पग से सम्पूर्ण पृथ्वी और दूसरे पग से ऊपर के सभी लोक नाप लिये। तीसरे पग के लिये बलि ने अपना सिर झुका दिया, भगवान् ने अपना चरणकमल उसके सिर पर रखकर उसे सुतललोक का स्वामी बना दिया। स्वर्गका राज्य और यज्ञभाग उन्होंने पुनः देवताओं को पुनः सौंप दिया-

ज्यायान् गुणैरवरजोऽप्यदितेः सुतानां
लोकान् विचक्रम इमान् यदथाधियज्ञः ।
क्ष्मां वामनेन जगृहे त्रिपदच्छलेन
याच्ञामृते पथि चरन् प्रभुभिर्न चाल्यः ॥
(श्रीमद्भागवत २/७/१७)

पूर्वकाल में सर्वशक्तिमान् भगवान् विष्णु वामनरूप धारणकर बलवान् बलि के यज्ञ में गये और वहाँ उन्होंने अपने तीन ही पगों से त्रिलोकी को नापकर किसी से क्षुब्ध न होने वाले बड़े-बड़े असुरों को क्षुब्ध कर डाला। जिस समय भगवान् हृषीकेश अपने डग बढ़ा रहे थे, उस समय विप्रचित्ति, शिबि, शंकुरय और शंकु, अय:शिरा तथा शंकुशिरा, पराक्रमी हयग्रीव, वेगवान्, केतुमान्, उग्र, महान् असुर सोमव्यग्र, पुष्कर और पुष्कल तथा महारथी वेपन, बृहत्कीर्ति, महाजिह्व तथा अश्वसहित, अश्वपति, प्रह्लाद, अश्वशिरा, कुम्भ, संह्लाद, गगनप्रिय, अनुह्लाद, हरि और हर, वराह, शंकर, रुज, शरभ तथा शलभ, कुपन, कोपन, क्रथ, बृहत्कीर्ति, महाजिह्व, शंकुकर्ण, महास्वन, दीर्घजिह्व, अर्कनयन, मृदुचाप, मृदुप्रिय, वायु, यविष्ठ, नमुचि, शम्बर, महाकाय विज्वर, चन्द्रहन्ता, क्रोधहन्ता एवं क्रोधवर्धन, कालक तथा कालकेय, वृत्र, क्रोध, विरोचन, गरिष्ठ और वरिष्ठ, प्रलम्ब और नरक नामक दो दैत्य, इन्द्रतापन और वातापि, बलाभिमानी केतुमान्, असिलोमा तथा पुलोमा, वाक्कल, प्रमद, मद, खसृम, कालवदन कराल, कैशिक, शर, एकाक्ष, चन्द्रहा, राह, संह्लाद, सूमर और खन आदि दैत्य चारों ओर से भगवान् को घेरकर खड़े हो गये। उनमें से किसी के हाथ में शतनी (बंदूक) थी और किसी के हाथ में चक्र। बहुतेरे अपने हाथों में परिघ लिये खड़े थे। कुछ दानव बड़ी-बड़ी शिलाओं से प्रहार करते थे। कितनों के हाथों में शूल थे। कितने ही पत्थर के गोले फेंकने वाले यन्त्ररूपी

आयुध से सम्पन्न थे। बहुतेरे भिन्दिपाल नामक अस्त्र का प्रयोग करते थे। कितने ही दैत्यों ने अपने हाथों में शूल, ऊखल, फरसे, पाश, मुगर और मुसल ले रखे थे। इस प्रकार वे भाँति-भाँति के आयुध धारण किये हुए थे। उनके वेष भी कई तरह के थे। वे सब-के-सब महान् वेगशाली और भयंकर थे। किन्हीं के मुख कछुओं और मुर्गों के समान थे तो किन्हीं के खरहे और घूघुओं के सदृश। कितने ही दानवों के मुख गदहे, ऊँट, सूअर, मगर और सियारों के समान थे। वे सभी बड़े भयानक जान पड़ते थे। कुछ घोर रूपधारी दैत्यों के मुख चूहों और मेढकों के समान थे। कितनों के मुख भेड़ियों से मिलते-जुलते थे। किन्हीं के मुख बिलाव-जैसे थे तो किन्हीं के हाथियों के समान। कोई-कोई इससे भी बड़े मुखवाले थे। बहुतों के मुख नक्र, मेढ़े, बैल, बकरे, भेड़, भैंसे, गोह, साही, क्रौंच, गरुड़, गैंडे और मोरों से मिलते- जुलते थे। कुछ दैत्यों ने गजराज के चमड़े ओढ़ रखे थे और कितनों ने वस्त्र की जगह काले मृगचर्म को ही लपेट रखा था। बहुतों के शरीर चीर से ढके थे, और कितने ही वल्कल वस्त्र पहने थे। किन्हीं के मस्तक पर पगड़ी शोभा पाती थी और किन्हीं के मुकुट। कितने ही असुर किरीट और कुण्डलों से सुशोभित थे, किन्हीं के सिरपर लम्बी शिखाएँ शोभा पाती थीं। बहुत-से दैत्यों की गर्दनें शङ्ख के समान थीं। वे अत्यन्त तेजस्वी दैत्य नाना प्रकारके वेष धारण किये भाँति-भाँति की मालाओं और चन्दनों से अलंकृत थे। वे अत्यन्त तेज से चमकते हुए अपने-अपने आयुध लिये खड़े थे। उन सर्वशक्तिमान् भगवान् ने महाभयानक रूप धारण करके समस्त दैत्यों को लातों और थप्पड़ों से मथ डाला और शीघ्र ही इस पृथ्वीको उनसे छीन लिया-

**बलेर्बलवतो यज्ञे बलिना विष्णुना पुरा ।**
**विक्रमैस्त्रिभिरक्षोभ्याः क्षोभितास्ते महासुराः ॥**

विप्रचित्तिः शिबिः शंकुरयः शंकुस्तथैव च ।
अयः शिराः शंकुशिरा हयग्रीवश्च वीर्यवान् ॥

वेगवान् केतुमानुग्रः सोमव्यग्रो महासुरः ।
पुष्करः पुष्कलश्चौव वेपनश्च महारथः ॥

बृहत्कीर्तिर्महाजिह्वः साश्वोऽश्वपतिरेव च ।
प्रह्लादोऽश्वशिराः कुम्भः संह्लादो गगनप्रियः ।
अनुह्लादो हरिहरौ वराहः शंकरो रुजः ॥

शरभः शलभश्चौव कुपनः कोपनः क्रथः ।
बृहत्कीर्तिर्महाजिह्वः शंकुकर्णो महास्वनः ॥

दीर्घजिह्वोऽर्कनयनो मृदुचापो मृदुप्रियः ।
वायुर्यविष्ठो नमुचिः शम्बरो विज्वरो महान् ॥

चन्द्रहन्ता क्रोधहन्ता क्रोधवर्धन एव च ।
कालकः कालकेयश्च वृत्रः क्रोधो विरोचनः ॥

गरिष्ठश्च वरिष्ठश्च प्रलम्बनरकावुभौ ।
इन्द्रतापनवातापी केतुमान् बलदर्पितः ॥

असिलोमा पुलोमा च वाक्कलः प्रमदो मदः ।
खसृमः कालवदनः करालः कैशिकः शरः ॥

एकाक्षश्चन्द्रहा राहुः संह्लादः सृमरः खनः ।
शतघ्नीचक्रहस्ताश्च तथा परिघपाणयः ॥

महाशिलाप्रहरणाः शूलहस्ताश्च दानवाः ।
अश्मयन्त्रायुधोपेता भिन्दिपालायुधास्तथा ॥

शूलोलूखलहस्ताश्च परश्वधधरास्तथा ।
पाशमुद्‌गरहस्ता वै तथा मुसलपाणयः ॥

नानाप्रहरणा घोरा नानावेषा महाजवाः ।
कूर्मकुक्कुटवक्त्राश्च शशोलूकमुखास्तथा ॥

खरोष्ट्रवदनाश्चौव वराहवदनास्तथा ।
भीमा मकरवक्त्राश्च क्रोष्टुवक्त्राश्च दानवाः ।
आखुदर्दुरवक्त्राश्च घोरा वृकमुखास्तथा ॥

मार्जारगजवक्त्राश्च महावक्त्रास्तथापरे ।
नक्रमेषाननाः शूराः गोऽजाविमहिषाननाः ॥

गोधाशल्यकवक्त्राश्च क्रौञ्चवक्त्राश्च दानवाः ।
गरुडाननाः खड्गमुखा मयूरवदनास्तथा ॥

गजेन्द्रचर्मवसनास्तथा कृष्णाजिनाम्बराः ।
चीरसंवृतदेहाश्च तथा वल्कलवाससः ॥

उष्णीषिणो मुकुटिनस्तथा कुण्डलिनोऽसुराः ।
किरीटिनो लम्बशिखाः कम्बुग्रीवाः सुवर्चसः ।
नानावेषधरा दैत्या नानामाल्यानुलेपनाः ॥

स्वान्यायुधानि संगृह्य प्रदीप्तान्यतितेजसा ।
क्रममाणं हृषीकेशमुपावर्तन्त सर्वशः ॥

प्रमथ्य सर्वान् दैतेयान् पादहस्ततलैः प्रभुः ।
रूपं कृत्वा महाभीमं जहाराशु स मेदिनीम् ॥

(हरिवंशपुराण, हरिवंशपर्व ४१/८०-९१)

कहते हैं-जब वे भूमि को नाप रहे थे, उस समय चन्द्रमा और सूर्य उन विराट्-रूपधारी भगवान् के स्तनों के बीच में आ गये थे और जब वे आकाश (स्वर्गलोक)- को नापने लगे, तब चन्द्रमा और सूर्य उनकी नाभि में आ गये। वे अतुल पराक्रमी भगवान् विष्णु

जब स्वर्ग से भी ऊपर के मह, जन, तप और सत्य नामक लोकों को नाप रहे थे, उस समय सूर्य और चन्द्रमा उनके दोनों घुटनों में स्थित दिखायी दिये - इस प्रकार ब्राह्मण लोग कहते हैं। इस प्रकार बलवानों में श्रेष्ठ श्रीविष्णु ने सारी पृथ्वी का अपहरण करके बड़े-बड़े असुरों को हराकर स्वर्गलोक का राज्य इन्द्र को दे दिया-

**तस्य विक्रमतो भूमिं चन्द्रादित्यौ स्तनान्तरे ।**
**नभः प्रक्रममाणस्य नाभ्यां किल समास्थितौ ॥**

**परं प्रक्रममाणस्य जानुदेशे स्थितावुभौ ।**
**विष्णोरतुलवीर्यस्य वदन्त्येवं द्विजातयः ॥**

**हृत्वा स पृथिवीं कृत्स्नां जित्वा चासुरपुंगवान् ।**
**ददौ शक्राय त्रिदिवं विष्णुर्बलवतां वरः ॥**

(हरिवंशपुराण, हरिवंशपर्व ४१/१००-१०२)

## श्रीपरशुराम-अवतार

भगवान् परशुराम महर्षि जमदग्नि और परम सती रेणुकाजी के पुत्र तथा महर्षि ऋचीक के पौत्र हैं। जिस समय परशुरामजी का अवतार हुआ था, उस समय पृथ्वी पर तामसी प्रवृत्ति वाले राजाओं का बाहुल्य था। उन्हीं में से एक कार्तवीर्यार्जुन ने श्रीपरशुराम जी के पिता महर्षि जमदग्नि का वध कर दिया था, जिससे क्रुद्ध होकर श्रीपरशुराम जी ने इक्कीस बार पृथ्वी को क्षत्रिय राजाओं से रहितकर सम्पूर्ण पृथ्वी महात्मा कश्यपजी को दान कर दी थी और स्वयं तपस्या करने महेन्द्राचल पर चले गये। आशुतोष भगवान् शिव के दिये अमोघ परशु को धारण करने के कारण इनका परशुराम नाम पड़ा। यथा-

क्षत्रं क्षयाय विधिनोपभृतं महात्मा
ब्रह्मध्रुगुज्झितपथं नरकार्तिलिप्सु ।
उद्धन्त्यसाववनिकण्टकमुग्रवीर्य-
स्त्रिःसप्तकृत्व उरुधारपरश्वधेन ॥
(श्रीमद्भागवत २/७/२२)

ऋचीक-पुत्री सत्यवती को कोई पुत्र नहीं हुआ और उनकी माता को भी कोई पुत्र नहीं था। सत्यवती के आग्रह पर महर्षि ऋचीक ने चरु पकाकर दो भागों में बाँट दिया। जो भाग सत्यवती के लिये था उस में ब्रह्मतेज, और जो उसकी माँ के लिये था उस में क्षत्रियतेज आमन्त्रित कर दिया गया था। सत्यवती की माता ने सत्यवती से माँगकर उसका भाग रख लिया और अपना भाग सत्यवती को दे दिया जिसने क्षत्रियतेज वाला भाग खा लिया। उस समय महर्षि ऋचीकजी स्नान करने के लिये चले गये थे। लौटने पर यह सब हाल मालूम हुआ तब सत्यवती की प्रार्थना पर महर्षि ऋचीकजी ने कहा तेरा पौत्र उग्र स्वभाव वाला होगा। यथासमय सत्यवती के महर्षि जमदग्नि हुए और जमदग्नि के यहाँ पराक्रमी भगवान् श्रीपरशुराम अवतार लिये। श्रीपरशुराम भगवान् विष्णु की कलाओं से उत्पन्न हुए। महर्षि जमदग्नि के आश्रम में एक समय राजा कार्तवीर्य अर्जुन अपनी सेना के साथ आये। महर्षि जमदग्नि के पास कामधेनु थी, उसके प्रताप से उन्होंने सेना सहित राजा का अच्छा आतिथ्य सत्कार किया। कामधेनुका अलौकिक प्रभाव देखकर राजा कार्तवीर्य अर्जुन ने महर्षि जमदग्नि जी से गाय माँगी किन्तु महर्षि ने उसे देने से इनकार कर दिया। कार्तवीर्य अर्जुन गाय को बलपूर्वक छीनकर ले गये। राजा कार्तवीर्य अर्जुन की यह उद्दण्डता श्रीपरशुराम से सही नहीं गयी, उन्होंने राजाको मार डाला और हैहयवंश के क्षत्रियों को इक्कीस बार निर्जीव कर दिया। परशुराम

ने यह सम्पूर्ण पृथिवी जीतकर ब्राह्मणों को दान दे दी। श्रीरामावतार के समय उनके अवतार का प्रयोजन समाप्त हो गया था, इससे वे तप करने के लिये महेन्द्राचल चले गये।

फिर परमात्मा श्रीहरि का जमदग्निनन्दन परशुराम के रूप में अवतार हुआ। उस अवतार में भगवान् परशुराम ने सेना के बीच में खड़े उस राजा अर्जुन का वध किया था, जो अपनी सहस्र भुजाओं के कारण घमंड में भरा रहता था और समराङ्गण में शत्रुओं के लिये दुर्जय बना हुआ था। राजा अर्जुन रथपर बैठा था, परंतु भृगुनन्दन परशुरामजी ने उसे धरती पर गिरा दिया और इच्छानुसार छाती पर चढ़कर चमकते हुए फरसे से उसकी सम्पूर्ण सहस्रों भुजाएँ काट डालीं। यद्यपि वह जाति-भाइयों एवं कुटुम्बीजनों के साथ था तो भी उसकी यह दशा हो गयी। उस समय कार्तवीर्य मेघ के समान गम्भीर स्वर में जोर-जोर से चीखता-चिल्लाता रहा। उन्होंने मेरु और मन्दराचल से विभूषित समस्त पृथ्वी पर करोड़ों क्षत्रियों की लाशें बिछा दीं तथा इक्कीस बार भूतल को क्षत्रियों से शून्य कर दिया। पृथ्वी को क्षत्रियहीन करके महातपस्वी भृगुनन्दन परशुरामने अपने सम्पूर्ण पापोंका नाश करने के लिये अश्वमेध यज्ञ का अनुष्ठान किया। जिसमें बड़ा भारी दान किया जाता है, उस अश्वमेध यज्ञ में भृगुनन्दन परशुराम ने प्रसन्न होकर मरीचिकुमार कश्यप को दक्षिणारूप से यह सारी पृथ्वी दे दी थी। महायशस्वी, महामनस्वी, रथियों में श्रेष्ठ परशुराम ने उस अश्वमेध नामक महायज्ञ में वरुण के यहाँ से प्राप्त हुए शीघ्रगामी घोड़े, रथ, अक्षय सुवर्णराशि, धेनु और गजराज भी दान में दिये थे। आज भी समस्त लोकों के हित के लिये बारम्बार तीव्र तपस्या करते हुए भृगुकुलनन्दन जमदग्निकुमार बुद्धिमान् परशुराम उत्तम महेन्द्र पर्वत पर देवताओं के समान निवास करते हैं। जनमेजय! समस्त देवताओं के स्वामी

सनातन एवं अविनाशी पुरुष परमात्मा विष्णु के इस परशुराम नामक अवतार का वर्णन किया गया–

भूयश्च जामदग्न्योऽयं प्रादुर्भावो महात्मनः ।
यत्र बाहुसहस्रेण विस्मितं दुर्जयं रणे ।
रामोऽर्जुनमनीकस्थं जघान नृपतिं प्रभुः ॥

रथस्थं पार्थिवं रामः पातयित्वार्जुनं भुवि ।
धर्षयित्वा यथाकामं क्रोशमानं चमेघवत् ॥

कृत्स्नां बाहुसहस्रं च चिच्छेद भृगुनन्दनः ।
परश्वधेन दीप्तेन ज्ञातिभिः सहितस्य वै ॥

कीर्णा क्षत्रियकोटीभिर्मेरुमन्दरभूषणा ।
त्रिःसप्तकृत्वः पृथिवी तेन निःक्षत्रिया कृता ॥

कृत्वा निःक्षत्रियां चौव भार्गवः सुमहातपाः ।
सर्वपापविनाशाय वाजिमेधेन चेष्टवान् ॥

तस्मिन् यज्ञे महादाने दक्षिणां भृगुनन्दनः ।
मारीचाय ददौ प्रीतः कश्यपाय वसुंधराम् ॥

वारुणांस्तुरगाञ्छीघ्रान् रथं च रथिनां वरः ।
हिरण्यमक्षयं धेनूर्गजेन्द्रांश्च महामनाः ।
ददौ तस्मिन् महायज्ञे वाजिमेधे महायशाः ॥

अद्यापि च हितार्थाय लोकानां भृगुनन्दनः ।
चरमाणस्तपो दीप्तं जामदग्न्यः पुनः पुनः ।
तिष्ठते देववद् धीमान् महेन्द्रे पर्वतोत्तमे ॥

एष विष्णोः सुरेशस्य शाश्वतस्याव्ययस्य च।
जामदग्न्य इति ख्यातः प्रादुर्भावो महात्मनः ॥

(हरिवंशपुराण, हरिवंशपर्व ४१/११२–१२०)

## श्रीराम-अवतार

श्रुति तथा तत्प्रतिपाद्य परब्रह्मका ज्ञान दुरधिगम होनेके कारण श्रुतिका रामायण एवं ब्रह्म का श्रीरामरूप में अवतरण हुआ-

**वेदवेद्ये परे पुंसि जाते दशरथात्मजे ।**
**वेदः प्राचेतसादासीत् साक्षाद्रामायणात्मना ॥**
**वेदोपबृंहणार्थाय तावग्राहयत प्रभुः ॥**

(श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण १/४/६)

वेदावतार श्रीमद्रामायण पाठक को बड़ी ही मधुर कोमलकान्त पदावली में रामचरित्र की दिव्यामृतमयी सुरसरिता में अवगाहितकर परब्रह्म श्रीराम के समक्ष उपस्थित करती है। देवता लोग परोक्षप्रिय होते हैं, अतः वेद या वेदावतार रामायण भी परोक्षरीति से यत्र-तत्र राम के परब्रह्मत्व का प्रतिपादन करती है। विष्णुके अवतार परशुराम कहते हैं- त्रैलोक्यनाथ प्रभो! आप द्वारा पराभूत होकर मैं पीड़ा का अनुभव नहीं करता। आप निश्चय ही मधुसूदन ही हैं। श्री गोस्वामी तुलसीदास जी कहते हैं-

**राम प्रानप्रिय जीवन जी के । स्वारथ रहित सखा सबही के ॥**

(श्रीरामचरितमानस २/७३/३)

श्रीभगवान् के प्रिय पार्षदों जय-विजय का सनकादि मुनियों के शाप से तीन जन्म असुरकुल में होना था और परम करुणामय प्रभुको उनका उद्धार करना था। अतः जब वे हिरण्याक्ष-हिरण्यकशिपु हुए तो भगवान् ने वराह और नृसिंह-अवतार लेकर उनका उद्धार किया। इसके पश्चात् वे ही दोनों रावण-कुम्भकर्ण के रूप में उत्पन्न हुए, अतः श्रीहरि ने श्रीरामरूप में अवतार लेकर उनका उद्धार किया। इस अवतार की एक अन्य पृष्ठभूमि के रूप में भगवान् का मनु-शतरूपा को उनका पुत्र बनने का वरदान देना भी

है। मनु-शतरूपा दूसरे जन्म में अयोध्या के राजा दशरथ और महारानी कौसल्या हुए और परब्रह्म परमात्मा ने उनके यहाँ उनके चार पुत्रों- राम, लक्ष्मण, भरत और शत्रुघ्न के रूप में अवतार लिया। परब्रह्म परमात्मा की लीलाशक्ति ही महाराज जनक के यहाँ उनकी पुत्री भगवती सीता के रूप में अवतरित हुईं और श्रीराम की अर्द्धांगिनी बनीं। भगवान् वाल्मीकि जी कहते हैं-

**ततो यज्ञे समाप्ते तु ऋतूनां षट् समत्ययुः ।**
**ततश्च द्वादशे मासे चैत्रे नावमिके तिथौ ॥**
**नक्षत्रेऽदितिदैवत्ये स्वोच्चसंस्थेषु पञ्चसु ।**
**ग्रहेषु कर्कटे लग्ने वाक्पताविन्दुना सह ॥**
**प्रोद्यमाने जगन्नाथं सर्वलोकनमस्कृतम् ।**
**कौसल्याजनयद् रामं दिव्यलक्षणसंयुतम् ॥**
**विष्णोरर्धं महाभागं पुत्रमैक्ष्वाकुनन्दनम् ।**
**लोहिताक्षं महाबाहुं रक्तोष्ठं दुन्दुभिस्वनम् ॥**

(श्रीमद्वाल्मीकीरामायण १/१८/८-११)

यज्ञ-समाप्ति के पश्चात् जब छः ऋतुएँ बीत गयीं, तब बारहवें मास में चैत्र के शुक्लपक्ष की नवमी तिथि को पुनर्वसु नक्षत्र एवं कर्क लग्न में कौसल्या देवी ने दिव्य लक्षणों से युक्त, सर्वलोकवन्दित जगदीश्वर श्रीरामको जन्म दिया। उस समय सूर्य, मंगल, शनि, गुरु और शुक्र-ये पाँच ग्रह अपने-अपने उच्च स्थान में विद्यमान थे तथा लग्न में चन्द्रमा के साथ भगवान् बृहस्पति विराजमान थे । भक्तवत्सल श्री राम विष्णुस्वरूप हविष्य या खीर के आधे भाग से प्रकट हुए थे। कौसल्या के महाभाग पुत्र श्रीराम इक्ष्वाकुकुल का आनन्द बढ़ाने वाले थे। उनके नेत्रों में कुछ-कुछ लालिमा थी। उनके ओठ लाल, भुजाएँ बड़ी-बड़ी और स्वर दुन्दुभि के शब्दके समान गम्भीर था। गोस्वामी तुलसीदास जी लिखते हैं-

सुर समूह बिनती करि पहुँचे निज निज धाम।
जगनिवास प्रभु प्रगटे अखिल लोक बिश्राम।।
भए प्रगट कृपाला दीनदयाला कौसल्या हितकारी ।
हरषित महतारी मुनि मन हारी अद्भुत रूप बिचारी ।।
लोचन अभिरामा तनु घनस्यामा निज आयुध भुजचारी ।
भूषन बनमाला नयन बिसाला सोभासिंधु खरारी ।।
कह दुइ कर जोरी अस्तुति तोरी केहि बिधि करौं अनंता ।
मायागुनग्यानातीत अमाना बेद पुरान भनंता ।।
करुनासुखसागर सब गुन आगर जेहि गावहिं श्रुति संता ।
सो मम हित लागी जन अनुरागी भए प्रगट श्रीकंता ।।
ब्रह्मांड निकाया निर्मित माया रोम रोम प्रति बेद कहै ।
मम उर सो बासी यह उपहासी सुनत धीर मति थिर न रहै ।।
उपजा जब ग्याना प्रभु मुसुकाना चरित बहुत बिधि कीन्ह चहै।
कहि कथा सुहाई मातु बुझाई जेहि प्रकार सुत प्रेम लहै ।।
माता पुनि बोली सो मति डोली तजहु तात यह रूपा ।
कीजै सिसुलीला अति प्रियसीला यह सुख परम अनूपा ।।
सुनि बचन सुजाना रोदन ठाना होइ बालक सुरभूपा ।
यह चरित जे गावहिं हरिपद पावहिं ते न परहिं भवकूपा ।।
बिप्र धेनु सुर संत हित लीन्ह मनुज अवतार ।
निज इच्छा निर्मित तनु माया गुन गो पार ।।

(श्रीरामचरितमानस, बालकाण्ड-१९१-१९२)

भगवान् वेदव्यास जी कहते हैं-

अस्मत्प्रसादसुमुखः कलया कलेश
इक्ष्वाकुवंश अवतीर्य गुरोर्निदेशे ।
तिष्ठन् वनं सदयितानुज आविवेश
यस्मिन् विरुध्य दशकन्धर आर्तिमार्च्छत् ।।

(श्रीमद्भागवत २/७/२३)

**गुर्वर्थे त्यक्तराज्यो व्यचरदनुवनं**
**पद्मपद्भ्यां प्रियायाः**
**पाणिस्पर्शाक्षमाभ्यां मृजितपथरुजो**
**यो हरीन्द्रानुजाभ्याम् ।**
**वैरूप्याच्छूर्पणख्याः प्रियविरहरुषा-**
**ऽऽरोपितभ्रूविजृम्भ-**
**त्रस्ताब्धिर्बद्धसेतुः खलदवदहनः**
**कोसलेन्द्रोऽवतान्नः ॥**

(श्रीमद्भागवत ९/१०/४)

हरिवंश महापुराण के अनुसार रामावतार की कथा इस प्रकार है। चौबीसवें त्रेतायुग में भगवान् विष्णु राजा दशरथ के पुत्र कमलनयन श्रीराम के रूप में प्रकट हुए और कुछ काल तक विश्वामित्र के अनुयायी रहे। उस समय सर्वसमर्थ महाबाहु भगवान् अपने को चार रूपों में प्रकट करके स्वयं श्रीराम नाम से विख्यात हुए। वे श्रीराम सूर्य के समान तेजस्वी थे। महायशस्वी श्रीराम सब लोगों को प्रसन्न रखने, राक्षसों को मारने और धर्म की वृद्धि करने के लिये उस समय अवतीर्ण हुए थे।

**चतुर्विंशे युगे चापि विश्वामित्रपुरस्सरः ।**
**राज्ञो दशरथस्याथ पुत्रः पद्मायतेक्षणः ॥**

**कृत्वाऽऽत्मानं महाबाहुश्चतुर्धा प्रभुरीश्वरः ।**
**लोके राम इति ख्यातस्तेजसा भास्करोपमः ॥**

**प्रसादनार्थं लोकस्य रक्षसां निधनाय च ।**
**धर्मस्य च विवृद्ध्यर्थं जज्ञे तत्र महायशाः ॥**

(हरिवंशपुराण, हरिवंशपर्व ४१/१२१-१२३)

ज्ञानी पुरुष उन नरेन्द्र श्रीराम को समस्त भूतों के स्वामी भगवान् विष्णुका अवतार-विग्रह बताते हैं, जिन्हें परम बुद्धिमान् विश्वामित्रजी ने देव-द्रोही असुरों का वध करने के लिये ऐसे दिव्यास्त्र प्रदान किये थे, जिन्हें धारण करना देवताओं के लिये भी कठिन था। महात्मा श्रीराम ने पवित्र अन्तःकरण वाले मुनियों के यज्ञ में विघ्न डालने वाले बलवानों में श्रेष्ठ मारीच और सुबाहु को अपने बाणों का निशाना बनाया और उनकी आशा पूर्ण होने नहीं दी। पूर्वकाल में जब महात्मा राजा जनक के यहाँ यज्ञ हो रहा था, उस समय उन्हीं श्रीराम ने खेल-सा करते हुए महादेवजी के धनुष को अनायास ही तोड़ डाला था। वे सम्पूर्ण धर्मों के ज्ञाता तथा समस्त प्राणियों के हित में तत्पर रहने वाले थे। उन्होंने लक्ष्मण को साथ ले चौदह वर्षों तक वन में निवास किया। उस समय उनके साथ मूर्तिमती लक्ष्मी भी थीं, जो लोगों में 'सीता' के नाम से प्रसिद्ध थीं। वे उनकी पूर्वोचित पत्नी थीं और पति के पीछे-पीछे वन में गयी थीं। चौदह वर्षों तक वन में तपस्या कर के जनस्थान में निवास करते हुए रघुनन्दन श्रीराम ने देवताओं का अभीष्ट कार्य सिद्ध किया। उन भगवान् श्रीराम ने सीता का पता लगाते हुए लक्ष्मण के साथ जाकर भयानक पराक्रमी राक्षस विराध और कबन्ध को मार डाला। वे दोनों वास्तव में पुरुषसिंह गन्धर्व थे, किंतु शाप-ग्रस्त होकर राक्षस हो गये थे। इन राक्षसों पर श्रीरामचन्द्रजी ने ऐसे बाणों द्वारा प्रहार किया, जो अग्नि, सूर्य, चन्द्रमा, बिजली और मेघ के समान प्रकाशित होते थे, जिनके विचित्र पङ्ख तपाये हुए जाम्बूनद नामक सुवर्ण के बने हुए थे और जो इन्द्र के वज्र तथा विद्युत् के समान शक्तिशाली थे। उन बाणों द्वारा उन्होंने बलपूर्वक उन दोनों राक्षसों को शरीर से विलग कर दिया। श्रीराम ने अपने मित्र सुग्रीव के लिये युद्ध में महाबली वानरराज बाली को मार

डाला और उसके राज्य पर सुग्रीव का अभिषेक कर दिया। उन दिनों राक्षस राज रावण देवता, असुर, यक्ष, गन्धर्व और नागों के लिये अवध्य हो रहा था। युद्ध में वह उन्मत्त होकर लड़ता था। करोड़ों राक्षस उसके सहायक थे। उसका शरीर काले अञ्जन के ढेर के समान था। त्रिलोकी को रुलाने वाला वह भयंकर राक्षसराज रावण दुर्जय और दुर्द्धर्ष था–

तमप्याहुर्मनुष्येन्द्रं सर्वभूतपतेस्तनुम् ।
यस्मै दत्तानि चास्त्राणि विश्वामित्रेण धीमता ॥

वधार्थं देवशत्रूणां दुर्धराणि सुरैरपि ।
यज्ञविघ्नकरो येन मुनीनां भावितात्मनाम् ॥

भामारीचश्च सुबाहुश्च बलेन बलिनां वरौ ।
निहतौ च निराशौ च कृतौ तेन महात्मना ॥

वर्तमाने मखे येन जनकस्य महात्मनः ।
भग्नं माहेश्वरं चापं क्रीडता लीलया पुरा ॥

यः समाः सर्वधर्मज्ञश्चतुर्दश वनेऽवसत् ।
लक्ष्मणानुचरो रामः सर्वभूतहिते रतः ॥

रूपिणी यस्य पार्श्वस्था सीतेति प्रथिता जनैः ।
पूर्वोचिता तस्य लक्ष्मीर्भर्तारमनुगच्छति ॥

चतुर्दश तपस्तप्त्वा वने वर्षाणि राघवः ।
जनस्थाने वसन् कार्यं त्रिदशानां चकार ह ॥

सीतायाः पदमन्विच्छँल्लक्ष्मणानुचरो विभुः ।
विराधं च कबन्धं च राक्षसौ भीमविक्रमौ ।
जघान पुरुषव्याघ्रौ गन्धर्वौ शापवीक्षितौ ॥

**हुताशनार्केन्दुतडिद्घनाभैः**
**प्रतप्तजाम्बूनदचित्रपुङ्खैः ।**
**महेन्द्रवज्राशनितुल्यसारैः**
**शरैः शरीरेण वियोजितौ बलात्॥**

**सुग्रीवस्य कृते येन वानरेन्द्रो महाबलः ।**
**वाली विनिहतो युद्धे सुग्रीवश्चाभिषेचितः ॥**

**देवासुरगणानां हि यक्षगन्धर्वभोगिनाम् ।**
**अवध्यं राक्षसेन्द्रं तं रावणं युद्धदुर्मदम् ॥**

**युक्तं राक्षसकोटीभिर्नीलाञ्जनचयोपमम् ।**
**त्रैलोक्य रावणं घोरं रावणं राक्षसेश्वरम् ॥**

(हरिवंशपुराण, हरिवंशपर्व ४१/१२४-१३५)

राक्षसराज रावण का पराक्रम सिंह के समान था। उसका घमंड बहुत बढ़ा हुआ था। वरदान के कारण वह और भी घमंडी हो गया था। देवताओं के लिये उसकी ओर देखना भी कठिन था। उसका शरीर मेघों की घटा के समान काला था। भगवान् श्रीराम ने उस महाकाय महाबली रावण का युद्ध में मन्त्रियों तथा सेनाओं सहित संहार कर डाला। पुलस्त्य-पौत्र रावण भयानक अपराधी था, उसका प्रत्येक निश्चय क्रूरता से पूर्ण होता था युद्ध में उस पर विजय पाना कठिन था तो भी सम्पूर्ण भूतों के पालक भगवान् श्रीराम ने पूर्वकाल में उसे भाई, पुत्र, मन्त्री और सेनाओं सहित शीघ्रता पूर्वक मार डाला। उन्हीं दिनों मधुवन (मथुरा)-में लवण नामक दानव रहता था, जो मधु का पुत्र था। वह महान् असुर वीर तो था ही, मनोवाञ्छित वर पा जाने के कारण और भी घमंड में भर गया था। वह श्रीराम के ही स्वरूपभूत शत्रुघ्न के हाथ से मारा गया। युद्धकुशल श्रीराम- ने समराङ्गण में और भी बहुत-से राक्षसों

का संहार किया। इन सब पराक्रमपूर्ण कर्मों का सम्पादन करके धर्मात्माओं में श्रेष्ठ श्रीराम ने तीनगुनी दक्षिणा से युक्त दस अश्वमेध यज्ञ किये जो बिना किसी विघ्न-बाधा के पूर्ण हो गये। श्रीरामचन्द्र जी जब राज्य का शासन करते थे, उन दिनों कहीं अशुभ बातें नहीं सुनी जाती थीं, वायु प्रचण्ड वेग से नहीं चलती थी तथा कोई किसी के धन का अपहरण नहीं करता था। श्रीराम के राज्य-शासनकाल में कभी विधवाओं का करुण क्रन्दन नहीं सुना गया। कहीं भी अनर्थपूर्ण घटनाएँ नहीं घटित हुईं। सारे जगत् के लोग मन और इन्द्रियों का संयम रखकर विनीत एवं अनुशासित रहते थे। श्रीराम के राज्यकाल में प्राणियों को जल और अग्नि से मृत्यु का भय कभी नहीं होता था और बूढ़ों को बालकों की प्रेतक्रिया नहीं करनी पड़ती थी। क्षत्रिय ब्राह्मणों की परिचर्या करते थे, वैश्य क्षत्रियों के प्रति श्रद्धा रखते थे और शूद्र अहंकार छोड़कर ब्राह्मण आदि तीनों वर्णों की सेवा करते थे। श्रीराम के राज्य में स्त्रियाँ अपने पति को छोड़कर दूसरे किसी पुरुष में आसक्त नहीं होती थीं और पुरुष भी अपनी पत्नी के सिवा दूसरी किसी स्त्री पर आसक्तिपूर्ण दृष्टि नहीं डालते थे। उस समय सारा जगत् जितेन्द्रिय था। पृथ्वी पर डाकुओं का कहीं नाम भी नहीं था। एकमात्र श्रीराम ही सबके स्वामी और संरक्षक थे-

**दुर्जयं दुर्धरं दृप्तं शार्दूलसमविक्रमम् ।**
**दुर्निरीक्ष्यं सुरगणैर्वरदानेन दर्पितम् ॥**

**जघान सचिवैः सार्द्धं ससैन्यं रावणं युधि ।**
**महाभ्रघनसंकाशं महाकायं महाबलम् ॥**

**तमागस्कारिणं घोरं पौलस्त्यं युधि दुर्जयम् ।**
**सभ्रातृपुत्रसचिवं ससैन्यं क्रूरनिश्चयम् ॥**

रावणं निजघानाशु रामो भूतपतिः पुरा ।
मधोश्च तनयो दृप्तो लवणो नाम दानवः ॥

हतो मधुवने वीरो वरदृप्तो महासुरः ।
समरे युद्धशौण्डेन तथा चान्येऽपि राक्षसाः ॥

एतानि कृत्वा कर्माणि रामो धर्मभृतां वरः ।
दशाश्वमेधाञ्जारूथ्यानाजहार निरर्गलान् ॥

नाश्रूयन्ताशुभा वाचो नाकुलं मारुतो ववौ ।
न वित्तहरणं त्वासीद्र रामे राज्यं प्रशासति ॥

पर्यदेवन्न विधवा नानर्थाश्चाभवंस्तदा ।
सर्वमासीज्जगद्दान्तं रामे राज्यं प्रशासति ॥

न प्राणिनां भयं चापि जलानलनिघातजम् ।
न च स्म वृद्धा बालानां प्रेतकार्याणि कुर्वते ॥

ब्रह्म पर्यचरत् क्षत्रं विशः क्षत्रमनुव्रताः ।
शूद्राश्चैव हि वर्णांस्त्रीञ्छुश्रूषन्त्यनहंकृताः ।
नार्यो नात्यचरन् भर्तॄन् भार्यां नात्यचरत् पतिः ॥

सर्वमासीज्जगद् दान्तं निर्दस्युरभवन्मही ।
राम एकोऽभवद् भर्त्ता रामः पालयिताभवत् ॥

(हरिवंशपुराण, हरिवंशपर्व ४१/१३६–१४६)

श्रीराम के शासनकाल में मनुष्यों की आयु हजारों वर्ष की होती थी। वे सहस्त्रों पुत्रों के पिता होते थे और किसी भी प्राणी को रोग नहीं सताता था। भगवान् श्रीराम जब यहाँ राज्यशासन करते थे, उन दिनों इस भूतलपर देवता, ऋषि और मनुष्यों का सब ओर समागम होता रहता था। श्रीराम के विषय में 'वे ही परम तत्त्व हैं'

ऐसी दृढ़ आस्था रखने वाले पुराणवेत्ता पुरुष इस प्रसङ्ग में निम्नाङ्कित गाथाएँ गाया करते हैं, जो उन बुद्धिमान् श्रीरघुनाथजी के माहात्म्य को सूचित करती हैं-'श्रीरामचन्द्रजी का वर्ण श्याम था, वे सदा तरुण दिखायी देते थे, उनके नेत्र लालिमा लिये हुए थे, मुख से तेज बरसता रहता था, वे बहुत कम बोलते थे, उनकी लम्बी भुजाएँ घुटनों तक पहुँचती थीं, उनका मुख बड़ा सुन्दर था, कंधे सिंह के से जान पड़ते थे, महाबाहु श्रीराम ने अयोध्या के अधिपति होकर ग्यारह हजार वर्षों तक राज्य किया था। उनके राज्य में सदा ऋग्वेद, सामवेद और यजुर्वेद का घोष सुनायी देता था। धनुष की प्रत्यञ्चा खींचने से उसकी टंकार-ध्वनि भी सदा श्रवण गोचर होती रहती थी तथा दान देने और भोजन कराने का उपदेश कभी बंद नहीं होता था। दशरथनन्दन श्रीराम सत्त्ववान् और गुणवान् होने के साथ ही सदा अपने तेज से देदीप्यमान रहते थे। उनकी सूर्य और चन्द्रमा से भी अधिक शोभा होती थी। श्रीरघुनाथजी ने पर्याप्त एवं उत्तम दक्षिणाओं से युक्त सैकड़ों पवित्र यज्ञों का अनुष्ठान किया था। अन्त में वे अयोध्या के महान् जन-समुदाय को साथ ले अपनी उस पुरी को छोड़कर साकेत धाम को पधारे। इस प्रकार इक्ष्वाकुकुल का आनन्द बढ़ाने वाले ये महाबाहु भगवान् श्रीराम दलबल सहित रावण का संहार करके अपने परमधाम को चले गये।

**आयुर्वर्षसहस्त्राणि तथा पुत्रसहस्त्रिणः ।**
**अरोगाः प्राणिनश्चासन् रामे राज्यं प्रशासति ॥**

**देवतानामृषीणां च मनुष्याणां च सर्वशः ।**
**पृथिव्यां समवायोऽभूद् रामे राज्यं प्रशासति ॥**

**गाथा अप्यत्र गायन्ति ये पुराणविदो जनाः ।**
**रामे निबद्धतत्त्वार्था माहात्म्यं तस्य धीमतः ॥**

श्यामो युवा लोहिताक्षो दीप्तास्यो मितभाषिता ।
आजानुबाहुः सुमुखः सिंहस्कन्धो महाभुजः ॥

दश वर्षसहस्राणि दश वर्षशतानि च ।
अयोध्याधिपतिर्भूत्वा रामो राज्यमकारयत् ॥

ऋक्सामयजुषां घोषो ज्याघोषश्च महात्मनः ।
अव्युच्छिन्नोऽभवद्राज्ये दीयतां भुज्यतामिति ॥

सत्त्ववान् गुणसम्पन्नो दीप्यमानः स्वतेजसा ।
अति चन्द्रं च सूर्यं च रामो दाशरथिर्बभौ ॥

ईजे क्रतुशतैः पुण्यैः समाप्तवरदक्षिणैः ।
हित्वायोध्यां दिवं यातो राघवः समहाबलः ॥

एवमेष महाबाहुरिक्ष्वाकुकुलनन्दनः ।
रावणं सगणं हत्वा दिवमाचक्रमे प्रभुः ॥

(हरिवंशपुराण, हरिवंशपर्व ४१/१४७-१५५)

## ● श्रीकृष्ण-अवतार

श्रीहरि ने वसुदेव-देवकी जो पूर्वजन्म में कश्यप और अदिति थे, के यहाँ लीलापुरुषोत्तम श्रीकृष्ण के रूप में अवतार लिया। भगवान् श्रीकृष्ण के अवतार के समय वसुदेव-देवकी कंस के कारागार में बन्दी थे। श्रीकृष्ण का बचपन नन्द-यशोदा के यहाँ गोकुल और वृन्दावन में बीता, जहाँ उन्होंने माखन-चोरी, वंशी-वादन, महारास, गोचारण आदि अनेक माधुर्यलीलाएँ करके व्रजवासियों को आनन्दित किया। साथ ही उन्होंने अपनी ऐश्वर्यलीला का प्रदर्शन करते हुए उस समय के कंस, शिशुपाल, शाल्व, दन्तवक्त्र, पौण्ड्रक के समान अनेक तामसी प्रवृत्ति के राजाओं का उनके सहायकों एवं सेनाओं सहित संहार किया तथा जरासंध, दुर्योधन, भगदत्त-जैसे

अन्य अनेक आसुरी प्रवृत्ति वाले राजाओं का अपने भक्त पाण्डवों द्वारा संहार कराकर पृथ्वी का भार उतारा और अर्जुन को गीता-ज्ञान दिया। भगवान् वेदव्यास कहते हैं-

**भूमेः सुरेतरवरूथविमर्दितायाः**
**क्लेशव्ययाय कलया सितकृष्णकेशः ।**
**जातः करिष्यति जनानुपलक्ष्यमार्गः**
**कर्माणि चात्ममहिमोपनिबन्धनानि ॥**

(श्रीमद्भागवत २/७/२६)

हरिवंश महापुराण के अनुसार कृष्णावतार की कथा इस प्रकार है। वैशम्पायनजी कहते हैं- जनमेजय! इसके बाद परमात्मा भगवान् केशव का 'श्रीकृष्ण' नामक अवतार माथुर कल्प (मथुरामण्डल) में हुआ, जो सर्वत्र विख्यात है। भगवान् का यह अवतार सम्पूर्ण जगत् के हित के लिये हुआ था। इस अवतार में परम पराक्रमी हरि ने शाल्व, मैन्द, द्विविद, कंस, अरिष्ट, ऋषभ, केशी, दैत्य-कन्या पूतना, कुवलयापीड़ हाथी, चाणूर तथा मुष्टिक आदि मनुष्य-शरीरधारी दैत्यों का संहार किया था। इसके अतिरिक्त उन्होंने अद्‌भुत कर्म करनेवाले बाणासुर की सहस्र भुजाएँ काट डालीं, युद्ध में नरकासुर का नाश किया और महाबली कालयवन को भस्म कर दिया। इतना ही नहीं, उन्होंने अपने तेज से दुर्दान्त भूमिपालों के सभी रत्न छीन लिये और भूतल के दुराचारी राजाओं को मौत के घाट उतार दिया-

**अपरः केशवस्यायं प्रादुर्भावो महात्मनः ।**
**विख्यातो माथुरे कल्पे सर्वलोकहिताय वै ॥**

**यत्र शाल्वं च मैन्दं च द्विविदं कंसमेव च ।**
**अरिष्टमृषभं केशिं पूतनां दैत्यदारिकाम् ॥**

**नागं कुवलयापीडं चाणूरं मुष्टिकं तथा ।**
**दैत्यान् मानुषदेहस्थान् सूदयामास वीर्यवान् ॥**

**छिन्नं बाहुसहस्रं च बाणस्याद्भुतकर्मणः ।**
**नरकश्च हतः संख्ये यवनश्च महाबलः ॥**

**हृतानि च महीपानां सर्वरत्नानि तेजसा ।**
**दुराचाराश्च निहताः पार्थिवाश्च महीतले ॥**

(हरिवंशपुराण, हरिवंशपर्व ४१/१५६-१६०)

## ● श्रीबुद्ध-अवतार

महाराज शुद्धोदन के यशस्वी पुत्र गौतम बुद्ध के रूप में श्रीभगवान् ही अवतरित हुए थे। भगवान् बुद्धदेव का प्राकट्य गया के समीप कीकट देश में हुआ था। उनके पुण्यात्मा पिताका नाम 'अजन' बताया गया है। जीवोंपर दया प्रकट करने तथा अहिंसाधर्म की स्थापना करने के लिये भगवान् बुद्ध का अवतार हुआ-

**देवद्विषां निगमवर्त्मनि निष्ठितानां**
**पूर्भिर्मयेन विहिताभिरदृश्यतूर्भिः ।**
**लोकान् घ्नतां मतिविमोहमतिप्रलोभं**
**वेषं विधाय बहु भाष्यत औपधर्म्यम् ॥**

(श्रीमद्भागवत २/७/३७)

## ● श्रीकल्कि-अवतार

कलियुग के अन्त में जब सत्पुरुषों के घर भी भगवान् की कथा में बाधा होगी, ब्राह्मण-क्षत्रिय और वैश्य पाखण्डी हो जायेंगे और शूद्र राजा होंगे, यहाँ तक कि कहीं भी स्वाहा, स्वधा और वषट्कार की ध्वनि नहीं सुनायी पड़ेगी, राजा लोग प्रायः लुटेरे हो जायँगे, तब कलियुग का शासन करने के लिये भगवान् बालकरूप

में शंभल ग्राम में विष्णुयश के घर में अवतार ग्रहण करेंगे। श्रीपरशुरामजी उनको वेद पढ़ायेंगे। आशुतोष भगवान् शङ्कर जी शस्त्रास्त्रों का संधान सिखायेंगे, साथ ही एक घोड़ा और एक खड्ग देंगे। तब कल्किभगवान् ब्राह्मणों की सेना साथ लेकर संसार में सर्वत्र फैले हुए म्लेच्छों का नाश करके सत्ययुग के प्रवर्तक होंगे। यथा–

**यर्ह्यालयेष्वपि सतां न हरेः कथाः स्युः**
**पाखण्डिनो द्विजजना वृषला नृदेवाः ।**
**स्वाहा स्वधा वषडिति स्म गिरो न यत्र**
**शास्ता भविष्यति कलेर्भगवान् युगान्ते ॥**

(श्रीमद्भागवत २/७/३८)

हरिवंश महापुराण के अनुसार कल्कि अवतार की कथा इस प्रकार है। कलयुग में भावी अवतारों में पहले 'बुद्ध' का प्राकट्य होगा। इसके बाद विष्णुयशा नाम से प्रसिद्ध कल्कि अवतार होने वाला है। भगवान् विष्णु शम्भल नामक ग्राम में सम्पूर्ण जगत् के हित के लिये पुनः एक ब्राह्मण के रूप में प्रकट होंगे–

**कल्किर्विष्णुयशा नाम शम्भले ग्रामके द्विजः ।**
**सर्वलोकहितार्थाय भूयश्चोत्पत्स्यते प्रभुः ॥**

(हरिवंशपुराण, हरिवंशपर्व ४१/१६४)

कल्कि अवतार दुष्टों के संहार और धर्मकी संस्थापना को सिद्ध करने की शक्ति से सम्पन्न होगा। भगवान् कल्कि भवितव्यता से प्रेरित होकर अधर्म के पथपर चलने वाले उन समस्त पापाचारियों का संहार करके अपने अनुयायियों सहित गङ्गा और यमुना के मध्यवर्ती देश में अपने अवतारकार्य को समाप्त करेंगे। तदनन्तर मन्त्री और सैनिकों सहित राजवंश के विनष्ट हो जाने पर जब कोई

शासक नरेश नहीं रह जायेगा, तब सारी प्रजा बेलगाम होकर स्वेच्छाचार में प्रवृत्त हो जायेगी। रक्षा की राजकीय व्यवस्था समाप्त हो जानेपर लोग आपस में लड़ेंगे और उस युद्ध में एक-दूसरे को मारकर नष्ट हो जायँगे। आपस में एक-दूसरे का धन लूटकर असहाय एवं अत्यन्त दुःखी हो जायँगे। उस समय कलियुग का संध्यांश बीत रहा होगा, उन दिनों इस प्रकार कष्ट में पड़ी हुई सारी प्रजा कलियुग के साथ ही नष्ट हो जायगी-ऐसी बात कही जाती है। कलियुग के समाप्त हो जानेपर फिर स्वभाव से ही सत्ययुग की यथोचितरूप से प्रवृत्ति होगी, दूसरे किसी प्रकार से नहीं-

**दशमे भाव्यसम्पन्नो याज्ञवल्क्यपुरस्सरः ।**
**क्षपयित्वा च तान् सर्वान् भाविनार्थेन चोदितान् ॥**

**गङ्गायमुनयोर्मध्ये निष्ठां प्राप्स्यति सानुगः ।**
**ततः कुले व्यतीते तु सामात्ये सहसैनिके ॥**

**नृपेष्वथ प्रणष्टेषु तदा त्वप्रग्रहाः प्रजाः ।**
**रक्षणे विनिवृत्ते च हत्वा चान्योन्यमाहवे ॥**

**परस्परहृतस्वाश्च निराक्रन्दाः सुदुःखिताः ।**
**एवं कष्टमनुप्राप्ताः कलिसंध्यांशके तदा ।**
**प्रजाः क्षयं प्रयास्यन्ति सार्द्धकलियुगेनह ॥**

**क्षीणे कलियुगे तस्मिंस्ततः कृतयुगं पुनः ।**
**प्रपत्स्यते यथान्यायं स्वभावादेव नान्यथा ॥**

(हरिवंशपुराण, हरिवंशपर्व ४१/१६५-१६९)

## ● श्रीव्यास-अवतार

वेदव्यासजी भगवान् श्रीहरि के वाङ्मयावतार हैं। महाभागा सत्यवती को उनकी माता और महर्षि पराशर को उनके पिता होने

का गौरव प्राप्त है। इसीलिये वे 'पाराशर्य' और 'सत्यवतीनन्दन' कहे जाते हैं। यमुनाजी के एक द्वीप में जन्म होने के कारण वे 'द्वैपायन' और कृष्ण वर्ण होने के कारण 'कृष्णद्वैपायन' कहलाये। बदरीवन में रहने के कारण उनको 'बादरायण' कहा जाता है। वेदों का विभाजन करने के कारण वे 'वेदव्यास' कहे जाते हैं। आपने ब्रह्मसूत्र, व्यासस्मृति, अठारह महापुराण, उपपुराण और उपौपपुराणों की भी रचना की। इनके अतिरिक्त 'पंचमवेद' के नाम से विख्यात महान् ग्रन्थ 'महाभारत' भी व्यास जी की रचना है। परम भागवत शुकदेव जी व्यास जी के पुत्र थे, जिन्होंने परीक्षित् के माध्यम से कलि के जीवों के उद्धार के लिये भागवतरूपी सुधाधारा पृथ्वी लोक पर प्रवाहित की–

**सुषुवे यमुनाद्वीपे पुत्रं काममिवापरम् ।**
**जातमात्रस्तु तेजस्वी तामुवाच स्वमातरम् ॥**
**तपस्येव मनः कृत्वा विविशे चातिवीर्यवान् ।**
**गच्छ मातर्यथाकामं गच्छाम्यहमतः परम् ॥**
**तपः कर्तुं महाभागे दर्शयिष्यामि वै स्मृतः ।**
**मातर्यदा भवेत्कार्यं तव किञ्चिदनुत्तमम् ॥**
**स्मर्तव्योऽहं तदा शीघ्रमागमिष्यामि भामिनि ।**
**स्वस्ति तेऽस्तु गमिष्यामि त्यक्त्वा चिन्तां सुखं वस ॥**
**इत्युक्त्वा निर्ययौ व्यासः सापि पित्रन्तिकं गता ।**
**द्वीपे न्यस्तस्तया बालस्तस्माद् द्वैपायनोऽभवत् ॥**

(श्रीमद्देवीभागवत् २/२/३७–४१)

**कालेन मीलितधियामवमृश्य नृणां**
**स्तोकायुषां स्वनिगमो बत दूरपारः ।**
**आविर्हितस्त्वनुयुगं स हि सत्यवत्यां**
**वेदद्रुमं विटपशो विभजिष्यति स्म ॥**

(श्रीमद्भागवत २/७/३६)

हरिवंश महापुराण के अनुसार व्यास अवतार की कथा इस प्रकार है। अट्ठाईसवें द्वापर में भगवान् विष्णु का जातूकर्ण्य के रूप में प्राकट्य हुआ था, जो कालान्तर में वेदव्यास के नाम से प्रसिद्ध हुआ। उन सत्यवतीपुत्र महात्मा व्यास ने एक वेदके चार विभाग किये और उन्होंने ही भरतवंश की लुप्त हुई पवित्र परम्परा को पुनः प्रचलित किया-

**नवमे द्वापरे विष्णुरष्टाविंशे पुराभवत् ।**
**वेदव्यासस्तथा जज्ञे जातूकर्ण्यपुरस्सरः ॥ १६१**

**एको वेदश्चतुर्धा तु कृतस्तेन महात्मना ।**
**जनितो भारतो वंशः सत्यवत्याः सुतेन च ॥ १६२**

(हरिवंशपुराण, हरिवंशपर्व ४१/१६१-१६२)

## ● श्रीपृथु-अवतार

महाराज पृथु भगवान् श्रीविष्णु की विश्वपालनी कला से प्रकट हुए थे। प्रभु की नित्य सहचरी भगवती लक्ष्मी के अंश से उनकी महारानी अर्चिका का अवतार हुआ था। महाराज पृथु से पूर्व पृथ्वी के समतल न होने से पुर और ग्राम आदिका कोई विभाग नहीं था, अन्न, गोरक्षा, कृषि और व्यापार का भी कोई क्रम न था। यह सब महाराज पृथु के ही शासनकाल से प्रारम्भ हुआ, इसलिये उन्हें आदिराज कहा जाता है। महाराज पृथु के पिता वेन नास्तिक, अधार्मिक और अत्याचारी राजा थे, महर्षियों ने उस पापात्मा को मन्त्रपूत कुशों से मार डाला था, तत्पश्चात् उसकी दाहिनी भुजा का मन्थन किया, जिससे स्वयं श्रीहरि के अंशावतार महाराज पृथु प्रकट हुए। वेन के अत्याचारी और अधार्मिक शासन से पीड़ित हो धरती ने अन्न और औषधियों को अपने में- आत्मसात् कर लिया था, प्रजावत्सल राजा पृथु ने गोरूपा - वसुन्धरा का दोहन किया और

प्रजा को हर प्रकार से सुखी बनाया। उन्होंने वसुन्धरा को अपनी पुत्री के रूपमें स्वीकार किया था, इसीलिये धरती का एक नाम पृथ्वी भी हो गया। यथा–

**यद्वेनमुत्पथगतं द्विजवाक्यवज्र–**
**विप्लुष्टपौरुषभगं निरये पतन्तम्।**
**त्रात्वार्थितो जगति पुत्रपदं च लेभे**
**दुग्धा वसूनि वसुधा सकलानि येन॥**

(श्रीमद्भागवत २/७/९)

## ● ध्रुवको वर देनेवाले तथा गजेन्द्र की रक्षा करने वाले श्रीहरि अवतार

स्वायम्भुव मनु के पुत्र उत्तानपाद थे, जिनकी दो रानियाँ थीं–एक सुनीति, दूसरी सुरुचि। छोटी रानी सुरुचि पर राजा का बड़ा प्रेम था, उससे उत्तम नामक पुत्र हुआ और सुनीति से ध्रुवजी हुए। देवर्षि नारदजी ने कृपा करके ध्रुव को द्वादशाक्षर मन्त्र– **ॐ नमो भगवते वासुदेवाय** का उपदेश किया और मधुवन में जाकर आराधना करने का आदेश दिया। ध्रुव ने मधुवन में पहुँचकर कठोर तपस्या आरम्भ कर दी। भगवान् गरुड़ पर आरूढ़ होकर मधुवन में आ गये। प्रभुका दर्शन पाकर बालक ध्रुव को परम आनन्द हुआ। सर्वान्तर्यामी श्रीहरि ने कृपा करके अपने वेदमय शङ्ख को उनके कपोल से छुआ दिया। ध्रुव को तत्काल दिव्य वाणी प्राप्त हो गयी और वे भगवान् की स्तुति करने लगे। इस प्रकार भगवान् ने ध्रुव को वर देनेके लिये यह श्रीहरि–अवतार लिया। यथा–

**योऽन्तः प्रविश्य मम वाचमिमां प्रसुप्तां**
**सञ्जीवयत्यखिलशक्तिधरः स्वधाम्ना।**

**अन्यांश्च हस्तचरणश्रवणत्वगादी-**
**न्घ्राणान्नमो भगवते पुरुषाय तुभ्यम् ॥**
(श्रीमद्भागवत ४/९/६)

**वेदाहं ते व्यवसितं हृदि राजन्यबालक ।**
**तत्प्रयच्छामि भद्रं ते दुरापमपि सुव्रत ॥**
(श्रीमद्भागवत ४/९/१९)

परमात्मा का यह अवतार अपने आर्तभक्त गजेन्द्र की ग्राह से रक्षा के लिये हुआ था। महर्षि अगस्त्य के शाप से महाराज इन्द्रद्युम्न गजेन्द्र और महर्षि देवल के शाप से गन्धर्वश्रेष्ठ हूहू ग्राह हो गये थे। एक बार गजेन्द्र त्रिकूट पर्वत के एक गहन वन में स्थित सुरम्य सरोवर में हथिनियों एवं कलभों के साथ जल-विहार कर रहे थे, सहसा एक ग्राह ने आकर उनका पैर पकड़ लिया। गजेन्द्र ने बहुत प्रयास किया, परंतु वे ग्राह की पकड़ से न छूट सके, ग्राह उन्हें सरोवर में बहुत गहराई तक खींचता चला गया। अन्त में गजेन्द्र की शक्ति जवाब दे गयी, तब उन्होंने सरोवर से एक कमल अपनी सूँड़ में लेकर भगवान् श्रीहरि से इस आसन्न मृत्युसंकट से छुड़ाने की प्रार्थना की। भगवान् ने तुरंत पहुँचकर अपने सुदर्शन चक्र से ग्राह का वधकर उसका उद्धार कर दिया और गजेन्द्र को पार्षदरूप में अपने दिव्य धाम को लेकर चले गये। इस अवतार में भगवान् ने अपने भक्त गजेन्द्र के महान् संकट का हरण किया था, इसलिये उन्हें 'श्रीहरि' कहा गया। यथा-

**श्रुत्वा हरिस्तमरणार्थिनमप्रमेय -**
**श्चक्रायुधः पतगराजभुजाधिरूढः ।**
**चक्रेण नक्रवदनं विनिपाट्य तस्मा-**
**द्धस्ते प्रगृह्य भगवान् कृपयोज्जहार ॥**
(श्रीमद्भागवत २/७/१६)

## ● श्रीहंस-अवतार

पितामह ब्रह्माजी अपनी दिव्य सभा में बैठे थे। उसी समय उनके सनकादि मानस पुत्रों ने वहाँ प्रवेश किया। ब्रह्माजी को प्रणाम कर आसनादि ग्रहण करने के पश्चात उन्होंने अत्यन्त विनम्रता पूर्वक तत्त्वज्ञान-सम्बन्धी जिज्ञासा की। सनकादि का प्रश्न सुनकर ब्रह्माजी ने परब्रह्म परमात्मा का ध्यान किया। उनके ध्यान करते ही श्रीभगवान् एक तेजस्वी हंस के रूप में प्रकट हो गये और उन्होंने सनकादि को तत्त्वज्ञान का उपदेश दिया। इस प्रकार श्रीभगवान् ने सनकादि मुनियों के सन्देह-निवारण के लिये हंसावतार धारण किए-

**तुभ्यं च नारद भृशं भगवान् विवृद्ध-**
**भावेन साधुपरितुष्ट उवाच योगम् ।**
**ज्ञानं च भागवतमात्मसतत्त्वदीपं**
**यद्वासुदेवशरणा विदुरञ्जसैव ॥**

(श्रीमद्भागवत 2/7/19)

## ● श्रीमन्वन्तर-अवतार

चारों युग जब एक हजार बार व्यतीत हो जाते हैं तो उस काल को कल्प कहते हैं और यह ब्रह्माजी का एक दिन होता है। ब्रह्माजी के एक दिन में चौदह मनु होते हैं। प्रत्येक मनु इकहत्तर चतुर्युगी से कुछ अधिक काल तक अपना अधिकार भोगते हैं। इन मन्वन्तरों में भगवान् मनु के रूप में प्रकट होकर इस विश्व का पालन करते हैं। इस कल्प में अब तक सात मनु हो चुके हैं और आगे अभी सात मनु होंगे। यथा -

१. स्वायम्भुव मनु, २. स्वारोचिष मनु, ३. उत्तम मनु, ४. तामस मनु, ५. रैवत मनु, ६. चाक्षुष मनु, ७. वैवस्वत मनु, ८. सावर्णि मनु, ९. दक्षसावर्णि, १०. ब्रह्मसावर्णि, ११. धर्मसावर्णि,

१२. रुद्रसावर्णि, १३. देवसावर्णि और १४. इन्द्र सावर्णि। वर्तमान समय में सातवाँ वैवस्वत मन्वन्तर चल रहा है और विवस्वान् (सूर्य)-के पुत्र वैवस्वत (श्राद्धदेव) मनु हैं। यथा-

**एवं युक्तकृतस्तस्य दैवं चावेक्षतस्तदा।**
**कस्य रूपमभूद्द्वेधा यत् कायमभिचक्षते॥**
**ताभ्यां रूपविभागाभ्यां मिथुनं समपद्यत।**
**यस्तु तत्र पुमान् सोऽभून्मनुः स्वयंभुवः स्वराट्॥**
**स्त्री याऽऽसीच्छतरूपाख्या महिष्यस्य महात्मनः।**
**तदा मिथुनधर्मेण प्रजा ह्येधाम्बभूविरे॥**

(श्रीमद्भागवत ३/१३/५३-५५)

## ● श्रीयज्ञ-अवतार

स्वायम्भुव मनु और शतरूपा से महाभागा आकूति का जन्म हुआ, जो रुचि प्रजापति की पत्नी हुई। उन्हीं रुचि श्रीऋषभ-अवतार महाराज नाभि के कोई सन्तान नहीं थी, इसलिये उन्होंने अपनी पत्नी मेरुदेवी के सहित पुत्रकी कामना से भगवान् यज्ञपुरुष का यजन किया। भक्तवत्सल भगवान् उनके विशुद्ध भाव से सन्तुष्ट होकर यज्ञ में प्रकट हुए और उनके यहाँ पुत्ररूप में अवतरित होने का वरदान दिया। यथा समय परम प्रभु ही महाराज नाभि की पत्नी मेरुदेवी के गर्भ से ऊर्ध्वरेता मुनियों का धर्म प्रकट करने के लिये शुद्ध सत्त्वमय विग्रह से प्रकट हुए-

**जातो रुचेरजनयत् सुयमान् सुयज्ञ**
**आकूतिसूनुरमरानथ दक्षिणायाम्।**
**लोकत्रयस्य महतीमहरद् यदार्तिं**
**स्वायम्भुवेन मनुना हरिरित्यनूक्तः॥**

(श्रीमद्भागवत २/७/२)

## श्रीहयग्रीव-अवतार

सृष्टि-रचना में अत्यन्त व्यस्त श्रीब्रह्माजी के देखते-देखते मधु और कैटभ नामके दैत्यों ने वेदों को हर लिया और वे रसातल में जा पहुँचे। वेदों का हरण हो जाने पर दुःखी ब्रह्माजी भगवान् श्रीहरि की शरण गये और उन्होंने हाथ जोड़कर भगवान् की स्तुति की। ब्रह्माजी की स्तुति को सुनकर भक्तवत्सल भगवान् वेदों की रक्षा करने के लिये हयग्रीवरूप धारण करके रसातल में जा पहुँचे और उन सम्पूर्ण वेदों को ले लिया तथा ब्रह्माजी को पुनः वापस दे दिया-

**सत्रे ममास भगवान् हयशीरषाथो**
**साक्षात् स यज्ञपुरुषस्तपनीयवर्णः ।**
**छन्दोमयो मखमयोऽखिलदेवतात्मा**
**वाचो बभूवुरुशतीः श्वसतोऽस्य नस्तः ॥**

(श्रीमद्भागवत २/७/११)

## श्रीनारद-अवतार

देवर्षि नारद भगवान् विष्णु के अवतार हैं। शास्त्रों के अनुसार नारद मुनि, ब्रह्मा के सात मानस पुत्रों में से एक हैं। यथा-

**सर्गे तपोऽहमृषयो नव ये प्रजेशाः**
**स्थाने च धर्ममखमन्वमरावनीशाः ।**
**अन्ते त्वधर्महरमन्युवशासुराद्या**
**मायाविभूतय इमाः पुरुशक्तिभाजः ॥**

(श्रीमद्भागवत २/७/३९)

**अश्वत्थः सर्ववृक्षाणां देवर्षीणां च नारदः ।**
**गन्धर्वाणां चित्ररथः सिद्धानां कपिलो मुनिः ॥**

(श्रीमद्भगवद्गीता १०/२६)

## श्रीधन्वन्तरि-अवतार

क्षीरसागर का मन्थन होने पर श्रीधन्वन्तरि अमृत कलश लेकर प्रकट हुए। दैत्यों द्वारा छीना गया यज्ञभाग तथा अमृत देवताओं को श्रीधन्वन्तरि की ही कृपा से प्राप्त हुआ। श्रीधन्वन्तरि ने संसार को आयुर्वेद विद्या देकर रोगों से मुक्त किया। लोक-कल्याणार्थ विविध व्याधियों को नष्ट करने के लिये स्वयं भगवान् विष्णु धन्वन्तरि के रूपमें कार्तिक कृष्ण त्रयोदशी को प्रकट हुए थे। यथा-

**धन्वन्तरिश्च भगवान् स्वयमेव कीर्ति-**
**र्नाम्ना नृणां पुरुरुजां रुज आशु हन्ति ।**
**यज्ञे च भागममृतायुरवावरुन्ध**
**आयुश्च वेदमनुशास्त्यवतीर्य लोके ॥**

(श्रीमद्भागवत २/७/२१)

## श्रीबदरीपति नर-नारायण-अवतार

धर्म की पत्नी मूर्ति के गर्भ से भगवान् नर-नारायणरूप में प्रकट हुए। उन्होंने आत्मतत्त्व का साक्षात्कार कराने वाले उस भगवदाराधनरूप कर्म का उपदेश किया, जो वास्तव में कर्म-बन्धन से छुड़ाने वाला और नैष्कर्म्य स्थिति को प्राप्त कराने वाला है। उन्होंने स्वयं भी वैसे ही कर्म का अनुष्ठान किया। वे आज भी बदरिकाश्रम में उसी कर्म का आचरण करते हुए विराजमान हैं। यथा-

**धर्मस्य दक्षदुहितर्यजनिष्ट मूर्त्यां**
**नारायणो नर इति स्वतपः प्रभावः ।**
**दृष्ट्वाऽऽत्मनो भगवतो नियमावलोपं**
**देव्यस्त्वनङ्गपृतना घटितुं न शेकुः ॥**

(श्रीमद्भागवत २/७/६)

## श्रीदत्तात्रेय-अवतार

महर्षि अत्रि की तपस्या से चित्रकूट में माता अनसूया के गर्भ से दत्तात्रेय भगवान् प्रकट हुए। वर देते समय भगवान् ने कहा था कि मैंने अपने को तुम्हें **दत्त** दे दिया, अतः इनका दत्त नाम पड़ा। भगवान् दत्तात्रेय के चरणोंकी सेवासे राजा यदु, सहस्त्रार्जुन तथा अलर्क आदिने योग- भोग तथा मोक्षकी भी सिद्धियाँ प्राप्त की थीं।

**अत्रेरपत्यमभिकाङ्क्षत आह तुष्टो**
**दत्तो मयाहमिति यद् भगवान् स दत्तः ।**
**यत्पादपङ्कजपरागपवित्रदेहा**
**योगर्द्धिमापुरुभयीं यदुहैहयाद्याः ॥**
(श्रीमद्भागवत २/७/४)

भूतात्मा परमात्मा विष्णु का दत्तात्रेय के नाम से अवतार विख्यात है। भगवान् दत्तात्रेय बड़े ही क्षमाशील थे । उस समय वेद लुप्त हो गये थे, वैदिकी प्रक्रिया और यज्ञ भी नष्टप्राय हो गये थे, चारों वर्णों में संकरता आ गयी थी, धर्म शिथिल हो चला था, अधर्म बड़े जोरों के साथ बढ़ रहा था। सत्य मिटता जा रहा था और सब ओर असत्य का बोलबाला था। प्रजा क्षीण हो रही थी और धर्म पाखण्ड से मिश्रित हो गया था। ऐसे समय में भगवान् दत्तात्रेय ने यज्ञों और क्रियाओं सहित वेदों का पुनरुद्धार किया और चारों वर्णों को पृथक्-पृथक करके उन्हें व्यवस्थित कर दिया। वरदायक एवं ज्ञाननिष्ठ भगवान् दत्तात्रेय ने हैहयवंशी बुद्धिमान् राजा कार्तवीर्य को यह वर दिया था। निष्पाप नरेश ! ये जो तुम्हारी दो भुजाएँ हैं, मेरे वरदान के प्रभाव से युद्ध के समय निःसंदेह एक हजार भुजाओं के रूप में परिणत हो जायेंगी। पृथ्वीनाथ ! तुम सारी पृथ्वी का

पालन करोगे, शत्रुओं के समुदाय तुम्हारी ओर बड़ी कठिनता से देख सकेंगे तथा तुम धर्म के ज्ञाता होओगे। महर्षि वैशम्पायन जी ने शत्रुओं का दमन करने वाले महाराज जनमेजय से कहा– मैंने जैसा सुना था, उसके अनुसार तुमसे भगवान् विष्णु के इस अद्‌भुत, शुभ एवं तेजस्वी अवतार का वर्णन किया है–

**भूयो भूतात्मनो विष्णोः प्रादुर्भावो महात्मनः ।**
**दत्तात्रेय इति ख्यातः क्षमया परया युतः ॥**

**तेन नष्टेषु वेदेषु प्रक्रियासु मखेषु च ।**
**चातुर्वर्ण्यं तु संकीर्णे धर्मे शिथिलतां गते ॥**

**अभिवर्धति चाधर्मे सत्ये नष्टेऽनृते स्थिते ।**
**प्रजासु शीर्यमाणासु धर्मे चाकुलतां गते ॥**

**सहयज्ञक्रिया वेदाः प्रत्यानीता हि तेन वै ।**
**चातुर्वर्ण्यमसंकीर्णं कृतं तेन महात्मना ॥**

**तेन हैहयराजस्य कार्तवीर्यस्य धीमतः ।**
**वरदेन वरो दत्तो दत्तात्रेयेण धीमता ॥**

**एतद् बाहुद्वयं यत्ते मृधे मम कृतेऽनघ ।**
**शतानि दश बाहूनां भविष्यन्ति न संशयः ॥**

**पालयिष्यसि कृत्स्नां च वसुधां वसुधाधिप ।**
**दुर्निरीक्ष्योऽरिवृन्दानां धर्मज्ञश्च भविष्यसि ॥**

**एष ते वैष्णवः श्रीमान् प्रादुर्भावोऽद्‌भुतः शुभः ।**
**कथितो वै महाराज यथाश्रुतमरिंदम ॥**

(हरिवंशपुराण, हरिवंशपर्व ४१/१०४–१११)

## ● श्रीकपिलदेव-अवतार

महर्षि कर्दम की धर्मपत्नी देवहूति के गर्भ से विन्दुसरोवर के निकट भगवान् कपिलदेव प्रकट हुए। इन्होंने अपनी माता को आत्मज्ञान का उपदेश दिया, जिससे उन्होंने भगवान् के वास्तविक स्वरूप को समझकर स्वल्प समय में ही मोक्ष पद को प्राप्त कर लिया। श्रीकपिलदेव सांख्ययोग के प्रवर्तक आचार्य हैं। यथा-

**जज्ञे च कर्दमगृहे द्विज देवहूत्यां**
**स्त्रीभिः समं नवभिरात्मगतिं स्वमात्रे ।**
**ऊचे ययाऽऽत्मशमलं गुणसङ्गपङ्क-**
**मस्मिन् विधूय कपिलस्य गतिं प्रपेदे ॥**

(श्रीमद्भागवत २/७/३)

## ● श्रीसनकादि-अवतार

सृष्टि के आरम्भ में श्रीब्रह्माजी ने लोकों को रचने की इच्छा से तप किया। ब्रह्मा के अखण्ड तप से प्रसन्न होकर भगवान् ने तप अर्थवाले 'सन्' नाम से युक्त होकर सनक, सनन्दन, सनातन और सनत्कुमार-रूप से अवतार ग्रहण किया। इस अवतार के द्वारा भगवान् ने पहले कल्प के भूले हुए आत्मज्ञान को ऋषियों के प्रति यथावत् उपदेश किया। सृष्टि के आरम्भ में उत्पन्न होने से ये बहुकालीन हैं, परंतु सदा पाँच वर्ष के बालक के रूप में ही रहते हैं, जिससे माया का विकार न उत्पन्न हो सके। ये सदा मन से अपने ब्रह्म-स्वरूप में लीन रहते हैं और जीवन्मुक्त हैं-

**तप्तं तपो विविधलोकसिसृक्षया मे**
**आदौ सनात् स्वतपसः स चतुःसनोऽभूत् ।**
**प्राक्कल्पसम्प्लवविनष्टमिहात्मतत्त्वं**
**सम्यग् जगाद मुनयो यदचक्षतात्मन् ॥**

(श्रीमद्भागवत २/७/५)

**'भगवान् परशुराम एवं सोहनाग धाम'** नामक इस ग्रन्थ रत्न को यथा सम्भव शुद्ध मुद्रण के साथ लेखक के द्वारा प्रकाशित किया जा रहा है। यह सभी सनातन धर्मावलम्बी सुधी पाठकों के लिए हर्ष का विषय है। इस ग्रन्थरत्न द्वारा निश्चय ही संस्कृत एवं हिन्दी साहित्य की श्रीवृद्धि होगी और सहृदय अध्येता भगवान् परशुराम जी के चरित का पाठफल पाकर अवश्य ही कृतार्थ होंगे, ऐसी आशा है।

भगवान् के सम्पूर्ण चरित लोकोपकारी हैं, भक्तों के उद्धार के लिए भगवान् ने लीला किये हैं, इस सम्बन्ध में कुछ लिखना अत्यन्त दुर्बोध है, मुझ अल्पमति से जो कुछ हो सका, प्रस्तुत है। प्रात:स्मरणीय गोस्वामी श्रीतुलसीदासजी महाराज की कुछ पंक्तियाँ स्मृतिपथ पर आ रही हैं–

**भलो भलाइहि पै लहइ लहइ निचाइहि नीचु।**
**सुधा सराहिअ अमरताँ गरल सराहिअ मीचु॥**

(श्रीरामचरितमानस १/5)

**जड़ चेतन गुन दोषमय बिस्व कीन्ह करतार।**
**संत हंस गुन गहहिं पय परिहरि बारि विकार॥**

(श्रीरामचरितमानस १/६)

**सो सुधारि हरिजन जिमि लेहीं। दलि दुःख दोष बिमल जसु देहीं॥**
**खलउ करहिं भल पाइ सुसंगू। मिटइ न मलिन सुभाउ अभंगू॥**

(श्रीरामचरितमानस १/७)

**मति अति नीच ऊँचि रुचि आछी। चहिय अमिय जग जुरइ न छाछी॥**
**छमिहहिं सज्जन मोरि ढिठाई। सुनिहहिं बालवचन मन लाई॥**
**जौ बालक कह तोतरि बाता। सुनहिं मुदित मन पितु अरु माता॥**
**हँसिहहिं कूर कुटिल कुबिचारी। जे पर दूषन भूषन धारी॥**
**निज कबित्त केहि लाग न नीका। सरस होउ अथवा अति फीका॥**
**जे पर भनिति सुनत हरषाहीं। ते बर पुरुष बहुत जग नाहीं॥**

**भाग छोट अभिलाषु बड़ करउँ एक बिस्वास।**
**पैहहिं सुख सुनि सुजन सब खल करिहहिं उपहास॥**
(श्रीरामचरितमानस १/८)

मुझे विश्वास है कि भगवान् श्रीपरशुराम की कृपा से उनके यशोगान का यह पावनतम कार्य उन्हीं की शक्तिमति से सम्पन्न हुआ है और उन्हीं के पावन चरणों मे यह सभक्ति समर्पित है- **त्वदीयं वस्तु गोविन्द तुभ्यमेव समर्पये,** अन्त में श्रीनाभादास जी के शब्दों में अद्भुत चरित्र वाले भगवान् विष्णु के चौबीस अवतारों के चरणारविन्दों में विनीत प्रार्थना करता हूँ-

**जय जय मीन बराह कमठ नरहरि बलि-बावन ।**
**परसुराम रघुबीर कृष्ण कीरति जग पावन ॥**
**बुद्ध कलक्की ब्यास पृथू हरि हंस मन्वंतर ।**
**जग्य रिषभ हयग्रीव धुरुव बरदैन धन्वंतर ॥**
**बद्रीपति दत कपिलदेव सनकादिक करुना करौ ।**
**चौबीस रूप लीला रुचिर ( श्री ) अग्रदास उर पद धरौ ॥**

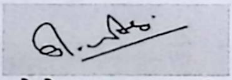

विक्रमाब्द २०८१ **प्रो. देवेन्द्र प्रसाद मिश्र**

श्रीपरशुरामजयन्ती अक्षयतृतीया कुलानुशासक एवं अध्यक्ष-वेदविभाग

शुक्रवार श्रीलाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रीय संस्कृत विश्वविद्यालय (केन्द्रीय विश्वविद्यालय)

बी-४ कुतुब सांस्थानिक क्षेत्र, नई दिल्ली-१६

**प्रीणातु भगवान् वेदः प्रीणन्तु सर्वदेवताः ।**
**प्रीणन्तु पितरः सर्वे प्रीणन्तु च महर्षयः ॥**
**॥ बलं विष्णोः प्रवर्धताम् ॥**

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

# प्रथम-अध्याय

## श्रीपरशुराम अवतारोपक्रम

**ॐ अग्ने व्रतपते व्रतं चरिष्यामि तच्छकेयं तन्मे राध्यताम्।**
**इदमहमनृतात्सत्यमुपैमि॥** (शुक्लयजुर्वेद १/५)

महर्षि भृगु जी की तीन पत्नियाँ थीं। एक हिरण्यकशिपु की कन्या दिव्या थीं। दूसरी पुलोमा नाम के दैत्य की कन्या पौलोमी थीं और तीसरी पत्नी ख्याति देवी थीं। महर्षि भृगुजी तथा दिव्या के संयोग से ज्ञानियों में श्रेष्ठ असुरों के गुरु शुक्राचार्य जी जन्म लिए। इनके दो नाम विख्यात हैं-उशना तथा काव्य।

शुक्राचार्य जी का विवाह पितरों की कन्या गर्वा के साथ हुआ था। इन दोनों के संयोग से चार पुत्र जन्म लिए। इनका नाम था त्वष्टा, बरुचि, शण्ड तथा अर्भक। शुक्राचार्य जी की दूसरी पत्नी देवराज इन्द्र की कन्या जयन्ती थीं। जयन्ती तथा शुक्राचार्य जी के संयोग से देवयानी नाम की कन्या उत्पन्न हुई, जिसका विवाह राजा ययाति के साथ हुआ था।

शुक्राचार्य जी के ज्येष्ठ पुत्र त्वष्टा का विवाह दैत्य विरोचन की कन्या यशोधरा के साथ हुआ था। इन दोनों से त्रिशिरा और विश्वरूप नाम के दो पुत्र उत्पन्न हुए। शुक्राचार्य जी के अन्य द्वादश पुत्र थे। इनके नाम भुवन, भावन आदि था।

भृगु जी की दूसरी पत्नी पौलोवी से आठवें मास में व्याधि ग्रस्त च्यवन ऋषि उत्पन्न हुए। ये ब्रह्मनिष्ठ परम प्रभावशाली

जितेन्द्रिय च्यवनप्राश के आविष्कर्ता ऋषि थे। भृगु पुत्र च्यवन जी का विवाह राजा शर्याति की कन्या सुकन्या से हुआ था।

सुकन्या और च्यवन से आत्मवान, और दधीचि नाम के दो पुत्र हुए थे। आत्मवान का विवाह महाभाग्यवती राजा नहुष की पुत्री राजकुमारी रुचि के साथ हुआ था। ऋषि कुमार दधीचि का विवाह सरस्वती से हुआ था। इन दोनों के सारस्वत नाम के पुत्र हुए। आत्मवान तथा रुचि के संयोग से महर्षि और्व का जन्म हुआ। और्व ऋषि का जन्म शल्यक्रिया से हुआ था। ये प्रज्वलित अग्नि के समान परम तेजस्वी ऋषि थे। महर्षि और्व के पुत्र परम तेजस्वी, आत्मज्ञानी, प्रज्वलित अग्नि के समान देदीप्यमान महर्षि ऋचीक उत्पन्न हुए थे। महर्षि ऋचीक का विवाह राजकुमारी सत्यवती देवी से हुआ। इन दोनों से ज्येष्ठ पुत्र महर्षि जमदग्नि थे। ये परम तेजस्वी, देदीप्यमान, वेदशास्त्रों के प्रणेता ऋषि थे। जिनकी गणना सप्तर्षियों में है जो आज भी आकाश में देदीप्यमान हो रहे हैं।

महर्षि जमदग्नि का विवाह राजकुमारी रेणुका के साथ हुआ था। जमदग्नि तथा रेणुका से परम प्रतापी, तेजस्वी, साक्षात् परमात्मा के अवतार भगवान् परशुराम जी उत्पन्न हुए। महर्षि ऋचीक के सैकड़ों पुत्रों तथा हजारों पौत्रों की संख्या है। इनसे राज्य भरा पड़ा है। सभी भृगुवंशी ब्राह्मण कहे जाते हैं। इनका वैवाहिक सम्बन्ध अन्य ऋषियों के वंशजो के साथ परम पुनीत माना गया है।

भृगु जी की तीसरी पत्नी ख्याती देवी से सुख-दुःख में समान भाव से रहने वाले शुभाशुभ फल प्रदाता, धाता तथा विधाता नाम के दो पुत्र उत्पन्न हुए। भृगु जी तथा ख्याती देवी से "श्री" नाम की कन्या भी उत्पन्न हुई। श्री देवी लोक पावनी लक्ष्मी जी की ही अवतार हैं। श्री ने भगवान् नारायण को ही पति रूप में वरण

किया। भृगुपुत्र महर्षि धाता का विवाह मेरु की कन्या आयती देवी से हुआ था। इन दोनों से पाण्डु नामक पुत्र उत्पन्न हुए थे। महर्षि भृगु तथा ख्याति के दूसरे पुत्र विधाता से मेरु की दुसरी कन्या नियती से मृकण्ड नामक पुत्र हुए। महर्षि मृकण्ड की पत्नी मनस्विनी देवी से मारकण्डेय नामक पुत्र उत्पन्न हुए। जो अपनी परमपावनी भक्ति तथा तपस्या से शंकर जी के रूप हो गये।

मार्कण्डेय जी की ''मूर्धनि'' स्त्री से वेदशिरा नामक पुत्र उत्पन्न हुए। ''वेदशिरा'' नामक ऋषि की ''पीवरी'' नामक पत्नी से बहुत संख्या में वंश वर्धक पुत्र उत्पन्न हुए। जो सभी मार्कण्डेय कहे जाते हैं। पाण्डुऋषि की ''पुण्डरीका'' नामक पत्नी से द्युतिमान, द्यूतिमन्त तथा सृजवन्त नामक तीन पुत्र उत्पन्न हुए। ये सभी भृगुवंश के महान् ऋषि थे। सभी वंशविस्तारक थे। इन सब भृगुवंशी ब्राह्मणों से भारतवर्ष भर गया। सभी परम प्रतापी आत्मज्ञानी, वेदशास्त्र के पारङ्गत विद्वान्, कुशल कर्मकाण्ड के पण्डित थे। प्रायः सर्वत्र पुराणों में अनेक प्रकरणों में भृगुवंश के वेदवेदाङ्ग पारंगत चिकित्साशास्त्र के आविष्कारक, ज्योतिषशास्त्र के रचयिता, एवं तपस्या में देवताओं से बढ़कर थे। जैसे-भृगु, दधीचि, च्यवन, जमदग्नि, वाल्मीकि, शुक्राचार्य, प्रभृति ऋषियों के नाम हैं। इसी वंश में भगवान् विष्णु परशुराम जी के रूप में भारत वर्ष में अवतार ग्रहण किये।

## भगवान् विष्णु के दश अवतार

**हंसः कूर्मश्च मत्स्यश्च प्रादुर्भावात् द्विजोत्तम।**
**वराहो नरसिंहश्च वामनो राम एव च॥**
**रामो दाशरथिश्चैव सात्वतः ( कृष्णः ) कल्किरेव च।**

(महाभारत शा. प. ३३९,१०३,१०४)

**मात्स्यः कूर्मो वराहश्च नरसिंहोऽथ वामनः।**
**रामो रामश्च कृष्णश्च ( बुद्धः ) कल्किश्च ते दशः॥**
(पद्मपुराण ५/२५७/४०)

भगवद्गीता में राम (परशुराम) **रामः शस्त्रभृतामहम्** तथा कृष्णावतार की चर्चा है। महाभारत में दश अवतारों की कथा है। श्रीमद्भागवत में अनेकों अवतारों की चर्चा है किन्तु २४ अवतारों की कथा विस्तार से प्रतिपादित की गई है। **गीतगोविन्दम्** में **कविवर जयदेव** ने दश अवतारों की स्तुति की है। अधिकांश पुराणों में भगवान श्रीविष्णु के दश अवतारों की संख्या बताई गई है।

## भगवान परशुराम जी के अवतार के कारण

परम तपस्वी भृगु जी की वंश परम्परा कीश्रृंखला में आते हुए महर्षि ऋचीक तथा महर्षि जमदग्नि की विपुल यज्ञ की समृद्धियों से सम्पन्न क्रमशः पौत्र तथा पुत्र की श्रेणी में जगत् के कल्याण हेतु नारायण के अंश से माता रेणुका के पंचम गर्भ से उच्छृङ्खल नृपतियो को धर्ममार्ग पर लाने हेतु, अम्बा की रक्षा हेतु अपने शिष्य भीष्म पितामह से युद्ध करने वाले भारतीय परिदृश्य मे सतत् छाये रहने वाले सतत् तपस्वी, अप्रतिम वीर भगवान् परशुराम का अविर्भाव वैवश्वत मन्वन्तर के उन्नीसवें चतुर्युग के त्रेता युग मे हुआ था।

वैसाख मास शुक्लपक्ष की तृतीया तिथि अर्थात् अक्षय तृतीया को परशुराम जयन्ती मनाई जाती है। यथा–

**वैसाखस्य शिवे पक्षे तृतीयायां पुनर्वसौ ।**
**निशायाः प्रथमेयामे रामाख्यः समयो हरिः ॥**
**एवोच्चगैः षड्ग्रहैः युक्ति मिथुने राहु संस्थिते ।**
**रेणुकायास्तु यौ गर्भादवतीर्णो विभुः स्वयम्॥**
(स्कन्द पुराण)

पृथिवी माता लक्ष्मी की रूप हैं। जब इनपर अत्याचार होता है। तब-तब भगवान् अवतार लेकर शान्ति स्थापित करते हैं। अत्याचार और अनाचार से पृथ्वी के भार को दूर करते है। जब सहस्रार्जुन का अत्याचार बढ़ा तब भगवान् विष्णु परशुराम के रूप में अवतार ग्रहण किए। लक्ष्मी जी जो भृगुवंश मे ही "श्री" देवी के रूप मे भृगु जी की पत्नी ख्याती से उत्पन्न हुई। जब रावण आदि राक्षसों का अत्याचार बढ़ा तब भगवान विष्णु श्री राम रूप मे अवतार लिए। माता लक्ष्मी (पृथिवी) सीता रूप में अवतरित हुई। जब जरासंध, शिशुपाल, कंस आदि राक्षस राजाओं का अत्याचार बढ़ा तब भगवान विष्णु कृष्ण रूप में अवतरित हुए। माता लक्ष्मी (पृथिवी) रूक्मिणी रूप में उनकी सहायिका बनी। यथा-

**भृगोः ख्यात्यां समुत्पन्ना श्रीः पूर्वमुदधेः पुनः ।**
**देवदानवयत्नेन प्रसूताऽमृतमन्थने ॥**
**एवं यदा जगतस्वामी देवदेवो जनार्दनः ।**
**अवतारं करोत्येषा तदा श्रीस्तत्सहायिनी ॥**
**पुनश्च पद्मादुत्पन्ना आदित्योऽभूद्यदाहरिः ।**
**यदा तु भार्गवो रामस्तदाभूद्धरणी त्वियम् ॥**

(श्रीविष्णुपुराण १/९/१४१-१४३)

**पुरा देवगणैर्विष्णुः स्तुतः क्षीरोदधौ पुनः ।**
**ऋषिभिश्च महाभागैर्जमदग्नेः सुतोऽभवत् ॥**
**परशुराम इति ख्यातः सर्वलोकेषु स प्रभुः ।**
**दुष्टानां निग्रहं कर्तुमवतीर्णो महीतले ॥**

(श्रीनरसिंहपुराण ४६/२-३)

**त्रिस्सप्तकृत्वो भूम्यां वै पार्थिवान्निजघान सः ।**
**क्षत्रियाणां वधात्तेन भूमेर्भारोऽवतारितः ॥**

(श्रीनरसिंहपुराण ४६/४०)

**अवतीर्य भूमौ हरिरेष साक्षात्**
**त्रिस्सप्तकृत्वः क्षितिपान्निहत्यसः ।**
**क्षात्रं च तेजो प्रविभज्य राजन्**
**रामः स्थितोऽद्यापि गिरौ महेन्द्रे ॥**

(श्रीनरसिंहपुराण ४६/४३)

## ● दशावतारों में श्रीपरशुराम की विशेषता

भगवान् श्रीपरशुराम जी का अवतार धर्म संस्थापना के साथ-साथ छिन्न-भिन्न वर्ण व्यवस्था को पुनरुज्जीवित करने वाला है।

श्रीपरशुराम वेदादि शास्त्रों के तत्त्व ज्ञाता थे। धर्मधारियों में श्रेष्ठ थे। उन्होनें आशुतोष भगवान् शिव जी से वरदान प्राप्त किया था-कि **अस्त्र, शस्त्र तथा शास्त्र में मुझसे कोई श्रेष्ठ न हो।**

भगवान् विष्णु के दशावतारों में नारायण के अतिरिक्त परशुराम ही मन्त्र द्रष्टा ऋषि अनूचान तथा चतुरान्न यज्ञ के कर्ता थे।

सहस्रबाहु कार्तवीर्य अर्जुन ने भगवान् श्रीदत्तात्रेय (ब्राह्मण) से चार वरदान प्राप्त कर महाभिमानी हो गया कि मेरे समान वीरता और धैर्य में कोई और नहीं है। उससे और उसके समर्थकों से पृथ्वी त्रस्त थी। उन अहङ्कारी, अत्याचारी दुर्दान्त राजा तथा राज परिवार का समूल नाश कर पृथ्वी में धर्म स्थापित करना अवतार की प्रमुख विशेषता है।

सम्प्रति **'भगवान् परशुराम एवं सोहनाग धाम'** नामक यह पञ्च अध्याय समन्वित ग्रन्थ प्रकाशित किया जा रहा है। इस ग्रन्थ में लेखक द्वारा भगवान् परशुराम को ही नायक बनाकर उनका किञ्चित् वर्णन प्रस्तुत करने का प्रयास किया है।

इसमें कुल पाँच अध्याय हैं, प्रत्येक अध्याय में भगवान् परशुराम जी के चरित का प्रतिपादन करने का प्रयास किया गया है। साथ-साथ **'सोहनाग धाम'** की अतिशय नैसर्गिक रमणीयता का वर्णन भी लेखक द्वारा किया गया है। इससे लेखक महामहोपाध्याय आचार्य श्रीकेदारनाथ द्विवेदी संस्कृत, हिन्दी साहित्य के इतिहास में सदा श्रद्धा से स्मरण किये जाते रहेंगे। महाकवि भर्तृहरि की यह उक्ति इस प्रकार के मनीषियों के विषय में कही गयी है-

**जयन्ति ते सुकृतिनो रससिद्धाः कवीश्वराः ।**
**नास्ति येषां यशः काये जरामरणजं भयम् ॥**

(नीतिशतकम्-२५)

इस प्रकार महामहोपाध्याय **श्रीकेदारनाथ द्विवेदी** 'वेदाचार्य' प्रणीत एवं विद्यावाचस्पति प्रो. देवेन्द्र प्रसाद मिश्र द्वारा सम्पादित **भगवान् श्रीपरशुराम एवं सोहनाग धाम** ग्रन्थ का 'श्रीपरशुराम अवतारोपक्रम' नामक प्रथम अध्याय समाप्त ॥ १ ॥

**प्रीणातु भगवान् वेदः प्रीणन्तु सर्वदेवताः ।**
**प्रीणन्तु पितरः सर्वे प्रीणन्तु च महर्षयः ॥**
**॥ बलं विष्णोः प्रवर्धताम् ॥**

# द्वितीय-अध्याय

## भारतवर्ष में अवतार के कारण

**उत्तरं यत्समुद्रस्य हिमाद्रेश्चैव दक्षिणम् ।**
**वर्षं तद्भारतं नाम भारती यत्र सन्ततिः ॥**

(श्रीविष्णुपुराण २/३/१)

**आयतो ह्याकुमारिक्यादागङ्गा प्रभवाच्च वै ।**
**तिर्यगुत्तरविस्तीर्णः सहस्राणि नवैव तु ॥**

(वायुमहापुराण ४५/८१)

**भरणाच्च प्रजानां वै मनुर्भरत उच्यते ।**
**निरुक्तवचनाच्चैवं वर्षं तद्भारतं स्मृतम् ॥**

(ब्रह्माण्डमहापुराण २/१६/६)

पुराणों के अनुसार अपने देश का नाम भारत वर्ष है। यहाँ नित्य निवास करने वाली प्रजा का नाम भारती है। पुराणों में भारत वर्ष का भौगोलिक विस्तार-समुद्र से उत्तर तथा हिमालय से दक्षिण तक कहा गया है। तथा कन्याकुमारी से हिमालय में गंगा नदी के उद्गम स्थान तक विस्तृत भूभाग को भारतवर्ष कहा जाता है।

निरुक्तशास्त्र के निर्वचनानुसार, वायु तथा मत्स्य पुराणों के अनुसार भारतवर्ष का निर्वचन किया गया है-जैसा कि प्रजाओं के भरण पोषण के कारण इसका नाम भारत वर्ष पड़ा।

सर्व प्रथम स्वयंभु मनु के पुत्र प्रियव्रत नाम के राजा हुए। उनके पुत्र अग्नीध्र हुए। अग्नीध्र के पुत्र नाभि तथा नाभि से ऋषभ देव

जी उत्पन्न हुए। ऋषभ देव जी के शतसंख्या में पुत्र उत्पन्न हुए। उनमें सर्वश्रेष्ठ, सर्वगुणसम्पन्न, परमभागवत ज्येष्ठ भरत नाम के पुत्र उत्पन्न हुए। उन्हीं के नाम पर इस राष्ट्र का नाम भारत वर्ष है। जैसा कि-

**प्रियव्रतो नाम सुतो मनोः स्वायम्भुवस्य यः ।**
**तस्याग्नीध्रस्ततो नाभिर्ऋषभस्तत्सुतः स्मृतः ॥**

**तमाहुर्वासुदेवांशंमोक्षधर्मविवक्षया ।**
**अवतीर्णं सुतशतं तस्यासीद्वेदपारगम् ॥**

**तेषां वै भरतो ज्येष्ठो नारायणपरायणः ।**
**विख्यातं वर्षमेतद्यन्नाम्ना भारतमद्भुतम् ॥**

(श्रीमद्भागवतमहापुराण ११/२/१५-१७)

**ऋषभाद्भरतो जज्ञे वीरः पुत्रशताग्रजः ।**
**सोऽभिषिच्याथ भरतः पुत्रं प्राव्राज्यमास्थितः ॥**

**हिमाह्वं दक्षिणं वर्षं भरताय न्यवेदयत् ।**
**तस्मात्तद्भारतं वर्षं तस्य नाम्ना विदुर्बुधाः ॥**

(श्रीवायुमहापुराण ३३/५१-५२)

**ततश्च भारतंवर्षमेतल्लोकेषु गीयते ।**
**भरताय यतः पित्रा दत्तं प्रातिष्ठता वनम् ॥**

(श्रीविष्णुपुराण २/१/३२)

**ऋषभो मेरुदेव्याञ्च ऋषभाद्भरतोऽभवत् ।**
**ऋषभो दत्तश्रीः पुत्रे शालग्रामे हरिं गतः ॥**

(श्रीअग्निमहापुराण 107/11)

## ● कर्मभूमि भारतवर्ष की विशिष्टता

पुराणों मे स्वर्ग तथा अपवर्ग प्राप्त करने वाले पुरूषों के लिए भारतवर्ष को ही कर्मभूमि कहा गया है। यथा-

**नवयोजनसाहस्रो विस्तारोऽस्य महामुने ।**
**कर्मभूमिरियं स्वर्गमपवर्गं च गच्छताम् ॥**
**इतः स्वर्गश्च मोक्षश्च मध्यं चान्तश्च गम्यते ।**
**न खल्वन्यत्र मर्त्यानां कर्म भूमौ विधीयते ॥**

(श्रीविष्णुपुराण २/३/२ एवं ५)

विष्णु पुराण में भारतवर्ष को कर्मभूमि कहा गया है। अन्य आठ वर्षों को भोगभूमि कहा गया है।

**अत्रापि भारतं श्रेष्ठं जम्बद्वीपे महामुने ।**
**यतो हि कर्मभूरेषा ह्यतोऽन्या भोगभूमयः ॥**

(श्रीविष्णुपुराण २/३/२२)

देवी भागवत में भी भारतवर्ष को ही कर्मभूमि कहा गया है। अन्य आठ वर्षों को स्वर्ग सदृश सुख भोगने के लिए भोग भूमि कहा गया है।

**तत्रापि भारतं वर्षं कर्मक्षेत्रमुशन्ति हि ।**
**अन्यानि चाष्टवर्षाणि भौमस्वर्गप्रदानि च ॥**
**स्वर्गिणां पुण्यशेषस्य भोगस्थानानि नारद ।**
**पुरूषाणां चायुतायुर्वज्राङ्गा देवसन्निभाः ॥**

(श्रीमद्देवीभागवत ८/७/३४-३५)

विष्णुपुराण में भारतवर्ष की श्रेष्ठता प्रतिपादन अत्यन्त महत्वपूर्ण है। जन्मजन्मान्तरों के पुण्य से ही परम पवित्र भारतवर्ष में मनुष्य का जन्म होता है। जो उत्पन्न व्यक्ति के सौभाग्य का सूचक है। यथा-

**अत्र जन्मसहस्राणां सहस्रैरपि सत्तम ।**
**कदाचिल्लभते जन्तुर्मानुष्यं पुण्यसञ्चयात् ॥**

(श्रीविष्णुपुराण २/३/२३)

श्रीविष्णुपुराण के अनुसार भारतवर्ष मे सत्कर्मपरायण मुनिजन परलोक में उत्तम गति प्राप्त हेतु तपस्या करते हैं। धर्मप्रिय याज्ञिकगण यज्ञ करते हैं तथा उदारदानी जन आदरपूर्वक को दान करते है।

**तपस्तपन्ति मुनयः जुह्वते चात्र यज्विनः ।**
**दानानि चात्र दीपन्ते परलोकार्थमादरात् ॥**

(श्रीविष्णुपुराण २/३/२०)

स्वर्गस्थ देवता भी निरन्तर गीत गाते रहते हैं, वे प्राणी हम देवताओं की अपेक्षा धन्य हैं जो भारतवर्ष में जन्मग्रहण किये है। क्योंकि वे स्वर्ग तथा अपवर्ग के साधक है। कर्मभूमि भारत में मनुष्य योनि में जन्म लिए है। वे अपने सभी शुभकर्म परमात्मा को समर्पण कर, सर्वपापरहित हो कर ब्रह्मलीन हो परमानन्द का अनुभव करते हैं। हम स्वर्ग में रहने वाले देवता सत्कर्मों के समाप्त होने पर कहाँ जन्म ग्रहण करेगें? यह ज्ञान नहीं है।

अतः वे मनुष्य धन्य हैं जो अति पुनीत भारतवर्ष में बार बार मानवयोनि में जन्मग्रहण कर सुखपूर्वक निवास करते है। यथा-

**गायन्ति देवाः किल गीतकानि,**
**धन्यास्तु ते भारत भूमिभागे ।**
**स्वर्गापवर्गास्पद मार्गभूते,**
**भवन्ति भूयः पुरुषाः सुरत्वात् ॥**

(श्रीविष्णुपुराण ३/२४)

इस मत की पुष्टि मार्कण्डेय पुराण भी कर रहा है-

**प्रयांति कर्मभूर्ब्रह्मन्नान्यलोकेषु विद्यते ।**
**देवानामपि विप्रर्षे सदा एष मनोरथः ॥**
**अपि मानुष्यमाप्स्यामो देवत्वात्प्रच्युताः क्षितौ ।**
**मनुष्यः कुरुते तत्तु यन्न शक्यं सुरासुरै ॥**

(श्रीमार्कण्डेयमहापुराण ५४/६२-६३)

सनत्कुमार जी भी भारत के मनुष्यों की तथा भारतवर्ष की प्रशंसा करते हुए कहते है कि जो भारतवर्ष में जन्म ग्रहण किये हैं, वे सुखपूर्वक अपने कर्मों में प्रवृत्त रहकर स्वर्ग तथा मोक्ष सरलता से प्राप्त कर लेते है।

**आप्स्यन्ति धन्याः खलु ते मनुष्याः**
**सुखैर्युताः कर्मणि सन्निविष्टाः ।**
**जनुर्हि येषां खलु भारतेऽस्ति**
**ते स्वर्गमोक्षोभयलाभवन्तः ।**

(शिवमहापुराण उमा संहिता १८/२१)

जहाँ भगवान की अमृतमयी कथा न होती हो, जहाँ भगवद् भक्त साधु महात्मा न निवास करते हों, जहाँ देवताओं को प्रिय यज्ञों का महोत्सव न होता हो, वह स्थान स्वर्ग सदृश सुखदायक हो तो भी वहाँ नहीं रहना चाहिए। यथा–

**अहो अमीषां किमकारि शोभनं**
**प्रसन्न एषां स्विदुत स्वयं हरिः ।**
**यैर्जन्म लब्धं नृषु भारताजिरे**
**मुकुन्द सेवौपयिकं स्पृहा हि नः ॥**

(श्रीमद्भागवत ५/१९/२१)

**न यत्र वैकुण्ठकथासुधापगा**
**न साधवो भागवतास्तदाश्रयाः ।**
**न यत्र यज्ञेशमखा महोत्सवाः**
**सुरेशलोकोऽपि न वै स सेव्यताम् ॥**

(श्रीमद्भागवत ५/१९/२४)

भारतवर्ष मृत्युलोक का सर्वोत्तम स्थान है। उत्तमस्थान होने के कारण भारतवर्ष में भाषा, शरीर सौंदर्य, तथा प्राकृतिक सौन्दर्यों

की अपूर्व शोभा दिखाई देती है। यहाँ अरुन्धती, सीता, सावित्री, दमयन्ती आदि पतिव्रताये जन्म ग्रहण की थी। बालक एवं ध्रुव, प्रह्लाद प्रभृति भक्त प्रवर हुए। हरिश्चन्द्र, युधिष्ठिर प्रभृति सत्यपरायण धर्मात्मा राजा हुए। शिवि, उधीचि, कर्ण, बलि प्रभृति महादानी जन्म लिए। वसिष्ठ, विश्वामित्र प्रभृति वेदवेदाङ्ग के ज्ञाता तपस्वी हुए। वामन, परशुराम, राम, कृष्ण आदि अवतरित हुए। महर्षि याज्ञवल्क्य पतञ्जलि अत्रि आदि जन्म ग्रहण किए। मार्कण्डेय कपिल आदि दार्शनिक हुए। भरद्वाज, वामदेव आदि ऋषि हुए। व्यास, वाल्मीकि, तुलसीदास आदि ग्रन्थ रचयिता हुए। अनुसूया, लोपामुद्रा, दमयन्ती आदि तपस्विनी स्त्रियाँ हुई। मदालसा, सुकन्या आदि सद्गृहणियों ने जन्म लेकर भारतवर्ष की महिमा बढ़ाई। हिमालय से कन्याकुमारी पर्यन्त तथा कच्छ से कटक पर्यन्त निवास करने वाले सभी मनुष्यों के हृदय में केवल एक **सकललोक हितकारिणी भारतीय संस्कृति** शोभित है।

भारतवर्ष में परस्पर आचार-विचार-व्यवहार, वेश-भूषा, भाषाओं के भेद होने पर भी सभी राम, कृष्ण आदि अवतारों को एक समान मानते हैं। जन्म-जन्मान्तरों की भावनाओं को स्वीकार करते है। श्राद्धादि क्रियाओं में विश्वास करते है। एक समान देवी-देवताओं की पूजा अर्चना करते है। तीर्थ यात्रा, दान, तथा पुण्यकर्मों में श्रद्धा रखते है। प्राण प्रण से गोरक्षा हेतु प्रयत्न करते है तथा परोपकार मे लीन रहकर पापों की निन्दा करते है।

आधुनिक वैज्ञानिक विद्वान भी भारतवर्ष की प्राकृतिक पूर्णता को स्वीकारते है। यह भी मानते हैं कि भारतवर्ष सदृश पूर्ण प्राकृतिक सम्पदासम्पन्न राष्ट्र, इस भूमण्डल पर अन्यत्र नहीं है। सर्वोन्नत सर्वसमृद्धशाली, विन्ध्य हिमालय जैसा पर्वत भारतवर्ष को अलंकृत कर रहे हैं।

पुण्यशालिनी त्रिलोकपावनी भगवती गंगा, यमुना, सरस्वती सदृश देव-नदियाँ भारतवर्ष को सुशोभित कर रही है। विश्व विदित, वाराणसी, प्रयाग, हरिद्वार, उज्जैन आदि तीर्थ भी इस राष्ट्र की शोभा बढ़ा रहे है। नाना प्रकार की जातियाँ, नाना प्रकार की ऋतुएँ कृष्ण गौरांग मानव भी परस्पर स्नेह से भारतवर्ष में रह रहे है। नाना धर्म, संस्कृति ज्ञान-विज्ञान, वेद पुराण, धर्मशास्त्र दर्शन प्रभृति प्रकृति की सूक्ष्म पूर्णता प्रकट कर रहे है। वैज्ञानिक सूक्ष्म गंभीर गवेषणा का प्रत्यक्ष प्रमाणभूत भारतवर्ष है। यह निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि यह राष्ट्र भूलोक का सर्वोत्तम स्थान है। जैसे ज्ञानेन्द्रियों का प्रत्यक्ष केन्द्रभूत मस्तिष्क है। यहाँ देवता भी जन्म ग्रहण करने के लिए लालायित रहते है। इस राष्ट्र की भूमि में अनेक योगी, सन्यासी, ऋषि-मुनि धर्म प्रवर्तक, त्यागी, दानी, उदार, मनस्वी, शूरवीर, देशभक्त, प्रजाहितैषी राजा एवं सम्राट, प्रजाहित रक्षक नेता, समाजसुधारक युग-युग में समय-समय पर जन्म लेकर विश्व के कल्याण तथा शान्ति के मार्ग प्रशस्त किये है। भगवान् श्रीविष्णु की लीलास्थली पुण्यतमा भारतभूमि ही है।

इस प्रकार महामहोपाध्याय **श्रीकेदारनाथ द्विवेदी** 'वेदाचार्य' प्रणीत एवं विद्यावाचस्पति प्रो. देवेन्द्र प्रसाद मिश्र द्वारा सम्पादित **भगवान् श्रीपरशुराम एवं सोहनाग धाम** ग्रन्थ का 'भारतवर्ष में अवतार के कारण' नामक द्वितीय अध्याय समाप्त ।। २ ।।

**प्रीणातु भगवान् वेदः प्रीणन्तु सर्वदेवताः ।**
**प्रीणन्तु पितरः सर्वे प्रीणन्तु च महर्षयः ॥**
**॥ बलं विष्णोः प्रवर्धताम् ॥**

# तृतीय-अध्याय

# भगवान् के लीलावतार

समय-समय पर आदि पुरुष भगवान् श्रीहरि मनुष्यादि रूपों में अवतार ग्रहणकर वर्णाश्रम व्यवस्था की रक्षा करते हैं। धर्म मार्ग का पालन करते हैं अधर्म निवृत्ति के लिए दुष्टो का संहार कर के सभी प्राणियों को सुखी करते है। इसी आकर्षण से भगवान् नारायण मानव शरीर ग्रहण करते है।

**जगृहे पौरुषं रूपं भगवान्महदादिभिः ।**
**सम्भूतं षोडशकलमादौ लोकसिसृक्षया ॥**

(श्रीमद्भागवत १/३/१)

**एतन्नानावताराणां निधानं बीजमव्ययम् ।**
**यस्यांशांशेन सृज्यन्ते देवतिर्यङ्नरादयः ॥**

(श्रीमद्भागवत १/३/५)

भगवान् का पुरुष रूप जिसे नारायण कहा जाता है, सभी अवतारों का आश्रय कोष है। इसी से सभी अवतार प्रगट होते है। भगवद् रूप के छोटे से छोटे अंश से देवता पशुपक्षी तथा मनुष्यादि योनियों की सृष्टि होती है।

## वराह अवतार

श्रीमद्भागवत के अनुसार भगवान् विष्णु ने वराह रूप में अवतार लिया। पुरातन समय में दैत्य हिरण्याक्ष ने जब पृथ्वी को ले जाकर समुद्र में छिपा दिया तब ब्रह्मा की नाक से भगवान् विष्णु वराह रूप में प्रकट हुए। यथा-

**यत्रोद्यतः क्षितितलोद्धरणाय बिभ्रत्**
**क्रौडीं तनुं सकलयज्ञमयीमनन्तः ।**
**अन्तर्महार्णव उपागतमादिदैत्यं**
**तं दंष्ट्रयाद्रिमिव वज्रधरो ददार ॥**

(श्रीमद्भागवत २/७/१)

## सुयज्ञ

भगवान् विष्णु ने सुयज्ञ का अवतार धारण किया। श्रीमद्भागवत के अनुसार भगवान् यज्ञ का जन्म स्वायम्भुव मन्वन्तर में हुआ था। यथा-

**जातो रुचेरजनयत् सुयमान् सुयज्ञ**
**आकूतिसूनुरमरानथ दक्षिणायाम् ।**
**लोकत्रयस्य महतीमहरद् यदार्तिं**
**स्वायम्भुवेन मनुना हरिरित्यनूक्तः ॥**

(श्रीमद्भागवत २/७/२)

## कपिल मुनि

भगवान् विष्णु ने कपिल मुनि के रूप में अवतार लिया। इनके पिता का नाम महर्षि कर्दम व माता का नाम देवहूति था। शरशय्या पर पड़े हुए भीष्म पितामह के शरीर त्याग के समय वेदज्ञ व्यास आदि ऋषियों के साथ भगवान् कपिल भी वहां उपस्थित थे। कर्दम प्रजापति के घर देवहूति के गर्भ से नौ बहिनों के साथ भगवान् ने कपिल के रूप में अवतार ग्रहण किया। यथा-

**जज्ञे च कर्दमगृहे द्विज देवहूत्यां**
**स्त्रीभिः समं नवभिरात्मगतिं स्वमात्रे ।**
**ऊचे ययाऽऽत्मशमलं गुणसङ्गपङ्क-**
**मस्मिन् विधूय कपिलस्य गतिं प्रपेदे ॥**

(श्रीमद्भागवत २/७/३)

## नारद अवतार

धर्म ग्रंथों के अनुसार देवर्षि नारद भगवान् विष्णु के अवतार हैं। शास्त्रों के अनुसार नारद मुनि, ब्रह्मा के सात मानस पुत्रों में से एक हैं। उन्होंने कठिन तपस्या से देवर्षि पद प्राप्त किया है। यथा-

**सर्गे तपोऽहमृषयो नव ये प्रजेशाः**
**स्थाने च धर्ममखमन्वमरावनीशाः ।**
**अन्ते त्वधर्महरमन्युवशासुराद्या**
**मायाविभूतय इमाः पुरुशक्तिभाजः ॥**

(श्रीमद्भागवत २/७/३९)

**अश्वत्थः सर्ववृक्षाणां देवर्षीणां च नारदः ।**
**गन्धर्वाणां चित्ररथः सिद्धानां कपिलो मुनिः ॥**

(श्रीमद्भगवद्गीता १०/२६)

## दत्तात्रेय अवतार

श्रीमद्भागवत के अनुसार दत्तात्रेय भगवान् विष्णु के अवतार हैं। ब्रह्मा, चंद्रमा, शंकर, दुर्वासा और विष्णु के अंश से दत्तात्रेय का अवतार हुआ। यथा-

**अत्रेरपत्यमभिकाङ्क्षत आह तुष्टो**
**दत्तो मयाहमिति यद् भगवान् स दत्तः ।**
**यत्पादपङ्कजपरागपवित्रदेहा**
**योगर्द्धिमापुरुभयीं यदुहैहयाद्याः ॥**

(श्रीमद्भागवत २/७/४)

## श्रीसनकादि मुनि

धर्म ग्रंथों के अनुसार सृष्टि के आरंभ में लोक पितामह ब्रह्मा ने अनेक लोकों की रचना करने की इच्छा से घोर तपस्या की। उनके तप से प्रसन्न होकर भगवान विष्णु ने तप अर्थ वाले सन नाम

से युक्त होकर सनक, सनन्दन, सनातन और सनत्कुमार नाम के चार मुनियों के रूप में अवतार लिया। ये चारों प्राकट्य काल से ही मोक्ष मार्ग परायण, ध्यान में तल्लीन रहने वाले, नित्यसिद्ध एवं नित्य विरक्त थे। ये भगवान विष्णु के अवतार हैं। यथा-

**तप्तं तपो विविधलोकसिसृक्षया मे**
**आदौ सनात् स्वतपसः स चतुःसनोऽभूत् ।**
**प्राक्कल्पसम्प्लवविनष्टमिहात्मतत्त्वं**
**सम्यग् जगाद मुनयो यदचक्षतात्मन् ॥**

(श्रीमद्भागवत २/७/५)

## नर-नारायण

सृष्टि के आरंभ में भगवान् विष्णु ने धर्म की स्थापना के लिए दो रूपों में अवतार लिया। इस अवतार में वे अपने मस्तक पर जटा धारण किए हुए थे। उनके हाथों में हंस, चरणों में चक्र एवं वक्षःस्थल में श्रीवत्स के चिन्ह थे। श्रीमद्भागवत के अनुसार भगवान् विष्णु ने नर-नारायण के रूप में अवतार लिया था। यथा-

**धर्मस्य दक्षदुहितर्यजनिष्ट मूर्त्यां**
**नारायणो नर इति स्वतपः प्रभावः ।**
**दृष्ट्वाऽऽत्मनो भगवतो नियमावलोपं**
**देव्यस्त्वनङ्गपृतना घटितुं न शेकुः ॥**

(श्रीमद्भागवत २/७/६)

## मोहिनी अवतार

श्रीमद्भागवत के अनुसार भगवान् विष्णु ने मोहिनी अवतार लेकर देवताओं का भला किया। यथा-

**एतस्मिन्नन्तरे विष्णुः सर्वोपायविदीश्वरः ।**
**योषिद्रूपमनिर्देश्यं दधार परमाद्भुतम् ॥**

**सव्रीडस्मितविक्षिप्तभ्रूविलासावलोकनैः**
**दैत्ययूथपचेतःसु काममुद्दीपयन् मुहुः ॥**

(श्रीमद्भागवत ८/८/४१ एवं ४६)

प्राचीनकालमें इस चराचर जगत् का सृजन करके सबके आदिरूप, सर्वत्र गमन करने वाले, दुर्ज्ञेय, महान् अविनाशी, स्वतन्त्र, निराकार, निःस्पृह और परात्पर वे भगवान् जिन मायारूपिणी भगवती के संयोग से उपाधि रूप में [ब्रह्मा, विष्णु, महेश] तीन प्रकार के प्रतीत होते हैं, वे ही 'परा प्रकृति' हैं उत्पत्ति और काल के योग से ही वे कल्याणमयी प्रकृति उस परमात्मा से भिन्न भासती हैं। सबका मनोरथ पूर्ण करने वाली वे प्रकृति ही विश्व की रचना करती हैं, सम्यक् रूप से पालन करती हैं और कल्प के अन्त में संहार भी कर देती हैं। इस प्रकार वे विश्वमोहिनी भगवती प्रकृति ही तीन रूपों में विराजमान रहती हैं। उन्हीं से संयुक्त होकर ब्रह्मा ने जगत् की सृष्टि की है, उन्हीं से सम्बद्ध होकर विष्णु पालन करते हैं और उन्हीं के साथ मिलकर कल्याणकारी रुद्र संहार करते हैं।

**सृष्ट्वा पुरा हि भगवाञ्जगदेतच्चराचरम् ।**
**सर्वादिः सर्वगश्चासौ दुर्ज्ञेयः परमोऽव्ययः ॥**

**निरालम्बो निराकारो निःस्पृहश्च परात्परः ।**
**उपाधितस्त्रिधा भाति यस्याः सा प्रकृतिः परा ॥**

**उत्पत्तिकालयोगात्सा भिन्ना भाति शिवा तदा ।**
**सा विश्वं कुरुते कामं सा पालयति कामदा ॥**

**कल्पान्ते संहरत्येव त्रिरूपा विश्वमोहिनी ।**
**तया युक्तोऽसृजद् ब्रह्मा विष्णुः पाति तयान्वितः ॥**

(श्रीमद्देवीभागवत ४/१६/२२-२५)

## आदिराज पृथु

भगवान् विष्णु आदिराज पृथु के रूप में अवतरीत हुये और कुमार्ग गामी वेन का ऐश्वर्य और पौरुष ब्राह्मणों के हुंकार रूपी वज्र से जलकर भस्म हो गया। वह नरक में गिरने लगा। ऋषियों की प्रार्थना पर भगवान् ने उसके शरीर मन्थन से पृथु के रूप में अवतार धारण कर उसे नर्कों से उबारा और इस प्रकार पुत्र शब्द को चरितार्थ किया–

**यद्वेनमुत्पथगतं द्विजवाक्यवज्र–**
**विप्लुष्टपौरुषभगं निरये पतन्तम् ।**
**त्रात्वार्थितो जगति पुत्रपदं च लेभे**
**दुग्धा वसूनि वसुधा सकलानि येन ॥**

(श्रीमद्भागवत २/७/९)

## भगवान् ऋषभदेव

भगवान् विष्णु ऋषभदेव के रूप में अवतारित हुये। राजा नाभि की पत्नी सुदेवि के गर्भ से भगवान् ने ऋषभ देव के रूप में जन्म लिया। इस अवतार में समस्त आसक्तियों से रहित रहकर, अपनी इन्द्रियों और मन को अत्यन्त शान्त करके एवं अपने स्वरूप में स्थित होकर समदर्शी के रूप में उन्होंने जड़ों की भाँति योगचर्या का आचरण किया। इस स्थिति को महर्षि लोग परमहंसपद अथवा अवधूतचर्या कहते हैं–

**नाभेरसावृषभ आस सुदेविसूनु–**
**र्यो वै चचार समदृग् जडयोगचर्याम् ।**
**यत्पारमहंस्यमृषयः पदमामनन्ति**
**स्वस्थः प्रशान्तकरणः परिमुक्तसङ्गः ॥**

(श्रीमद्भागवत २/७/१०)

## हयग्रीव अवतार

यज्ञपुरुष ने ब्रह्मा जी के यज्ञ में स्वर्ण के समान कान्ति वाले हयग्रीव के रूप में अवतार ग्रहण किया। भगवान् का वह विग्रह वेदमय, यज्ञमय और सर्वदेवमय है। उन्ही की नासिका से श्वांस के रूप में वेदवाणी प्रकट हुई–

**सत्रे ममास भगवान् हयशीरषाथो**
**साक्षात् स यज्ञपुरुषस्तपनीयवर्णः ।**
**छन्दोमयो मखमयोऽखिलदेवतात्मा**
**वाचो बभूवुरुशतीः श्वसतोऽस्य नस्तः ॥**

(श्रीमद्भागवत २/७/११)

वेद ईश्वर के श्वास हैं –

**जाकर सहज स्वांस श्रुति चारी ।**
**सो हरि पढ़ यह कौतुक भारी ॥**

(श्रीरामचरितमानस बालकाण्ड २०४)

और भी

**यस्य निःश्वसितं वेदा यो वेदेभ्योऽखिलं जगत्।**
**निर्ममे तमहं वन्दे विद्यातीर्थमहेश्वरम् ॥**

(सायणीय कृष्ण यजुर्वेदीय भाष्य भूमिका का मङ्गलाचरण)

और भी

**अरेऽस्य महतो भूतस्य निःश्वसितमेतद्यदृग्वेदो यजुर्वेदः सामवेदोऽथर्ववेदश्चेति ॥**

(बृहदारण्यक उपनिषद् ४.५.११)

## मत्स्य अवतार

श्रीमद्भागवत के अनुसार भगवान् विष्णु ने सृष्टि को प्रलय से बचाने के लिए मत्स्यावतार ग्रहण किया। समय आने पर

मत्स्यरूपधारी भगवान् विष्णु ने राजा सत्यव्रत को तत्वज्ञान का उपदेश दिया, जो मत्स्यपुराण के नाम से प्रसिद्ध है।

चाक्षुष मन्वन्तर के अन्त में भावी मनु सत्यव्रत ने मत्स्य रूप में भगवान् को प्राप्त किया था। उस समय पृथ्वी रूप नौका के आश्रय होने के कारण वे ही समस्त जीवों के आश्रय बने। प्रलय के उस भयंकर जल में ब्रह्मा जी के मुख से गिरे हुए वेदों को लेकर वे उसी में विहार करते रहे–

**मत्स्यो युगान्तसमये मनुनोपलब्धः**
**क्षोणीमयो निखिलजीवनिकायकेतः ।**
**विस्त्रंसितानुरुभये सलिले मुखान्मे**
**आदाय तत्र विजहार ह वेदमार्गान् ॥**

(श्रीमद्भागवत २/७/१२)

## कच्छप अवतार

श्रीमद्भागवत के अनुसार भगवान् विष्णु ने कच्छप का अवतार ग्रहण किया। भगवान् विष्णु के कच्छपावतार को कूर्मावतार भी कहते हैं। जब मुख्य-मुख्य देवता और दानव अमृत की प्राप्ति के लिए क्षीरसागर को मथ रहे थे, तब भगवान् ने कच्छप के रूप में अपनी पीठ पर मंदराचल धारण किया। उस समय पर्वत के घुमने के कारण उसकी रगड़ से उनकी पीठ की खुजलाहट थोड़ी मिट गयी, जिससे वे कुछ क्षणों तक सुख की नींद सो सके–

**क्षीरोदधावमरदानवयूथपाना–**
**मुन्मथ्नताममृतलब्धय आदिदेवः ।**
**पृष्ठेन कच्छपवपुर्विदधार गोत्रं**
**निद्राक्षणोऽद्रिपरिवर्तकषाणकण्डूः ॥**

(श्रीमद्भागवत २/७/१३)

जिस समय भगवान् ने कच्छपरूप धारण किया था और उनकी पीठपर बड़ा भारी मन्दराचल मथानी की तरह घूम रहा था, उस समय मन्दराचल की चट्टानों की नोकसे खुजलाने के कारण भगवान् को तनिक सुख मिला। वे सो गये और श्वासकी गति तनिक बढ़ गयी। उस समय उस श्वास-वायु से जो समुद्र के जल को धक्का लगा था, उसका संस्कार आज भी उसमें शेष है। आज भी समुद्र उसी श्वासवायु के थपेड़ों के फलस्वरूप ज्वार-भाटों के रूप में दिन-रात चढ़ता-उतरता रहता है, उसे अब तक विश्राम न मिला, भगवान् की वही परम प्रभावशाली श्वासवायु आप लोगों की रक्षा करे -

**पृष्ठे भ्राम्यदमन्दमन्दरगिरिग्रावाग्रकण्डूयना-**
**न्निद्रालोः कमठाकृतेर्भगवतः श्वासानिलाः पान्तु वः।**
**यत्संस्कारकलानुवर्तनवशाद् वेलानिभेनाम्भसां**
**यातायातमतन्द्रितं जलनिधेर्नाद्यापि विश्राम्यति।।**

(श्रीमद्भागवत १२/१३/२)

## भगवान् नृसिंह

भगवान् विष्णु ने नृसिंह अवतार लेकर दैत्यों के राजा हिरण्यकशिपु का वध किया था। जब हिरण्यकशिपु स्वयं प्रह्लाद को मारने ही वाला था तब भगवान् विष्णु नृसिंह का अवतार लेकर खंबे से प्रकट हुए और उन्होंने अपने नाखूनों से हिरण्यकशिपु का वध कर दिया।

देवताओं का महान् भय मिटाने के लिए उन्होंने नृसिंह का रूप धारण किया। फड़कती हुई भौंहों और तीखी दाढ़ो से उनका मुख बड़ा भयावना लगता था। हिरण्यकशिपु उन्हे देखते ही हाथ में गदा लेकर उनपर टूट पड़ा। इस पर भगवान् नृसिंह ने दूर से ही उसे पकड़कर अपनी जांघों पर डाल लिया और उसके छटपटाते रहने पर भी अपने नखों से उसका पेट फाड़ डाला-

**त्रैविष्टपोरुभयहा स नृसिंहरूपं**
**कृत्वा भ्रमद्भ्रुकुटिदंष्ट्रकरालवक्त्रम् ।**
**दैत्येन्द्रमाशु गदयाभिपतन्तमारा-**
**दूरौ निपात्य विददार नखैः स्फुरन्तम् ॥**

(श्रीमद्भागवत २/७/१४)

## श्रीहरि अवतार

श्रीमद्भागवत के अनुसार गजेंद्र की स्तुति सुनकर भगवान् श्रीहरि प्रकट हुए और उन्होंने अपने चक्र से मगरमच्छ का वध कर दिया। भगवान् श्रीहरि ने गजेन्द्र का उद्धार कर उसे अपना पार्षद बना लिया-

**श्रुत्वा हरिस्तमरणार्थिनमप्रमेय -**
**श्चक्रायुधः पतगराजभुजाधिरूढः ।**
**चक्रेण नक्रवदनं विनिपाट्य तस्मा-**
**द्धस्ते प्रगृह्य भगवान् कृपयोज्जहार ॥**

(श्रीमद्भागवत २/७/१६)

## वामन अवतार

भगवान् वामन अदिति के पुत्रों में सबसे छोटे थे, परन्तु गुणों की दृष्टि से वे सबसे बड़े थे। क्योंकि यज्ञपुरुष भगवान् ने इस अवतार में बलि के संकल्प छोड़ते ही सम्पूर्ण लोकों को अपने चरणों से ही नाप लिया था। वामन बनकर उन्होंने तीन पग पृथ्वी के बहाने बलि से सारी पृथ्वी ले तो ली, परन्तु इससे यह बात सिद्ध कर दी कि सन्मार्ग पर चलने वाले पुरुषों को याचना के सिवा और किसी उपाय से समर्थ पुरुष भी अपने स्थान से नहीं हटा सकते, ऐश्वर्य से च्युत नहीं कर सकते-

**ज्यायान् गुणैरवरजोऽप्यदितेः सुतानां**
**लोकान् विचक्रम इमान् यदथाधियज्ञः ।**
**क्ष्मां वामनेन जगृहे त्रिपदच्छलेन**
**याच्ञामृते पथि चरन् प्रभुभिर्न चाल्यः ॥**

(श्रीमद्भागवत २/७/१७)

## हंस अवतार

भगवान् विष्णु हंस के रूप में प्रकट हुए और उन्होंने सनकादि मुनियों के संदेह का निवारण किया। इसके बाद सभी ने भगवान् हंस की पूजा की। हंस के रूप में भगवान् ने देवर्षि नारद को योग-ज्ञान और आत्मतत्त्व को प्रकाशित करने वाले भागवत्ध र्म का उपदेश किया-

**तुभ्यं च नारद भृशं भगवान् विवृद्ध-**
**भावेन साधुपरितुष्ट उवाच योगम् ।**
**ज्ञानं च भागवतमात्मसतत्त्वदीपं**
**यद्वासुदेवशरणा विदुरञ्जसैव ॥**

(श्रीमद्भागवत २/७/१९)

## भगवान् धन्वन्तरि

धर्म ग्रंथों के अनुसार जब देवताओं व दैत्यों ने मिलकर समुद्र मंथन किया तो उसमें से चौदह रत्न प्राप्त हुये। सबसे पहले भयंकर हलाहल विष निकला जिसे विश्वकल्याण के लिए आशुतोष भगवान् शिव ने अपने कण्ठ में धारण कर त्रिलोकी की रक्षा की। इसके बाद क्रमशः कामधेनु गाय, उच्चैश्रवा घोड़ा, ऐरावत हाथी, कौस्तुभ मणि, कल्पवृक्ष, रम्भा अप्सरा, देवी लक्ष्मी, वारुणी, चन्द्रमा, पारिजात वृक्ष, पाञ्चजन्य शंख, भगवान् धन्वन्तरि और अमृत पूर्णकलश समुद्र मंथन से निकले। यही धन्वन्तरि भगवान् विष्णु के अवतार हैं-

**धन्वन्तरिश्च भगवान् स्वयमेव कीर्ति-**
**र्नाम्ना नृणां पुरुरुजां रुज आशु हन्ति ।**
**यज्ञे च भागममृतायुरवावरुन्ध**
**आयुश्च वेदमनुशास्त्यवतीर्य लोके ॥**

(श्रीमद्भागवत २/७/२१)

## परशुराम अवतार

वेदादि शास्त्रों के अनुसार परशुराम भगवान् विष्णु के प्रमुख अवतारों में से एक हैं । जब संसार में ब्राह्मणद्रोही आर्यमर्यादा का उल्लङ्घन करने वाले नारकीय क्षत्रिय अपने नाश के लिये ही दैववश बढ़ जाते हैं और पृथ्वी के काँटे बन जाते हैं, तब भगवान् महापराक्रमी परशुराम के रूप में अवतीर्ण होकर अपनी तीखी ध ारवाले फरसे से इक्कीस बार उनका संहार करते हैं -

**क्षत्रं क्षयाय विधिनोपभृतं महात्मा**
**ब्रह्मध्रुगुज्झितपथं नरकार्तिलिप्सु ।**
**उद्धन्त्यसाववनिकण्टकमुग्रवीर्य-**
**स्त्रिःसप्तकृत्व उरुधारपरश्वधेन ॥**

(श्रीमद्भागवत २/७/२२)

विष्णु के अवतारों में नारायण को छोड़कर मात्र परशुराम ही ऋग्वेद के ग्यारह मन्त्रों के द्रष्टा हैं। ऋग्वेद दशम मण्डल के 110 सूक्त के द्रष्टा राम जामदग्न्य (श्रीपरशुराम) हैं। चतूरात्रयज्ञ के प्रयोगकर्ता यज्ञ प्रवर्तक जमदग्नि थे। उनके पुत्र भगवान् परशुराम भी यज्ञ प्रभाव से पुष्टिमान् हुये क्योंकि पिता तथा पुत्र दोनों प्रजापशुध न और पोषण युक्त ऐश्वर्य से परिपूर्ण होकर समृद्धतम हुये। जामदग्नि पद पिता-पुत्र दोनों के लिए प्रयुक्त होता है। यथा-

**सायणभाष्ये भृगुपुत्रः । दशममण्डलस्य एकसप्तत्यधिक-शततमसूक्तस्य चतसृणामृचां द्रष्टा-**

**शौ. ६.१४.३ मन्त्रे इट इव भाष्ये इत इव प्रयोगो दृश्यते। शौ. ९.३.१८ इटस्य ते विवृताम्यपिनद्धमपोर्णवन् । वरुणेन समुब्जितां मित्रः प्रातर्व्युञ्जतु ॥**

कपिवन भायजात्य ने चतूरात्र यज्ञ करने के लिये जामदग्नि को दीक्षा दी थी। कुछ स्थलों में जामदग्न्य पद आया है। चतूरात्र नामक यज्ञ के लिये दीक्षा दी। इससे सिद्ध होता है कि परशुराम चतूरात्र यज्ञ कर्ता थे । भार्गव जमदग्नि ऋषि के पुत्र राम परशुराम नाम से प्रख्यात थे । उनका आप्रीसूक्त समिद्ध एकादश मन्त्र जमदग्नि पुत्र राम का आप्रिय है पशुयजन में जामदग्न्यों का यह आप्रीसूक्त है। प्राजापत्य यज्ञ में तो सबके लिये जामदग्न्य का ही आप्रीसूक्त है ।

## श्रीराम अवतार

त्रेतायुग में राक्षसराज रावण का बहुत आतंक था। उसके वध के लिए भगवान् विष्णु ने राजा दशरथ के यहां माता कौशल्या के गर्भ से पुत्र रूप में जन्म लिया। भगवान् विष्णु ने राम अवतार लेकर देवताओं को भय मुक्त किया। मायापति भगवान् हमपर अनुग्रह करने के लिये अपनी कलाओं–भरत, शत्रुघ्न और लक्ष्मण के साथ श्रीराम के रूप से इक्ष्वाकु के वंश में अवतीर्ण होते हैं। इस अवतार में अपने पिताकी आज्ञाका पालन करने के लिये अपनी आह्लादिनी पत्नी श्रीसीता और भाई लक्ष्मण के साथ वे वन में निवास करते हैं। उसी समय उनसे विरोध करके राक्षसराज रावण उनके हाथों मरता है–

**अस्मत्प्रसादसुमुखः कलया कलेश**
**इक्ष्वाकुवंश अवतीर्य गुरोर्निदेशे ।**
**तिष्ठन् वनं सदयितानुज आविवेश**
**यस्मिन् विरुध्य दशकन्धर आर्तिमार्च्छत् ॥**

(श्रीमद्भागवत २/७/२३)

भगवान् श्रीराम ने अपने पिता राजा दशरथ के सत्य को रक्षा के लिये राजपाट छोड़ दिया और वे वन-वन में फिरते रहे। उनके चरणकमल इतने सुकुमार थे कि परम सुकुमारी श्रीजानकीजी के करकमलों का स्पर्श भी उनसे सहन नहीं होता था। वे ही चरण जब वनमें चलते-चलते थक जाते, तब हनूमान् और लक्ष्मण उन्हें दबा-दबाकर उनकी थकावट मिटाते। शूर्पणखा को नाक-कान काटकर विरूप कर देने के कारण उन्हें अपनी प्रियतमा श्रीजानकीजी का वियोग भी सहना पड़ा। इस वियोग के कारण क्रोधवश उनकी भौहें तन गयीं, जिन्हें देखकर समुद्र तक भयभीत हो गया। इसके बाद उन्होंने समुद्र पर पुल बाँधा और लङ्का में जाकर दुष्ट राक्षसों के जंगल को दावाग्नि के समान दग्ध कर दिया। वे कोसलनरेश हमारी रक्षा करें-

**गुर्वर्थे त्यक्तराज्यो व्यचरदनुवनं**
**पद्मपद्भ्यां प्रियायाः**
**पाणिस्पर्शाक्षमाभ्यां मृजितपथरुजो**
**यो हरीन्द्रानुजाभ्याम् ।**
**वैरूप्याच्छूर्पणख्याः प्रियविरहरुषा-**
**ऽऽरोपितभ्रूविजृम्भ-**
**त्रस्ताब्धिर्बद्धसेतुः खलदवदहनः**
**कोसलेन्द्रोऽवतान्नः ॥**

(श्रीमद्भागवत ९/१०/४)

## महर्षि वेदव्यास

भगवान् विष्णु महर्षि वेदव्यास का अवतार धारण कर महाभारत तथा 18 महापुराणों और ब्रह्मसूत्र इत्यादि विश्वकल्याणाध ायक ग्रन्थरत्नों का प्रणयन करके लोकोपकार किया है। भगवान् नारायण प्रत्येक कल्प में सत्यवती के गर्भ से व्यास के रूप में प्रकट

होकर वे वेदरूपी वृक्ष का विभिन्न शाखाओं के रूप में विभाजन कर देते हैं-

**कालेन मीलितधियामवमृश्य नृणां**
**स्तोकायुषां स्वनिगमो बत दूरपारः ।**
**आविर्हितस्त्वनुयुगं स हि सत्यवत्यां**
**वेदद्रुमं विटपशो विभजिष्यति स्म ॥**

(श्रीमद्भागवत २/७/३६)

## श्रीकृष्ण अवतार

द्वापरयुग में भगवान् विष्णु ने श्रीकृष्ण अवतार लेकर अधर्मियों का नाश किया। कंस का वध भी भगवान् श्रीकृष्ण ने ही किया। महाभारत के युद्ध में अर्जुन के सारथि बने और दुनिया को गीता का ज्ञान दिया। धर्मराज युधिष्ठिर को राजा बना कर धर्म की स्थापना की। भगवान् विष्णु का ये अवतार सभी अवतारों में सबसे श्रेष्ठ माना जाता है। यथा-

**भूमेः सुरेतरवरूथविमर्दितायाः**
**क्लेशव्ययाय कलया सितकृष्णकेशः ।**
**जातः करिष्यति जनानुपलक्ष्यमार्गः**
**कर्माणि चात्ममहिमोपनिबन्धनानि ॥**

(श्रीमद्भागवत २/७/२६)

## बुद्ध अवतार

श्रीमद्भागवत के अनुसार बौद्धधर्म के प्रवर्तक गौतम बुद्ध भगवान् विष्णु के अवतार हुये। देवताओं के शत्रु दैत्यलोग भी वेदमार्ग का सहारा लेकर मयदानव के बनाये हुए अदृश्य वेगवाले नगरों में रहकर लोगों का सत्यानाश करने लगेंगे, तब भगवान् लोगों की बुद्धि में मोह और अत्यन्त लोभ उत्पन्न करने वाला वेष धारण करके बुद्ध के रूप में बहुत-से उपधर्मा का उपदेश करेंगे-

**देवद्विषां निगमवर्त्मनि निष्ठितानां**
**पूर्भिर्मयेन विहिताभिरदृश्यतूर्भिः ।**
**लोकान् घ्नतां मतिविमोहमतिप्रलोभं**
**वेषं विधाय बहु भाष्यत औपधर्म्यम् ॥**

(श्रीमद्भागवत २/७/३७)

## कल्कि अवतार

धर्म ग्रंथों के अनुसार कलयुग में भगवान् विष्णु कल्कि रूप में अवतार लेंगे। कल्कि अवतार कलयुग व सतयुग के संधिकाल में होगा। यह अवतार 64 कलाओं से युक्त होगा। पुराणों के अनुसार उत्तरप्रदेश के मुरादाबाद जिले के शंभल नामक स्थान पर विष्णुयशा नामक तपस्वी ब्राह्मण के घर भगवान् कल्कि पुत्र रूप में जन्म लेंगे। कल्कि देवदत्त नामक घोड़े पर सवार होकर संसार से पापियों का विनाश करेंगे और धर्म की पुनःस्थापना करेंगे।

**यर्ह्यालयेष्वपि सतां न हरेः कथाः स्युः**
**पाखण्डिनो द्विजजना वृषला नृदेवाः ।**
**स्वाहा स्वधा वषडिति स्म गिरो न यत्र**
**शास्ता भविष्यति कलेर्भगवान् युगान्ते ॥**

(श्रीमद्भागवत २/७/३८)

सङ्कल्प से विश्व की रचना करने वाले षडैश्वर्यसम्पन्न भगवान् श्रीविष्णु के लीलावतारों का अत्यन्त संक्षेप से साङ्केतिक नाम स्मरण इस अध्याय में किया।

श्रीमद्भागवत में भगवान् की विभूतियों का संक्षिप्त वर्णन है। भागवत् के अध्ययन से सबके आश्रय और सर्वस्वरूप भगवान् श्रीहरि में साधकों की भक्ति प्रबल होती है। जो मनुष्य भगवान् की अचिन्त्य शक्ति माया का वर्णन या दूसरे के द्वारा किये हुए वर्णन

का अनुमोदन करते हैं अथवा श्रद्धा के साथ नित्य श्रवण करते हैं, उनका चित्त माया से कभी मोहित नहीं होता–

**मायां वर्णयतोऽमुष्य ईश्वरस्यानुमोदतः ।**
**शृण्वतः श्रद्धया नित्यं माययाऽऽत्मा न मुह्यति ॥**

(श्रीमद्भागवत २/७/५३)

इस प्रकार महामहोपाध्याय **श्रीकेदारनाथ द्विवेदी** 'वेदाचार्य' प्रणीत एवं विद्यावाचस्पति प्रो. देवेन्द्र प्रसाद मिश्र द्वारा सम्पादित **भगवान् श्रीपरशुराम एवं सोहनाग धाम** ग्रन्थ का 'भगवान् के लीलावतार' नामक तृतीय अध्याय समाप्त ॥ ३ ॥

**प्रीणातु भगवान् वेदः प्रीणन्तु सर्वदेवताः ।**
**प्रीणन्तु पितरः सर्वे प्रीणन्तु च महर्षयः ॥**
**॥ बलं विष्णोः प्रवर्धताम् ॥**

# चतुर्थ-अध्याय

## भृगुवंश तथा भृगुवंशियों के वैभवादि का वर्णन

परशुराम जी का वृत्तान्त सर्वत्र विख्यात है। इसे सुनने से पाप वैसे ही नष्ट हो जाता है, जैसे भगवान् सूर्य कीचड़ को सुखा देते हैं। जब अत्याचारी राजा शक्तिशाली बनकर अपने पाप के बोझ से भूमि को दबाने लगते हैं। तभी परमात्मा अनन्त रूपों में प्रकट होकर अत्याचारियों का नाश कर भूमि का भार दूर करते हैं। परमात्मा सृष्टि का भार वहन करने हेतु धर्म का रक्षक बन कर पृथिवी पर किसी न किसी रूप में अवतरित हो जाते हैं। इसी उद्देश्य में भृगुवंश मे भगवान का अवतार परशुराम जी के रूप में हुआ था। वेदादि शास्त्रों में प्राप्त भृगु-चरित्र का निरूपण अपनी मति के अनुसार प्रस्तुत कर रहा हूँ।

सरस्वती नदी के तट पर भृगु जी का अत्यन्त पवित्र आश्रम था। वनस्थली में विराजमान वह आश्रम स्वर्ग के नन्दन वन जैसे सुशोभित हो रहा था। आश्रम अत्यन्त शान्त रहता था। केवल वेदाध्ययन करने वाले बटुक ही वेद मंत्रो के उच्चारण से आश्रम को गुञ्जायमान किये थे। आश्रमवासियों के मन में परस्पर अत्यन्त स्नेह था। शत्रुता केवल वन्यजीवों में थी। पुण्यस्थानों मे सदैव लक्ष्मी की वृद्धि होती रहती है। नाना प्रकार के वैभव से वह आश्रम परिपूर्ण था। मनस्वी पुरुषों के शान्तस्वरूप हो जाने पर काम, क्रोध, मद, लोभ, पाप अपने आप समाप्त हो जाते हैं। आश्रमवासी महात्मा तथा वेदाध्ययन करने वाले वटु किसी न किसी आध्यात्मिक चिन्तन मे लगे रहते थे।

भृगुजी अथर्ववेद के मर्मज्ञ, वेदवेदाङ्ग में पारङ्गत, सर्वशास्त्रार्थवेत्ता मृतसंजीवनी विद्या के आविष्कारक, राजाओ के राज्यफल देने वाले महर्षि थे।

आश्रम के अन्दर का भाग अत्यन्त आकर्षक एवं रमणीय था। जिसे देखकर यति संन्यासी, तपस्वी, ब्रह्मचारी, आकर निवास करने लगे। उन्हें देखकर ऐसा प्रतीत होता था, मानो तपस्या स्वयं मूर्तिमती बनकर भूमि पर अवतरित हो गई हो। सभी काम, क्रोध, मद, लोभ, ईर्ष्या अभिमान छोड़कर तपस्या एवं वेदाध्ययन में रत रहा करते थे। उनका तेज बढ़कर देदीप्यमान हो रहा था। तपस्वी जन संन्तुष्ट थे। स्पर्धा किसी मे कोई नहीं थी। सभी प्रकृति निरीक्षण एवं परमार्थ चिन्तन में लगे रहते थे।

उसी तपोवन में भृगुवंश में उत्पन्न महातेजस्वी ऋचीक ऋषि कुलाधिपति थे। उन्हें देखकर ऐसा प्रतीत होता था, मानो ब्रह्मा जी स्वयं शरीर धारण कर आश्रम मे उतर आये हों। वे अपनी शरीर की आभा एवं सौन्दर्य से विभूषित होकर दूसरे कामदेव के समान सुशोभित हो रहे थे। वे पिता जी के मुख से सुनकर वेदादि शास्त्रों का ज्ञान अनायास प्राप्त कर लिया था, जैसे कोई वंश परम्परा से सम्पत्ति प्राप्त करता है ।

चन्द्रमा की चाँदनी के समान ऋचीक जी की निर्मल कीर्ति सर्वत्र फैलकर लोगों को आनन्दित करने लगी। अल्पज्ञ भी वहाँ जाकर ऐसे तेजस्वी प्रतीत होते थे, जैसे समुद्र से मिलकर नदियाँ भी समुद्ररूप हो जाती हैं। आश्रम में अध्ययन करने वाले बालक अपनी रुचि के अनुरूप विद्या ग्रहणकर अपने घरों या गाँवों में जाकर वैसे सुशोभित होते थे जैसे समुद्र से निकला हुआ रत्न शोभायमान होता है। ब्राह्मण का धर्म बड़ा कठिन है। पूर्णरूप से अनुशासन वाला है।

वह अपने आचरण से धर्म सिखाता है। ब्राह्मण कुल में उत्पन्न बालक का ब्राह्मण कुल की यथाविधि विवाहिता कन्या से उत्पन्न बालक ब्राह्मण है।

वेद ब्राह्मण का मुख है। तप उसका तेज है। ज्ञान उसकी आत्मा है। धर्म उसका शरीर है। त्याग उसकी आजीविका होती है। क्षमा उसका स्वभाव होता है। सत्य वाणी होती है। करुणा उसकी क्रीडा होती है।

ऋचीक आश्रम में आश्रम के सभी धर्म मूर्तिमान थे ऋचीक जी भृगुआश्रम का देख-रेख किया करते थे-

**ब्रह्मसूनुभृगुर्नाम सप्तमो ब्रह्मसत्तमः ।**
**द्विजानामभवन्मान्यो द्विजानामिव विष्णुवाट् ॥**

(श्रीभार्गवराघवीयम्, स्वामी श्रीरामभद्राचार्यजी सर्ग-१ श्लोक-१२)

ब्राह्मणो में श्रेष्ठ ब्रह्मा के सातवें पुत्र महर्षि भृगु ब्राह्मणों द्वारा वैसे पूजित हुए जैसे भगवान् विष्णु को ढोने वाले पक्षी गरुड पक्षियों मे पूजित होते हैं। धर्मचक्रवर्ती महामहोपाध्याय कविकुलरत्न प्रस्थानत्रयीभाष्यकार संस्थापित-विश्वविद्यालय वाचस्पति श्रीचित्रकूट तुलसीपीठाधीश्वर जगद्गुरुश्रीरामानन्दाचार्य स्वामी श्रीरामभद्राचार्य महाराज जी ने श्रीभार्गवराघवीयं महाकाव्य में लिखते हैं-

**धत्ते ब्रह्मण्यशीलत्वाद्यत्पदाम्भोजलाञ्छनम् ।**
**श्रीवत्साङ्क इवैणाङ्कं वत्सोऽत्रेरिव वत्सके ॥**

(श्रीभार्गवराघवीयम् सर्ग-१ श्लोक-१५)

## महर्षि भृगु की महिमा

महर्षि भृगु की वन्दना प्राच्य एवं प्रतीच्य ग्रन्थकारों ने महाकाव्यों में की है। संस्कृत के ख्यातिलब्ध महाकवि आचार्य श्री

मिथिला प्रसाद त्रिपाठीजी अपनी कृति **भार्गवीयम्** के मङ्गल पद्य में लिखते हैं–

**श्रीर्यत्पदाम्बुजरजः परिसेवनाय**
**नित्याश्रयं च विदधाति युगान्तरेषु ।**
**पित्रर्षिदेवविधिशंभुभिरर्चिताय**
**तस्मै नमो भृगुपदाङ्कितविग्रहाय ॥**

(भार्गवीयम् १/१)

भक्तवत्सल भगवान् नारायण भी स्वभावतः ब्राह्मणभक्त होने के कारण ही भृगुजी के चरणचिन्ह को अपनी छाती पर उसी प्रकार धारण करते हैं, जैसे चन्द्रमा अपने मण्डल में मृगलाञ्छन को धारण किये है। भृगुकुल की महिमा बहुत व्यापक थी। यह भृगुजी की तपस्या तथा विद्या का प्रभाव था। भृगुकुल के ऋषि आचार्य विद्वान् देवकुल तथा राक्षसकुल दोनों में समान रूप से समादर की दृष्टि से देखे जाते थे। दोनों कुलों के याजक होते थे। भृगुवंश जितना शास्त्रीय विद्या में पारंगत था उतना ही शस्त्र विद्या में कुशलता प्राप्त किए था। उनके आश्रम मे शस्त्र तथा शास्त्र की बराबर शिक्षा दी जाती थी। महर्षि भृगु जी ज्योतिष तथा तंत्र विद्या के पारंगत विद्वान् थे।

जमदग्नि महर्षि का शिर सहस्रार्जुन के बेटों ने धोखे में काट लिए थे। श्रीपरशुराम जी ने अपने पिता का शिर सहस्रार्जुन के बेटों से छीन कर उनके धड़ से जोड़ दिये थे। आज भी जमदग्नि जी सप्तर्षि मण्डल में आकाश के मध्य विद्यमान हैं। एक बार परशुराम जी अपने पिता के आदेश पालन में अपनी माता का शिर काट लिए थे, वे भी बाद में बड़ी कुशलता से शिर को उनके शरीर में जोड़ दिये, माता जी को इसका भान भी नहीं हुआ था।

नर्मदा तथा सरस्वती का प्रदेश आर्य-जीवन का शुद्ध स्थान था। भृगुवंशी ब्राह्मण तथा हैहयवंशी राजा आपस में बड़े प्रेम से रहते थे। परन्तु अपनी राजनैतिक महत्वाकांक्षा के कारण हैहयवंशी राजा मदान्ध होकर प्रजा में लूट-पाट मचा दिये। हैहयवंशी राजा छोटे राजाओं की चिंता नही करते थे। उनका धन लूटते थे, राज्य हड़प लेते थे। तथा उन्हें यातना देते थे। उन राजाओं जैसा हैहयवंशी राजा ब्राह्मणो के साथ भी व्यवहार करते थे। उन्हें तपस्वी महर्षि, विद्वानों तथा महात्माओं की कोई चिन्ता नहीं थी उनका तिरस्कार करते थे। उनकी सम्पत्ति लूट लेते थे। उनका घर तथा आश्रम भी उजाड़ देते थे।

## महर्षि भृगुजी के अन्य महत्वपूर्ण कार्य

महर्षि भृगु मृत संजीवनी विद्या तथा औषधिशास्त्र के आविष्कारक विद्वान् थे। हैहयवंशी राजकुमारों द्वारा जमदग्नि ऋषि का शिर काट लिया गया। भृगु जी एवं परशुरामजी अपनी विद्या औषधि द्वारा शिर जोड़ कर जीवित कर दिये। जमदग्नि ऋषि पूर्ववत स्वस्थ हो गये।

अरणी से अग्नि उत्पन्न करना एवं बडवाग्नि का आविष्कार भृगु जी का ही कार्य था।

इन्होंने अपने तेज से अग्नि, राजा नहुष, ब्रह्मा, विष्णु, तथा शिव को भी श्रापित कर दिया था।

महर्षि भृगु चतुर्वेद शास्त्र के ज्ञाता, वास्तुशास्त्र के पारङ्गत विद्वान् ज्योतिषशास्त्र के कुशल विद्वान्, अग्नि के आविष्कारक विद्वान् थे।

## वेदमन्त्रो के द्रष्टा महर्षि भृगु

अथर्ववेद संहिता के तृतीय काण्ड सूक्त १२ में नौ मन्त्रो के द्रष्टा हैं इन मन्त्रो मे विष्णु तथा जलदेवता वरुण के लिए स्तुति की गई है। तृतीय काण्ड सूक्त ६ में ६ मन्त्र हैं। इनमे मित्रावरूण देवता की स्तुति है। सूक्त १४ में ९ मन्त्र हैं, अग्नि की स्तुति है। काण्ड सप्तम में- सूक्त १५ मन्त्र संख्या ९ में सविता देवता की स्तुति है। सूक्त १६ मे मन्त्र ९ हैं। इसमें सविता देवता की स्तुति है। सूक्त १७ में मन्त्र संख्या ४ है, धाता, विष्णु, त्वष्टा देवता की स्तुति है।

सूक्त ८४ में ३ मन्त्र हैं तथा इनमें अग्नि इन्द्र की स्तुति है। सूक्त १०७ में मन्त्र की संख्या ९ है, इसमें सूर्य की स्तुति है। सूक्त १०८ में मत्र संख्या २ है देवता अग्नि की स्तुति है। सूक्त ११० में मन्त्र संख्या ३ है, इसमे इन्द्र तथा अग्नि की स्तुति है।

काण्डद्वादश सूक्त संख्या २ में मंत्र ५५ है इनमें अग्नि तथा मृत्यु देवता की स्तुति है। गंभीर बिमारी मे व्यक्ति को स्वस्थ होने हेतु मन्त्रों का पाठात्मक अनुष्ठान करना होता है। काण्ड १९, सूक्त संख्या ३२, में मन्त्र १० हैं, देवता धर्म हैं। आयुकामना इस सूक्त का पाठ होता है। सूक्त ३३ में भी मन्त्र संख्या ५ है- आयु कामना से इन मन्त्रों का भी पाठ जप होता है। सूक्त संख्या ५४ में मंत्र संख्या ५ है। इस सूक्त के देवता काल हैं, आयु कामना में इनकी स्तुति होती है। सूक्त ५५ में मन्त्रसंख्या ६ है। इसमें देवता अग्नि की स्तुति है। अथर्ववेद की शौनक शाखा में कुल ११९ मन्त्र हैं। अनेक देवताओं की स्तुतियों में इनका प्रयोग किया जाता है। सूक्त ३ मे मृत्यु तथा काल देवता की स्तुति है। ऋग्वेद में भी महर्षि भृगु लगभग ३८ मन्त्रों के द्रष्टा हैं।

## देवताओं को श्राप देना

तपस्या में महर्षि भृगु जी अत्यन्त प्रौढ़ हैं, देवताओं को भी श्राप देने में समर्थ हैं। यथा–

तस्यैवं ददतः शापं श्रुत्वा द्विजकुलाय वै ।
भृगुः प्रत्यसृजच्छापं ब्रह्मदण्डं दुरत्ययम् ॥

भवव्रतधरा ये च ये च तान् समनुव्रताः ।
पाखण्डिनस्ते भवन्तु सच्छास्त्रपरिपन्थिनः ॥

नष्टशौचा मूढधियो जटाभस्मास्थिधारिणः ।
विशन्तु शिवदीक्षायां यत्र दैवं सुरासवम् ॥

ब्रह्म च ब्राह्मणांश्चैव यद्यूयं परिनिन्दथ ।
सेतुं विधारणं पुंसामतः पाखण्डमाश्रिताः ॥

एष एव हि लोकानां शिवः पन्थाः सनातनः ।
यं पूर्वे चानुसंतस्थुर्यत्प्रमाणं जनार्दनः ॥

तद्ब्रह्म परमं शुद्धं सतां वर्त्म सनातनम् ।
विगर्ह्य यात पाषण्डं दैवं वो भूतराट् ॥

मैत्रेय उवाच
तस्यैवं वदतः शापं भृगोः स भगवान् भवः ।
निश्चक्राम ततः किञ्चिद्विमना इव सानुगः ॥

(श्रीमद्भागवत ४/२/२७–३३)

इस प्रकार भृगु जी भगवान् शंकर को तथा उनके भक्तों को कठोर श्राप दिये। भगवान् शिव इसे स्वीकार भी किये। महर्षि भृगुजी ने ब्रह्मा, विष्णु तथा शंकरजी की परीक्षा लिए और त्रिदेवों में श्रेष्ठ कौन हैं? इसका भी निर्णय उन्होंने किया–

सरस्वत्यास्तटे राजन्नृषयः सत्रमासत ।
वितर्कः समभूत्तेषां त्रीष्वधीशेषु को महान् ॥

तस्य जिज्ञासया ते वै भृगुं ब्रह्मसुतं नृप ।
तज्ज्ञप्त्यै प्रेषयामासुः सोऽभ्यगाद् ब्रह्मणः सभाम् ॥
(श्रीमद्भागवत १०/८९/१-२)

पुनीहि सहलोकं मां लोकपालांश्च मद्गतान् ।
पादोदकेन भवतस्तीर्थानां तीर्थकारिणा ॥

अद्याहं भगवँल्लक्ष्म्या आसमेकान्तभाजनम् ।
वत्स्यत्युरसि मे भूतिर्भवत्पादहतांहसः ॥

श्रीशुक उवाच
एवं ब्रुवाणे वैकुण्ठे भृगुस्तन्मन्द्रया गिरा ।
निर्वृतस्तर्पितस्तूष्णीं भक्त्युत्कण्ठोऽश्रुलोचनः ॥

पुनश्च सत्रमाव्रज्य मुनीनां ब्रह्मवादिनाम् ।
स्वानुभूतमशेषेण राजन् भृगुरवर्णयत् ॥

तन्निशम्याथ मुनयो विस्मिता मुक्तसंशयाः ।
भूयांसं श्रद्दधुर्विष्णुं यतः शान्तिर्यतोऽभयम्॥

धर्मः साक्षाद् यतो ज्ञानं वैराग्यं च तदन्वितम् ।
ऐश्वर्यं चाष्टधा यस्मात् यशश्चात्ममलापहम् ॥

मुनीनां न्यस्तदण्डानां शान्तानां समचेतसाम् ।
अकिञ्चनानां साधूनां यमाहुः परमां गतिम् ॥

सत्त्वं यस्य प्रिया मूर्तिर्ब्राह्मणास्त्विष्टदेवताः ।
भजन्त्यनाशिषः शान्ता यं वा निपुणबुद्धयः ॥

**त्रिविधाकृतयस्तस्य राक्षसा असुराः सुराः ।**
**गुणिन्या मायया सृष्टाः सत्त्वं तत्तीर्थसाधनम् ॥**

**श्रीशुक उवाच**
**एवं सारस्वता विप्रा नृणां संशयनुत्तये ।**
**पुरुषस्य पदाम्भोजसेवया तद्गतिं गताः ॥**

(श्रीमद्भागवत १०/८९/११-२०)

अपनी तपस्या के बल पर भृगुजी त्रिदेवों की बड़ी कठोरता से परीक्षा लिए और परीक्षा के समय जो घटना घटी थी सबकुछ सुना दिये इसके पश्चात् ऋषियो ने निर्णय किया कि भगवान् विष्णु शान्ति तथा अभय के उद्गम स्थल हैं, इन्हीं से धर्म, ज्ञान, वैभव एवं छः प्रकार के ऐश्वर्य तथा चित्त को शुद्ध करने वाला यश प्राप्त होता है।

सरस्वती नदी के तट पर ऋषियों ने मनुष्यो का संशय मिटाने के लिए महर्षि भृगु जी द्वारा त्रिदेवों की परीक्षा कराई थी। पुरुषोत्तम भगवान् के चरण कमलों की सेवा करके उनका उत्कृष्ट स्थान वैकुण्ठ प्राप्त किया जा सकता है। देवताओं जैसा वरदान देने में भी भृगुजी समर्थ थे।

श्रीवत्सचिन्ह से सुशोभित होने वाले भगवान् नारायण भी स्वभावतः ब्राह्मणभक्त होने के कारण भृगुजी के चरणचिन्ह को अपनी छाती पर वैसे धारण किये हैं जैसे चन्द्रमा अपने स्वबिम्ब में मृगलाञ्छन धारण करते हैं-

**धत्ते ब्रह्मण्यशीलत्वात् यत्पादाम्भोजलाञ्छनम् ।**
**श्रीवत्साङ्क इवैणाङ्कं वत्सोऽत्रेरिव वत्सके ॥**

(श्रीभार्गवराघवीयम् जगद्गुरुरामभद्राचार्यः१/१५)

भृगु जी स्वयं तपस्या के कारण परमात्मा के रूप थे। जैसा कि गीता में भगवान् श्रीकृष्ण कहे है।

**महर्षीणां भृगुरहं गिरामस्म्येकमक्षरम् ।**
**यज्ञानां जपयज्ञोऽस्मि स्थावराणां हिमालयः ॥**

**अश्वत्थः सर्ववृक्षाणां देवर्षीणां च नारदः ।**
**गन्धर्वाणां चित्ररथः सिद्धानां कपिलो मुनिः ॥**

(श्रीमद्भगवतगीता १०/२५-२६)

## भृगुवंश के अन्य ऋषि

भृगु च्यवन आप्नवान और्व एवं जमदग्नि ये पाँच गोत्र प्रवर्तक ऋषि हैं। इनका आपस में वैवाहिक सम्बन्ध नहीं होता है।

इस वंश में च्यवन, दधीचि, जमदग्नि आदि ऋषि हुए। जिनका नाम सदा अमर रहेगा। तपस्या, वेदाध्ययन तथा कर्मकाण्ड के ज्ञान के कारण भृगुवंश की बड़ी प्रतिष्ठा थी। देवता-राक्षस दोनो कुलों मे भृगुवंश का आदर था। यह वंश शस्त्र तथा शास्त्र दोनों विद्याओं में निष्णात था। ऋचीक् ऋषि का शस्त्र तथा शास्त्र दोनो विद्या मे समान अधिकार था। महर्षि विश्वामित्र ऋचीक के आश्रम में ही दिव्यास्त्रो की शिक्षा ग्रहण किये थे। वे इस विद्या को बाद में रामलक्ष्मण को दिये थे। जिससे वे दोनो यज्ञ में विघ्न डालने वाली ताड़का का बध किये थे। ऋषि जमदग्नि की पत्नी परशुराम जी की माता रेणुका जी इक्ष्वाकु वंशीय काशीराज प्रसेनजित की पुत्री थी। ऋषि जमदग्नि की माता ऋषि ऋचीक की पत्नी सत्यवती जी कान्यकुब्ज के राजा गाधि की पुत्री थी। ऋषि विश्वामित्र जमदग्नि के मामा थे। अतः भृगुकुल ब्राह्म तथा क्षात्र तेज का मिश्रण था। इसलिए इसकुल के ऋषि शस्त्र विद्या एवं शास्त्रविद्या मे पारङ्गत थे।

## भृगुवंशी ब्राह्मणों का इतिहास

वेदादि शास्त्रों के अनुसार आदित्य तथा अङ्गिरा के साथ प्रजापति के वीर्य से भृगु की उत्पत्ति हुयी। ये वरुण के पुत्र हैं। वरुण रूपी भगवान् शिव ने सबसे पहले सूर्य के समान तेजस्वी भृगु को पुत्र रूप में प्राप्त किया। वरुण की भार्या चर्षणी थी, जिससे भृगु उत्पन्न हुये। महाभारत का कथन है कि ब्रह्मा स्वयम्भू द्वारा वरुण यज्ञ में अग्नि से भृगु उत्पन्न हुये। शिव द्वारा भृगु को अपना पुत्र मानने का भी शास्त्रों में वर्णन प्राप्त होता है। ब्रह्मा द्वारा शुक्र हवन के पश्चात् ज्वाला से उत्पन्न महर्षि को कवि कहा गया । हिरण्यगर्भ ने उन्हें भृगु कहा। महादेव द्वारा यह कहने पर कि यह मेरा पुत्र हो स्वयम्भू द्वारा स्वीकारोक्ति की गयी। इस प्रकार भृगु को महादेव ने पुत्र माना। महाभारत तथा ब्रह्माण्डपुराण के अनुसार ब्रह्मा का हृदय भेदनकर भृगु उत्पन्न हुये। जबकि भागवत महापुराण के अनुसार ब्रह्मा की त्वचा से भृगु उत्पन्न हुये। भागवत तथा शिव पुराण के अनुसार ब्रह्मा के १० पुत्रों में से एक भृगु हैं। भृगु प्रजापतियों में एक हैं।

### महर्षि भृगु की पत्नियाँ –

दिव्या, पौलोमी तथा ख्याति नाम की तीन पत्नियाँ थीं। तीनों की प्रजाओं का विवरण इस प्रकार है– भृगु प्रथम प्रजापति थे। हिरण्य कशिपु की कन्या दिव्या नाम से प्रसिद्ध थी। पुलोमन् की पुत्री पौलोमी थी। भृगु से दिव्या ने ब्रह्मविदों में श्रेष्ठ पुत्र देवासुर के आचार्य कविवर शुक्र ग्रह को उत्पन्न किया। शुक्र ही उशना के रूप में हैं। अतः काव्य नाम से प्रख्यात हुए ।

भृगु से दिव्या ने क्रमशः बारह पुत्र उत्पन्न किये– भुवन, भावन, अन्त्य, आन्त्यायन, क्रतु, शुचि, स्वमूर्द्धा, व्याज, वसुद,

प्रभव, अव्यय तथा अधिपति । भृगु और दिव्या से उत्पन्न ये बारह यज्ञिय देव थे। वरत्री के तीनों पुत्र इन्द्र द्वारा मारे गये जो खर्जूर हुये। शुक्र की जयन्ती ने देवयानी पुत्री उत्पन्न की। विश्वरूप का अनुज विश्वकर्मा वैरोचनी विरोचन पुत्री यशोधरा में उत्पन्न हुआ।

दिव्या का वंश वर्णन- भृगु दिव्या,

शुक्र —— गौः (पितृकन्या)

गौ ने चार पुत्र उत्पन्न किये।

त्वष्टा वरत्री शण्ड मर्क

त्रिशिरा विश्वरूप रजत पृथुरश्मि बृहङ्गिरा

## भृगु-पौलोमी वंश वर्णन

पौलोमी ने च्यवन ऋषि को पुत्र रूप में उत्पन्न किया। आठ मास के गर्भ में ही क्रूर राक्षस द्वारा ग्रहण कर लेने के कारण गर्भ से च्युत होने से इनका च्यवन नाम प्रसिद्ध हुआ और चेतनता रहने के कारण प्रचेतन भी नाम हुआ। उत्पन्न होने के पश्चात् प्रचेता च्यवन ने उस राक्षस को भस्म कर दिया। उस च्यवन भार्गव ने सुकन्या में दो पुत्र आप्नवान और दधीच को उत्पन्न किया। दधीच ने सरस्वती स्त्री में पुत्र सारस्वत उत्पन्न किया। नहुष पुत्री नाहुषी ऋची नाम की पत्नी ने और्व को उत्पन्न किया। जो ऊरुका भेदन कर उत्पन्न हुये। और्व के पुत्र ऋचीक अग्नि के समान तेजस्वी पुत्र उत्पन्न हुये। ऋचीक से सत्यवती में जमदग्नि उत्पन हुये जो भृगु द्वारा बनाये गये चरु के परिवर्तन हो जाने से उस वैष्णव चरु से जमदग्नि हुये। जमदग्नि की भार्या रेणुका ने इन्द्रतुल्य पराक्रमी ब्रह्मक्षत्र मय अमित तेजस्वी परशुराम को उत्पन्न किया। और्व के

जमदग्नि पुरस्सर सौ पुत्र थे। उनके पुत्र सहस्त्र भार्गव दूसरे ऋषियों के गोत्र में विवाह सम्बन्ध करने वाले हुये। जिनमें वत्स, विद, आर्ष्टिषेण, यास्क, वैन्य, शौनक तथा मित्रेयु आदि हैं। ये सातों ऋषि भार्गव के अन्तर्गत हैं।

महर्षि भृगु–पौलोमी वंश वृक्ष

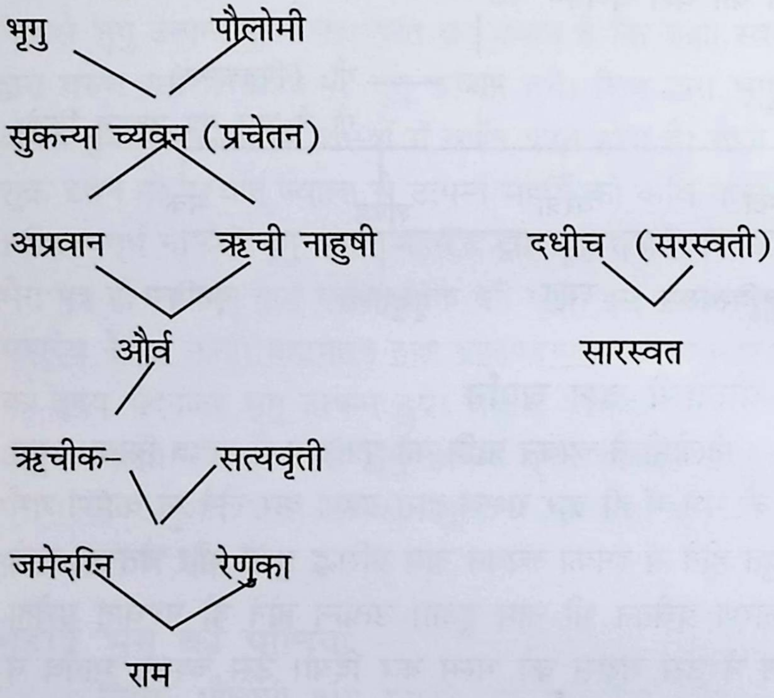


## भुगु ख्याति वंश वर्णन –

महर्षि भृगु से ख्याति ने शुभाशुभ फल दाता समस्त प्राणियों के धारक देवरूप मन्वन्तर में विचरण करने वाले धाता तथा विधाता नाम वाले दो पुत्रों को उत्पन्न किया। वायुमहापुराण ख्याति को दक्ष कन्या मानता है जबकि श्रीमद्भागवत में ख्याति को कर्दम मुनि की कन्या बताया गया है। धाता और विधाता की ज्येष्ठ भगिनी श्री नाम वाली थी, जिसने नारायण को पति रूप में प्राप्त की। प्रति अवतार में वह विष्णु की सहायिनी है। मेरुकल्प में मेरु

ऋषि ने अपनी दो कन्याओं आयति और नियति को क्रमशः धाता और विधाता को प्रदान की।

भृगु ख्याति वंश वृक्ष ।

धाता आयति विधाता नियति लक्ष्मी (श्री) विष्णु

मृकण्ड मनस्विनी प्राण पुण्डरीका बल उत्साह

मार्कण्डेय वेदशिरा

भृगु के बारह यज्ञिय पुत्र के अतिरिक्त अन्य सात पुत्र सभी भृगु के गुणों के समान थे- च्यवन, वज्रशीर्ष, शुचि, और्व, शुक्र, वरेण्य तथा सेवन। भृगु के उन्नीस पुत्रों के अतिरिक्त धाता विधाता अधिक पराक्रमी हुये जिसमें धाता द्वादश आदित्यों में एक हैं।

## ऋचीक का जीवन चरित्र

महर्षि ऋचीक का शस्त्र एवं शास्त्र दोनो विद्याओं पर समान अधिकार था। वे इन दोनों के प्रकाण्ड पण्डित थे। वे विश्वामित्रजी को दीव्यास्त्रो की शिक्षा ग्रहण कराये थे। ऋचीक प्रदत्त शस्त्र विद्या तथा दिव्यास्त्र का ज्ञान बाद मे विश्वामित्र जी ने राम तथा लक्ष्मण को दिया और श्रीराम तथा लक्ष्मण जी से यज्ञ में विघ्नकरने वाली राक्षसी ताड़का का वध कराये। जमदग्नि की माता महर्षि ऋचीक की पत्नी सत्यवती कान्यकुब्ज के राजा गाधि की पुत्री थी। विश्वामित्र जी गाधि के पुत्र तथा जमदग्नि के मामा थे। महर्षि ऋचीक भृगुकुल के महान् विद्वान् एवं अग्निपूजक थे। वे तीनो अग्नियों के आविष्कारक ऋषि थे। वाडवाग्नि विद्युताग्नि तथा भूतल पर विद्यमान अग्नि के आविष्कारक ऋषि थे। यथा-

**ॐ अयमिह प्रशमो धायी धातृभिर्होता यजिष्ठो अध्वरेष्वीद्यः ।
यम्पवानो भृगवो विरूरूचुर्वणेषु चित्रं विभ्वं विशेविशे ॥**

(ऋग्वेद ४.७.१)

मन्त्र तथा यन्त्र विद्या में कुशल माने जाते थे। उनका अथर्व वेद पर पूरा अधिकार था ऋचीक का धार्मिक बल अत्यन्त शक्तिशाली था। वे गुरुपद को अलंकृत करते हुए महान योद्धा भी थे। ऋचीक की महानता का प्रभाव आर्यावर्त के बाहर भी था।

महर्षि ऋचीक के तेज से सभी समृद्धियाँ वैसी ही बढ़ती थीं। जैसे- सूर्य के तेज से अन्न बढ़ते हैं। उनका आश्रम सर्वसाधन सम्पन्न था।

उस आश्रम मे मनस्वी विद्वान् इतिहास पुराण स्मृति एवं बहुत से अन्यशास्त्रों के विषयो का व्याख्यान करते रहते थे। आश्रम की गोशाला अधिक मात्रा में दूध देने वाली गायो से भरपूर थी। आश्रम के सुख सुविधा को देखकर स्वर्ग के देवता भी तरसते थे।

दीर्घकालीन यज्ञों में निरन्तर बुलाये गये देवताओं ने इस आश्रम को सुखदायक मानकर स्वर्ग को भी स्मरण नहीं करते थे। सभी वर्णो के बालक अपनी-अपनी रुचि के अनुसार विद्याप्राप्त करते थे। आश्रम से निकलकर ऐसे सुशोभित होते थे, जैसे समुद्र से निकले हुए रत्न सुशोभित होते हैं। राजा लोग अपने-अपने पुत्रों को प्रवेश कराने हेतु इतना व्याकुल होते थे जैसे सिद्ध तीर्थो मे प्रवेश हेतु साधु आतुर होते हैं। अपने द्वारा की गई आश्रम व्यवस्था को देखकर ऋचीक अत्यन्त आश्वस्त होकर प्रसन्न होते थे। जैसे कोई कवि अपनी कविता को बार-बार पढ़ता है।

## महर्षि ऋचीक का विवाह

महर्षि ऋचीक ऋषि जमदग्नि के पिता थे। कन्नौज के राजा गाधि की कन्या सत्यवती से विवाह करना चाहते थे। इसके लिए राजा गाधि से प्रस्ताव किये। इसपर राजा गाधि एक हजार श्यामकर्ण घोड़ा मागे। विवाह के अनुबन्ध के अनुसार ऋचीक वरुण से लेकर एक हजार घोड़ा राजा को दे दिये और विवाह हुआ।

ऋचीक तथा कुलवधू को देखने के लिए महर्षि भृगु जी ऋचीक के आश्रम में पधारे। उन्हे देखकर अत्यन्त प्रसन्न हुए। कुलवधू सत्यवती की सेवा तथा स्वभाव को देख कर वरदान मागने हेतु कहे।

सत्यवती ने अपने लिए तथा माता के लिए महर्षि भृगु से सन्तान हेतु दो वरदान माँगा।

## भृगु जी का वरदान देना

तुम दोनो ऋतुकाल के बाद दो-दो वृक्षों का आलिंगन करना। तुम्हारी माता पीपल का तथा तुम गूलर का आलिंगन करना। तुम्हारे लिए तथा तुम्हारी माता के लिए मैं दो पृथक्-पृथक् चरु तैयार किया हूँ। इसे पृथक्-पृथक् भक्षण करना। वरदान देकर अपने आश्रम को चले गए। कुछ दिनो के बाद भृगु जी लौटकर आये तथा सत्यवती से चरु भक्षण के विषय में पूछे।

भद्रे ! तुम मेरे कथनानुसार चरु भक्षण और वृक्ष का अलिंगन नहीं की हो। तुम्हारी माता ने वञ्चनाकर परिवर्तन कर दिया है। तुम्हारी माता को ब्राह्मण धर्मा क्षत्रियपुत्र होगा तुम्हे क्षत्रिय धर्मा ब्राह्मण पुत्र होगा-

**अथोवाच महातेजा भृगुः सत्यवतीं स्नुषाम् ।**
**ब्राह्मणः क्षत्रवृत्तिर्वै तव पुत्रो भविष्यति ॥**
**क्षत्रियो ब्राह्मणाचारो मातुस्तव सुतोमहान् ।**
**भविष्यति महावीर्यः साधूनां मार्गमास्थितः ॥**

(महाभारत ३/११५/२५-२६)

सत्यवती ने श्वसुर भृगुजी की प्रार्थना की पुत्र मुझे ऐसा न हो प्रपौत्र भले हो जाय। भृगु जी एवमस्तु कहकर अपने आश्रम चले गये।

ऋचीक जी भारत के महान् ऋषियों मे थे। वे वेदों के पुनरुद्धार एवं प्रचार-प्रसार में अधिक से अधिक कार्य किये हैं। इनके पाण्डित्य तथा प्रतिभा से प्रभावित होकर राजा द्युतिमान् अपना साम्राज्य इन्हे देकर उत्तमलोक वैकुण्ठ पधार गये। मन्त्रवादी ऋषियो के मध्य मे ऋचीक का नाम बड़े आदर के साथ लिया जाता है। भगवान् परशुराम अपने पूर्वज दर्शन हेतु सर्वप्रथम इनके आश्रम मे ही गये थे।

## महर्षि जमदग्नि

जिनके अपने यज्ञ की अग्नि निरन्तर जलती रहती हो वह जमदग्नि हैं। अर्थात् महर्षि जमदग्नि के आश्रम में होने वाले यज्ञकुण्ड की अग्नियाँ अहर्निश प्रज्ज्वलित रहती थी।

## जमदग्नि की महिमा

यज्ञ या हवन के अन्त में पूर्णाहुति होने के बाद यजमान को जब भस्म लगाया जाता है, मंत्र पढ़ा जाता है-

**ॐ त्र्यायुषञ्जमदग्नेः कश्यपस्य त्र्यायुषम् ।**
**यद्देवेषु त्र्यायुषन्तन्नोऽस्तु त्र्यायुषम् ॥**

(शुक्लयजुर्वेद ३/६२)

जमदग्नि ऋषि की तीन आयु है। बाल्य यौवन तथा स्थवीर इस समाहार को त्र्यायुष कहते हैं। यह त्र्यायुष हम सभी को प्राप्त हो। जमदग्नि आयु को बढ़ाने वाले ऋषि हैं।

जमदग्नि चतुरात्र यज्ञ के प्रवर्तक तथा द्रष्टा ऋषि हैं। उन्होंने समस्तलोक प्रसिद्ध प्रजा पशु धन तथा समस्त पुष्टिकारक पदार्थो को प्राप्त किये थे। इसी कारण इस वंश में कोई अल्पायु, दरिद्र तथा दीन-हीन जन्म नहीं लिया। ये अपने शरीर को जीर्ण होने से बचाते भी थे-

**पुष्टिः यागस्य जमदग्निना प्रवर्तितत्वात् तद्वंशे कोऽपि दरिद्रो नास्ति। जमदग्निः सोमस्य भक्षणेन वीर्यवत्ता ब्रह्मणा चतुयत्तरैः छन्दोमिः सदा आप्यायते वृद्धिं प्रयाति। तस्य वर्द्धनात् नः दिशः प्रदिशः कल्याण कारिण्यः स्युः। एतेन जमदग्नेः सततं वृद्धिर्द्योतते।**

आकाशादि रूप से निष्पन्न अक्षरब्रह्म की उपासना सभी देवता करते हैं। इस अक्षरब्रह्म के गोप्ता रक्षक के रूप में देवताओं ने जमदग्नि को बनाया। देवता अपने पुरूषार्थ की सिद्धि के लिए स्वयं उपासना करते हैं। परन्तु मनुष्यों के उपर अनुग्रह करने के लिए देवों ने जमदग्नि को उपदेशक बनाया था। अतः सिद्ध है कि जमदग्नि मनुष्य का सदा हित करते थे।

शास्त्र तथा शस्त्र विद्यामें जमदग्नि का समान अधिकार था। दोनों विद्यायें अपने पिता ऋचीक जी से प्राप्त किये थे। दूर-दूर तक उनकी प्रकाण्ड विद्वता की प्रतिष्ठा जम गई थी। उनके आश्रम में शास्त्रों के साथ-साथ अस्त्रों की शिक्षा भी सिखाई जाती थी। वे बड़े तेजस्वी तथा प्रतापी महर्षि थे।

महर्षि जमदग्नि वेदादि शास्त्र तथा शस्त्र दोनों के ज्ञाता थे। अस्त्र शस्त्र चलाने में महान सेनानी थे। यथा समय वेदारम्भ प्रारम्भ कर नियमानुसार स्वाध्याय भी करते थे।

महर्षि जमदग्नि वेदादि शास्त्र के परम मनिषी थे। अब उन्हें गृहस्थ्य धर्म का पालन करने के लिए यथा शीघ्र लक्ष्मी सदृशा सुन्दरी तथा गुणवती रेणुका से विवाह कर लेना है, यह आदेश ऋषि ऋचीक का है।

जमदग्नि तथा कश्यप आयु को बढ़ाने वाले ऋषि हैं। विभूति धारण करते समय आयु की कामना वाले यजमान जमदग्नि तथा कश्यप का नाम जपते हैं–

**त्र्यायुषं जमदग्नेः कश्यपश्य त्र्यायुषम् ।**
**यद् देवेषु त्र्यायुषं तन्नोअस्तु त्र्यायुषम् ॥**

(यजुर्वेद ३.६२)

जमदग्नि ने संसार के कल्याण के लिए पशु धन–धान्य तथा समस्त पुष्टिकारक पदार्थों की प्राप्ति हेतु चतुरात्र यज्ञ का आविष्कार किये थे। हर दृष्टि से सम्पन्न ऋषि थे। प्रजा भी सम्पन्न रहे इसके लिए यागादि करते थे–

**जमदग्निरेताल्लोक प्रसिद्धान् प्रजा पशु धन पोषान् पुष्यत् सम्पादितवान्। यस्मादेव जमदग्निः पुष्टिहेतु- योगप्रवर्तकः तस्याज्जमदग्नि यौ तद् वंशोत्पन्नौ पितृपुत्रौ पुष्टिमन्तरेण वृथैव पलितौ दरिद्रौ न जाना तेनोत्पद्येते।**

जमदग्नि प्राणियों के कल्याण की बराबर कामना करते रहते थे। इसलिए देवताओं ने इन्हें उपदेशक नियुक्त किया।

**अस्याक्षरस्य गोप्तारं जमदग्निमकुर्वत। देवास्स्वपुरुषार्थ सिद्ध्यर्थं स्वयमुपासते। मनुष्याणामनुग्रहार्थं जमदग्निमुपदेष्टारमकुर्वत। यथा–**

**यदक्षरं भूतकृतं, विश्वेदैवा उपासते ।**
**महर्षिमस्य गोप्तारं जमदग्निमकुर्वत ॥**

(तैत्तिरीयारण्यकम प्रपाठक १)

## महर्षि जमदग्नि का विवाह

सभी वेदों को कण्ठस्त करने के वाद युवा होने पर काशी के राजा प्रसेनजीत के पास आकर उनकी कन्या रेणुका के लिए याचना किये। राजा सहर्ष अपनी पुत्री का विवाह महर्षि जमदग्नि के साथ कर दिया। राजकुमारी रेणुका के साथ रहते हुए कठोर तपस्या किये। क्रमशः उनके पाँच पुत्र पैदा हुए। उनमें सबसे छोटे परमात्मा के अवतार भगवान् परशुराम थे।

## जमदग्नि की कामधेनु

बड़ी कठिन तपस्या कर जमदग्नि कामधेनु गौ प्राप्त किये थे। कामधेनु से सभी मनोरथों की पूर्ति होती रहती थी। वेदों मे जमदग्नि सदृश सम्पत्ति पाने की कामना की गई है। यथा-

**वयं जमदग्निवत् अर्षियं द्रविणं प्राप्नुयाम् ।**
**क्रीमिनाशनं जमदग्निवत् ॥**

(ऋग्वेद ९/९४/५१)

जमदग्नि उच्चस्तर के वैद्य थे। एतदर्थ इनके समान वैद्य बनने हेतु कामना की गई है। यथा-

**क्रीमिनाशनं जमदग्निवत्।**

(शौनकसंहिता ३/३२/३, तैत्तिरीय आरण्यक ४/३६/९)

**अमी नो अर्षदिव्या वसुन्यभि विश्वा पार्थिवा पूयमानः।**
**अभि येन द्रविणमनश्वाभाम्यार्षेयम् जमदग्निवन्नः॥**

(शौनकसंहिता ४४८)

औषधियों के आविष्कारक जमदग्नि थे। अपनी पुत्री हेतु केश वर्द्धिनी औषधी का प्रयोग किये थे। अन्य ऋषियों के साथ जमदग्नि हमारे रक्षक थे। ये पापों से भी मुक्त करते थे। यथा–

**यावङ्गिरसोऽवयो यावगस्तिं मित्रावरुणा जमदग्निमित्रम् ।**
**यो कश्यपमवथो यौ वसिष्ठं तौ नो मुञ्चतमंहसः ॥**

(पैप्पलादसंहिता ४/३६/४०)

जमदग्नि का नाम जपकर पाप से मुक्ति मिलती थी।

**कण्वःकक्षीवान्पुरुमीढो अगस्त्यः श्यावास्यः सोभर्चनानाः।**
**विश्वामित्रोऽयं जमदग्निरत्रिरवन्तु नः कश्यपो वामदेवः ॥**

(अथर्ववेद १८/३/१५)

## जमदग्नि का पाण्डित्य

अचेतन कुशिकों को जमदग्नि ने सूर्य से लाकर वाणी दिये थे। जमदग्नि अथर्ववेद में 54 मंत्रो के द्रष्टा तथा भृगु गोत्र में प्रवर ऋषि भी हैं। यथा–

**ॐ या आहरज्जमदग्निः श्रद्धायै मेधायै कामायेन्द्रियाय ।**
**ता अहं प्रतिगृह्णामि यशसा च भगेन च ॥**

(समावर्तनसंस्कार)

प्रजापति के समान स्तुति जमदग्नि की भी की गई है। यथा–

**त्रिर्जमदग्नीनाम्** (कात्यायन श्रौतसूत्र १/९/३)

जमदग्नि गोत्रोत्पन्न यजमानों के याग में हवि का तीन बार अवदान करें, ऐसा विधान किया गया है।

**जमदग्निर्वत्सविदावार्ष्टिषेणास्तथैव च ।**
**पञ्चावर्त्तिन एतेऽन्ये सर्वे चतुरवत्तिनः ॥**

(कर्काचार्य भाष्य टिप्पणी)

## जमदग्नि का वेद की संहिताओं मे योगदान

अथर्ववेद के षष्ठ काण्ड के सूक्त ८ के ऋषि जमदग्नि हैं। इस सूक्त मे तीन मंत्र कहे गये है। सूक्त के देवता कामात्मा है। सूक्त का छन्द पथ्या तथा पंक्ति है।

अथर्व वेद सूक्त ९ के ऋषि जमदग्नि हैं। इस सूक्त मे तीन मन्त्र हैं। सूक्त देवता कामात्मा हैं। छन्द अनुष्टुप है।

सूक्त १०२ के ऋषि जमदग्नि है। इस सूक्त मे ३ मंत्र है।

सूक्त के देवता अश्विनी कुमार हैं। सूक्त मे अनुष्टुप छन्द का प्रयोग किया गया है।

## जमदग्नि का आश्रम

जमदग्नि के आश्रम की शोभा अपूर्व थी। शोभा की खान कामधेनु थी। नगर जैसे शोभायमान आश्रम था। तपस्वियों विद्वानों तथा विद्यार्थियों से परिपूर्ण आश्रम रहता था। उसमें लक्ष्मी जी का स्थायी निवास था। इन्द्रपुरी तथा कुबेर की अलकापुरी की बराबरी करने वाला वह आश्रम था। आश्रम मे कामधेनु को देखकर राजा सहस्रार्जुन तथा उसके सैनिक आश्चर्यचकित हो गये। उनका राजवैभव भी फीका पड़ गया। यथा-

**गृहैकदेशे द्दष्टा सा कपिलैका मनोहरा ।**
**चार्वङ्गी चन्द्रवर्णाभा रक्तपंकजलोचना ॥**
**ज्वलन्तो तेजसा तत्र पूर्णचन्द्रसमप्रभा ।**
**सर्व सम्पद्गुणाधारा साक्षादिव हरिप्रिया ॥**

(ब्रह्मावैवर्तपुराण ३/२४/२८-२९)

आकाशादि रूप से निष्पन्न अक्षर ब्रह्म की उपासना सभी देवता करते हैं। उस अक्षर के गोप्ता रक्षक के रूप में देवताओं ने

जमदग्नि को बनाया। इससे सिद्ध होता है कि जमदग्नि मनुष्यों के अत्यन्त हित चिन्तक थे।

## जमदग्नि का महान पराक्रम

**अमी नो अर्षदिव्या वसून्यभिविश्वा पार्थिवा पूयमानः ।**
**अभि येन द्रविणमश्नवामाभ्यार्षेयं जमदग्निवन्नः ॥**

(कोशिकसूत्रम् २/७७८)

मंत्र का अभिप्राय है कि जमदग्नि के समान हम सब धन प्राप्त कर धनी होवे।

**कण्व कक्षीवानपुरुमीढ़ो अगस्त्यः श्यावाश्वः सोभर्यर्चनानाः।**
**विश्वामित्रोऽयं जमदग्निरत्रिरवन्तु नः कश्यपो वामदेवः ॥**

(शौनकसंहिता १८/३/१५)

**जमदग्नि सहिता अन्ये सप्तऋषयस्तथा पितरोनः सुखं प्रयच्छन्तु॥**

(शौनकसंहिता १८/३/१६)

सामान्यजन भी रोग एवं शत्रु से अपनी सुरक्षा हेतु जमदग्नि का नाम जपते है।

ब्रह्मचारी विद्याव्रतस्नातक के रूप में गृहस्थ धर्मानुकूल विभिन्न अलङ्कार धारण कर महर्षि जमदग्नि का नाम स्मरण पूर्वक पुष्पमाला धारण करते समय मन्त्र पाठ करता है-

**या आहरज्जमदग्निः श्रद्धायै मेधायै कामायेन्द्रियाय ता अहं प्रतिगृह्णामि यशसा च भगेन च।**

जिन पुष्प मालाओं को जमदग्नि ने श्रद्धा, मेधा, कामनाओं तथा इन्द्रियों में बल प्राप्ति हेतु आहरण किया था उस पुष्पमाला को मैं यश तथा ऐश्वर्य के लिए ग्रहण करता हूँ।

जमदग्नि अनेक विद्याओं, कलाओं तथा नीतियों में पारंगत थे। यजमान उन्हें देवता मानते थे तथा उनसे वरदान मागते थे। जमदग्नि सप्तर्षियों की श्रेणी में स्थापित हैं-

**विश्वामित्रो जमदग्निर्भरद्वाजो गौतमोऽत्रिर्वशिष्ठः**
**कश्यपः इत्येते सप्तर्षयः ।**
**अत्र आसनानि कल्पयति विश्वामित्राय जमदग्नये ॥**

(अग्निर्वेश्व गृह्यसूक्त १/२२/१५)

सरस्वती नदी के तट पर ऋषि जमदग्नि का आश्रम था। वह सुन्दर वनस्थली में विराजमान था। नन्दनवन जैसा सुन्दर था। मोक्ष चाहने वाले, वानप्रस्थी लोग एकान्तस्थान में तप में रत रहते थे। जब वे समाधि में ध्यान लगाते थे। तो वे स्थिर नक्षत्र जैसे लगते थे। यज्ञ मे हवि देने से प्रसनन होकर मरुद्गण चारो तरफ सुगन्ध फैला कर मानो आश्रम की कीर्ति को फैला रहे हों। चन्द्रमा की चादनी के समान संसार को शीतल करती हुई ऋषि की कीर्ति परम्परा दिशाओं मे फैल गई है। वेदभ्यास मे रत शिष्यों द्वारा वेदपाठ करने से आश्रम स्थित आकाश गुञ्जायमान होता रहता था। मानो वह आश्रम शब्दब्रह्म का स्वरूप ही धारण कर लिया हो। वह्निकुण्ड, यज्ञकाष्ठ, कुश, पुष्प, फल, कृष्ण मृगचर्म, स्रुव, सुचि, तथा शिष्यो से भरा पड़ा वृक्ष चर्म परिधान सहित ब्रह्मचारी जटाधारी जनों को देखकर लोग चकित हो जाते थे। पुण्य से पूर्ण रूप कर्म होता है। स्वस्थ रहा जाता है। शान्ति रहती है। निरोगता तथा दीर्घायु प्राप्त होती है। जो इन आश्रमों में थी।

## जमदग्नि की पत्नी माता रेणुका

रेणुका विदर्भ नरेश महाराज प्रसेनजित की कन्या थी। शास्त्रों मे ऐसा उल्लेख मिलता है कि वह कमल से उत्पन्न

अयोनिज थी। ब्रह्माण्ड पुराण के अनुसार इक्ष्वाकु वंश में उत्पन्न रेणुक नामक राजा की पुत्री थी। इनका नाम कमली रेणुका था। इनसे ही जमदग्नि ऋषि का विवाह हुआ। इनके गर्भ से पाँच पुत्र उत्पन्न हुए। रुमण्वान, सुषेण, वसु, विश्वावासु तथा परशुराम इनके नाम थे। रेणुका महासती, साध्वी एवं पतिभक्ति परायणा नारी थी। माता रेणुका का अपने पुत्र परशुराम पर अगाध प्रेम था। वे इन्हें विश्व की महान विभूतियों से मण्डित देखने की महत्वाकाक्षां रखती थी। माता से प्रेरणा लेकर गन्धमादन पर्वत पर भगवान् शंकर की तपस्या हेतु चले गये। वहाँ घोर तपस्या कर उनसे वरदान प्राप्त कर धनुर्विद्या की शिक्षा के साथ-साथ दिव्यास्त्र भी प्राप्त किए।

रेणुका महासती तथा पतिव्रता नारी थी वे पातिव्रत्य एवं सतीत्व की प्रतीक थी। इसी कारण दक्षिण भारत में सीता तथा सावित्री से भी अधिक सम्मान उनका है। दक्षिण भारत के प्रत्येक गाँव की अधिष्ठात्री शक्ति हैं। प्रत्येक पर्व पर सर्व प्रथम रेणुका जी को पूजा जाता है।

इस प्रकार महामहोपाध्याय **श्रीकेदारनाथ द्विवेदी** 'वेदाचार्य' प्रणीत एवं विद्यावाचस्पति प्रो. देवेन्द्र प्रसाद मिश्र द्वारा सम्पादित **भगवान् श्रीपरशुराम एवं सोहनाग धाम** ग्रन्थ का 'भृगुवंश तथा भृगुवंशियों के वैभवादि का वर्णन' नामक चतुर्थाध्याय समाप्त।।४।।

**प्रीणातु भगवान् वेदः प्रीणन्तु सर्वदेवताः ।**
**प्रीणन्तु पितरः सर्वे प्रीणन्तु च महर्षयः ॥**
**॥ बलं विष्णोः प्रवर्धताम् ॥**

## पञ्चम-अध्याय

## श्रीपरशुराम-चरित की व्यापकता

भारत वसुन्धरा आदि काल से ही वन्दनीय पूजनीय तथा प्रशंसनीय है। भारतीय संस्कृति-सभ्यता, आचार-विचार, ज्ञान-विज्ञान तथा महापुरुषों की निर्मल गाथा सदा से ही विश्व का मार्गदर्शन करती रही है। यह भूमि अपनी पवित्रता, उदारता तथा आदर्शशीलता के कारण स्वर्ग से भी बढ़ कर मानी गई है। इसी भूमि मे योगी, ऋषिमुनि, धर्म प्रवर्तक, त्यागी, दानी, शूरवीर, देशभक्त, प्रजाहित चिन्तक सम्राट, देश भक्त जन नेता तथा महामानव युग-युग में जन्म लेकर विश्व का मार्ग प्रशस्त किये हैं।

**गायन्ति देवाः किल गीतकानि**
**धन्यास्तु ते भारतभूमिभागे ।**
**स्वर्गापवर्गास्पदहेतुभूत**
**भवन्ति भूयः पुरुषाः सुरत्वात् ॥**

(विष्णुपुराण २.३.२४)

भारतभूमि मे जन्म लेकर इसकी पावन धूलि मे खेलकर बड़े होने वाले पवित्र चरित से भरपूर महामानव समय-समय पर जन्म लेकर जन्मभूमि की मान-मर्यादा के लिए अनेक कष्ट उठाये हैं। धर्म, देश तथा संस्कृति की रक्षा हेतु प्राण तक गवाये हैं। महामानवों के आदर्श जीवन को नई पीढ़ी के सम्मुख प्रस्तुत कर महापुरूषों के चारित्रिक विशेषताओं को बताकर जनजीवन को

आदर्शमय बनाने हेतु लेख प्रस्तुत किये। इस भूमि पर **परित्राणाय साधूनाम् विनाशाय च दुष्कृताम्** की भावना का मान करने वाले अनेक महापुरुषों का प्राकट्य समय-समय पर होता रहा है। ऐसे युगपुरुषो का जीवन चरित समाज के लिए आदर्श था, है और सर्वदा होता रहेगा। जब-जब मानव मूल्यों का ह्रास, दानवता का राज, आसुरी प्रवृत्तियों का विकास हुआ तब-तब परमात्मा धर्म की प्रतिष्ठा एवं आसुरी प्रवृति के विनाश के लिए किसी न किसी रूप में अवतार ग्रहण करते हैं।

त्रेता के प्रारंभ काल में अधिकांश राजा बल, ऐश्वर्य, प्रभुता से मदान्ध होकर प्रजाजन का शोषण अत्याचार, अनाचार, दुराचार से पीड़ित करने में आनन्द का अनुभव कर रहे थे। सर्वत्र हाहाकार मचा हुआ था। उस समय का शासक कार्तवीर्य सहस्रार्जनु था। स्वभाव से क्रूर कठोर हृदय वाला स्वच्छन्दचारी सहस्रार्जुन सभी कृत्य अपनी इच्छा से करता था। अपने बलदर्प से युक्त सफलआशा वाला भला कौन सा पाप नहीं कर सकता? अधर्म के मार्ग पर चलने वाला प्रचण्डनीच दुरात्मा मदान्धदृष्टि वाला पापी सहस्रार्जुन ऋषि-मुनि तथा धर्मस्थलो की निन्दा करने लगा था। वह अभिमानी गौ, ब्राह्मण, स्त्री, शिशु, बालक, वृद्ध, ऋषि-मुनियों, शीलवती कन्याओं, तपस्वी तथा त्यागीजनों को बल पूर्वक सताने में आनन्द का अनुभव करता था। सामान्यजन आसुरी प्रवृत्तियों से पीडित होकर त्राहि-त्राहि करने लगे थे।

उसी समय भगवान् परशुराम अपने तपोबल से प्राप्त परशु तथा धनुष से ही सामान्यजनों को निरर्थक कष्ट देने वाले तथा आसुरी प्रवृति वाले राजा रूप में विद्यमान हैहयवंशी क्षत्रियों का नाश किये। लोकतंत्र के प्रणेता, सतत् संघर्षशील, पराक्रमी, त्याग

की मूर्ति, धर्मरक्षक, शोषित, पीडित, दीन-हीन जनो को जनजीवन प्रदान करने वाले, युगातीत विभूति, तपस्या की मूर्ति, भगवान परशुराम थे।

आशुतोष भगवान् शंकर के अत्यन्त प्रिय शिष्य, परमात्मा के अवतार, अपूर्व त्याग के आदर्शपुंज, शरणागतों की सदैव रक्षा करने वाले, भगवान् परशुराम जिनकी प्रासंगिकता प्रत्येक युग में सदैव विद्यमान रहती है, वे उच्चसंस्कृति के प्रतिनिधि महर्षि भी थे। वे बली, प्रतापी तथा दृढ़ विजेता थे। भगवान् परशुराम तथा भृगुवंशी ब्राह्मणों का एकमात्र लक्ष्य था आर्य संस्कृति का प्रचार-प्रसार तथा आसुरी प्रवृत्तियों का दमन।

उनसे सम्बन्धित आख्यान जहाँ कहीं भी शास्त्र में है, उसमे कहीं भी ऐसा नही लिखा है कि वे निर्दोष, सत्यपथारूढ़ राजा को सताये हों या पदच्युत किये हो। वे दुराचारी, कामी, लोलुप, कुमार्गगामी, निरंकुश, स्वेच्छाचारी, जन शोषक राजाओं को मारे थे। जो बार-बार सचेत करने पर भी अपने दुष्कर्म नहीं त्याग सके। ऐसे राजाओं से उन्होंने इक्कीस बार युद्ध करके पृथ्वी को पापियों से रहित किया।

वर्तमान समय में भगवान् परशुराम का निर्मल चरित्र आज के मानव समाज को मातृ-पितृ-गुरु भक्ति की निर्मल शिक्षा प्रदान करता है। मानव मूल्यों के प्रति प्रेम, बल पुरुषार्थ तथा धन का समाजहित में प्रयोग करना, समाजगत बुराईयों को समूलोच्छेदन, शक्ति का सदुपयोग करना, त्याग तथा तपस्या का जीवन बिताना, राष्ट्रोत्थान के लिए सतत जागृत रहना आदि सिद्धान्तो की शिक्षा देता रहता है। जैसे गंगा जी व्यक्ति के शरीर के मल को धोकर साफ-सुथरा कर देवलोक में निवास के योग्य निर्मल बना देती है,

वैसे भगवान् परशुराम अनाचारी, दुराचारी, उच्छृङ्खल एवं स्वेच्छाचारी राजाओं के पाप को अपने शस्त्रों से धोकर उन्हें देवलोक में निवास के योग्य बना देते हैं। पृथिवी पर महर्षि कश्यप का राज्य स्थापित कर स्वयं महेन्द्राचल पर्वत पर तपस्या हेतु चले गए। वहाँ उन्होंने समुद्र से उस भूभाग को वापस लिए जिसमें इस समय कच्छ, कोंकंण, केरल तथा कन्याकुमारी अवस्थित है। सह्यादि पर्वत पर राष्ट्र के नव निर्माण में वे अपनी सारी शक्ति लगा दिये। उन क्षेत्रों में अनेक शिवलिंग स्थापित कर सांस्कृतिक उन्नति में अथक परिश्रम किए। वे सह्यादि क्षेत्र में रहे जो आज शूर्पारक क्षेत्र कहा जाता है। वहाँ वे भीष्म, द्रोण, कर्ण प्रभृति अनेक वीरो को धनुर्वेद एवं अस्त्रशास्त्र बनाने की शिक्षा दिए। वह स्थान उस समय भृगुतीर्थ के नाम से प्रसिद्ध था। वही बाद मे भृगुकच्छ बना, वही आज अपभ्रंश होकर भणौच नाम से जाना जाता है।

जरासंध जब मथुरा को घेर लिया था उस समय परशुराम जी गोमान्तकश्रृंगो मे रहकर बलराम और श्रीकृष्ण को युद्ध की कला सिखा कर जरासंध को छकाने हेतु परामर्श दिये। बलराम जी दुर्ग युद्ध की कला यहीं पर परशुराम जी से सीखे थे। बाद मे यह युद्धकला शिवाजी अपने गुरु समर्थ रामदास जी से सीखे थे। समर्थ रामदास जी परशुराम जी के अनन्य भक्त थे। महाराष्ट्र की राष्ट्रीय संस्कृति मे आज भी परशुराम बड़े पूज्य हैं, आज भी परशुराम जी की आरती मराठी भाषाओं मे गाई जाती है।

## भगवान् के अवतार के समय ग्रहों की स्थिति

वैसाख मास शुक्लपक्ष तृतीया तिथि पुनर्वसु नक्षत्र में रात्रि के प्रथम प्रहर सन्ध्या समय में छः ग्रह उच्च स्थान में तथा मिथुन राशि में राहु के होने पर माता रेणुका के गर्भ से स्वयं परमात्मा परशुराम के रूप मे अवतार धारण किये।

## परशुराम जी का जन्मांक

स्कन्दपुराण भविष्यपुराण भार्गवार्चन दीपिका के अनुसार परशुराम जी की जन्म कुण्डली

**वैसाखस्य सिते पक्षे तृतीयायां पुनर्वसौ ।**
**निशायाः प्रथमे यामे रामाख्यः समये हरिः ॥**
**स्वोच्चगैः खड्ग्रहैर्युक्ते मिथुने राहुसंस्थिते ।**
**रेणुकायास्तु यो गर्भादवतीर्णो विभुः स्वयम् ॥**

(स्कन्द एवं भविष्यपुराण)

पुराणों के अनुसार उपर्युक्त कुण्डली बन रही है। इसमें भगवान् परशुराम की कुण्डली में आठ ग्रह उच्च के होते है। नौवा ग्रह चन्द्रमा स्वराशि का होता है। ऐसा योग जब कभी आयेगा भगवान् का अवतार हो जाया करेगा।

लग्नेश शुक्र है जो शत्रु स्थान में स्थित है। इसका फल ऊँचे स्तर के शत्रुओं से जन्म प्रभावित हो। शुक्र उच्च के है अतः शत्रु भी उच्च स्तर के होगें।

शत्रुस्थान के स्वामी गुरु जो उच्च राशि के होकर कर्म स्थान मे विद्यमान हैं, इस योग का फल-

शत्रु को पराजित करना विशेष कार्य होगा क्योंकि गुरू कर्म स्थान में वर्तमान रहकर शत्रु स्थान को अपनी नवम पूर्ण दृष्टि से देखते हैं। गुरु का बल बढ़ाने वाला चन्द्रमा अपनी राशि का होकर कर्म स्थान में वर्तमान है- शत्रुओं का समूलोच्छेदन करना इसका फल है।

लग्न में तुलाराशि का शनि वर्तमान है- इस योग का फल शश नामक महापुरूष लक्षण योग बना रहा है।

कर्मस्थान में गुरु वर्तमान रहकर अपनी उच्चराशि कर्क में होने के कारण हंस नामक महापुरुष योग बना रहा है।

सुख स्थान में अपनी उच्चराशि मकर मे रहकर भौम रूचक नामक महापुरुष योग बना रहा है।

ऐसे तीन महापुरुष लक्षण- शश, हंस तथा रूचक नाम के महापुरुष लक्षण है।

ये तीनो अति मानव योग हैं। इन योगों के कारण भगवान सारी पृथिवी दुष्ट राजाओं से जीत लिए एकमात्र अखण्ड महाराजाधि राज द्विजराज होकर भी अश्वमेघ यज्ञ कर सारी पृथिवी का सम्राट बनकर भी शासन नही किए तत्काल कश्यप ऋषि को सारी पृथिवी दान कर महेन्द्र पर्वत पर तपस्या हेतु चले गए।

जायेश तथा धनेश अपनी उच्चराशि मकर का होकर सुखस्थान मे बैठ कर कुण्डली को मंगली बनाया। पत्नी स्थान पर मंगल की पूर्ण चतुर्थ दृष्टि पड़ी- इसका फल विवाह नही हुआ।

पत्नी स्थान मे सूर्य अपनी उच्चराशि मेष के बनकर विवाह अवरोधक योग उपस्थित किए।

लग्न में अपनी उच्चराशि तुला का होकर शनि भी विवाह स्थान पर पूर्ण सप्तम दृष्टि डाला- इस योग का फल विवाह नही हुआ। उच्च के तीन ग्रह भौम, सूर्य तथा शनि विवाह अवरोधक बने सुख स्थान मे भौम अपनी उच्च राशि मकर में विद्यमान है- इस योग का फल- आजीवन सुख नही पाये शत्रुओं से लड़ते रहे।

रोग स्थान का स्वामी शुभ उच्च के शुक्र विद्यमान है- इस योग का फल आजीवन स्वस्थ रहे, किसी प्रकार की अधिव्याधि नहीं हुई।

पराक्रम स्थान पर उच्च शनि की पूर्ण दृष्टि है भाग्य स्थान में उच्चराशि मिथुन का होकर राहु भी पराक्रम को देख रहा है, तीसरा लक्षण अपनी उच्च राशि धनु का होकर केतु वर्तमान है इन तीनों योगों के कारण पराक्रम मे कोई बराबरी नही किया न शत्रु सामने टिक पाये। यह महाशत्रु हन्ता योग है जो भी शत्रु की बुद्धि लेकर सामने आया पराजित हुआ तथा नष्ट हुआ।

## असीमित आयु लक्षण

मारक ग्रह शुक्र के रोग स्थान में उच्चराशि पर होकर रहने से गुरु की पूर्ण नवम दृष्टि डालने से तथा सभी ग्रहों के उच्च स्थान मे होने से असीमित आयु हुई। अन्यत्-

**सर्वविद्यान्तगं श्रेष्ठं धनुर्वेदस्य पारगम् ।**
**रामं क्षत्रियहन्तारं प्रदीप्तमिव पावकम् ॥**

(महाभारत, शान्तिपर्व १२/४८/३२)

व्यय स्थान मे उच्चराशि मे बुध वर्तमान है- इसका फल सम्पूर्ण पृथिवी का अधिपति हो कर भी उसे दान दे दिये। स्वयं तपस्वी रहकर तपस्या करते रहे।

कर्मभाव मे स्वराशिस्थचन्द्र है इस योग का फल- इस भाव मे उच्चराशि के गुरु भी विद्यमान है- आजीवन तपस्या दान यज्ञ वेदाध्ययन अध्यापन मे लगे रहे। यह राज्य भाव भी है- समस्त पृथिवी का अधिपति होकर भी अश्वमेघ यज्ञ किये सारा वैभव राज्य दान कर दिये। आय भाव का स्वामी सूर्य अपनी उच्च राशि मेष मे रहकर पत्नी स्थान मे विद्यमान है- इसका फल आजीवन ब्रह्मचारी रहे। अपने विचार पर अडिग रहे। भाग्य भाव में राहु अपनी उच्चराशि मिथुन पर है- लग्न तथा पराक्रम स्थान को देख रहा है इसका फल अपरिमित असीमित पराक्रमी थे-

## भारत की सीमा का विस्तार किए

पश्चिमी तथा दक्षिणी सागर से हजारो किलोमीटर भूमि समुद्र से खाली कर तपस्वियों को आश्रम बनाने हेतु समर्पित कर दिये। जिसकी आज भी वहाँ के लोगों मे चर्चा है। पितृस्थान मे उच्चस्थ गुरु हैं इसका फल पिता का अनन्य भक्त रहे। माता-पिता दोनो की आज्ञा मानने मे कुशल रहे।

## भगवान् परशुराम के भ्राता

इनके जेष्ठ भ्राता संख्या मे चार थे- ये सबसे छोटे पाँचवे थे। १. रूमण्वान् २. सुषेण ३. वसु ४. विश्वावसु ।

**जमदग्नेस्तुचत्वार आसन् पुत्रा महात्मनः ।**
**रामस्तेषां जघन्योऽभूदजघन्यैर्गुणैर्युतः ॥**

(महाभारत आदिपर्व ६६/४८)

**तस्याः कुमाराश्चत्वारो यज्ञिरे रामपञ्चमाः ।**
**सर्वेषामजघन्यस्तु राम आसीज्जघन्यजः ॥**

(महाभारत वनपर्व ११६/४)

## परशुरामजीका विद्याध्ययन

**रामोऽपिनृपशार्दूल सर्वधर्मभृतां वरः ।**
**वेदवेदाङ्गतत्वज्ञः सर्वशास्त्रविशारदः ॥**

(ब्रह्माण्डपुराण ३/२९/२)

श्रीपरशुराम जी पिता जी के आश्रम में प्रारंभिक शिक्षा प्राप्तकर पितामह महर्षि ऋचीक जी के आश्रम मे गये। उन्हे देखकर महर्षि ऋचीक बोले–

**कोऽयमेव तपोराशिः सर्वलक्षण पूजितः ।**
**बालोऽयं बलवान्भातिम्भीभीर्यात्प्रश्रयेण च ॥**

(ब्रह्माण्डपुराण २/२१/२४)

परशुराम जी अपना परिचय देकर पितामह ऋचीक तथा पितामही माता सत्यवती का चरणवन्दन किए तथा उनके आशीर्वचनों से अभिनन्दित हुए। तत्पश्चात् वे महर्षि च्यवन तथा महर्षि भृगु जी के आश्रम मे गये थे।

## तपस्या तथा विद्या प्राप्ति हेतु भृगु जी का आदेश

महागिरि हिमालय पर जाकर तपस्या करो तथा शंकर जी की भक्ति प्राप्त करो। इससे जगत् का कल्याण होना है–

**हितार्थं सर्वलोकानां तव चास्माकमेव च ।**
**गच्छ पुत्र ममादेशाद्धिमवन्तं महागिरिम् ॥**
**श्रेयो महदेवाप्नोषि नात्र कार्या विचारणा ।**
**तरसा तव शक्या च प्रीतो भवति शङ्करः॥**

(ब्रह्माण्डपुराण २/२१/७४ एवं ७६)

तुम्हारी भक्ति से आशुतोष भगवान् शंकर जी प्रसन्न होंगे। तुम्हें उनसे अस्त्रशस्त्र, धर्मशास्त्र तथा अनेक लोकहितकारिणी

विद्यायें प्राप्त करनी हैं। देवताओं तथा समस्तलोक के हित के लिए कठिन से कठिन कार्य करना है।

**तरसा तव भक्त्या प्रीतोभवति शङ्करः ।**
**अस्त्र ग्राममशेषं त्वं वृणु पुत्र यथेप्सितम् ॥**
**विद्यतेऽभ्यधिकं कर्मशस्त्रसाध्यमनेकशः समाराधयशंकरम्॥**

(ब्रह्माण्डपुराण ३/२१/७७)

भृगुजी की आज्ञा से हिमाद्रि के दक्षिण भाग में तपस्या हेतु श्री परशुराम जी चले गये।

**हिमाद्रे दक्षिणे भागे रामो नाम महातपा।**
**मुनिपुत्रोऽति तेजस्वी मामुद्दिश्य तपस्यति॥**

(ब्रह्माण्डपुराण ३/२४/५१)

## इनका नामकरण

इनका वैदिक एवं पौराणिक नाम **जामदग्न्यराम** है। अशुतोष भगवान शंकर अजेय होने का वरदान तथा अमोघ शक्ति सम्पन्न अपना फरसा देकर **परशुराम** नामकरण कर दिये तभी से परशुराम कहे जाने लगे।

## भगवान परशुराम का अगाध ज्ञान का प्रमाण

ऋग्वेद एवं कृष्ण यजुर्वेद के कुछ मंत्रों के द्रष्टा ऋषि भी है- ऋग्वेद के दशम मण्डल मे ११०वें सूक्त के द्रष्टा ऋषि है।

## मन्त्रो के देवता

अग्नि, वनस्पति, बर्हि, उषासानक्ता, प्रचेता, सरस्वती, इडा, भारती, त्वष्टा है। छन्द-त्रिष्टुप है- यथा

**समिद्धो अद्य मनुषो दुरोणे देवो देवान्यजसि जातवेदः ।**
**आ च वह मित्रमहश्चिकित्वान्त्वं दूतः कविरसि प्रचेताः॥१॥**

तनूनपात्पथ ऋतस्य यानान् मध्वा समञ्जन्त्स्वदया सुजिह्व ।
मन्मानि धीभिरूत यज्ञमृन्धन् देवत्राच कृणुह्याध्वरं नः ॥२॥

आजुह्वान ईड्यो वन्द्यश्चा याह्यग्ने वसुभिः सयोषाः ।
त्वं देवानामासि यह्व होता स एनान्यक्षीषितो यजीयान् ॥३॥

प्राचीनं बर्हिः प्रदिशा पृथिव्या वस्तोरस्या वृज्यतर अग्रे अह्वाम्।
व्यु प्रथते वितरं वरीयो देवेभ्यो अदितये स्योनम् ॥४॥

व्यचस्वतीरूर्विया वि श्रयन्तां पतिभ्यो न जनयः शुम्भमानाः ।
देवीद्वारो वृहतीर्विश्वमिन्वा देवेभ्यो भवत सुप्रायणाः ॥५॥

आ सुष्वयन्ती यजते उपाके उषासानक्ता सदतां नि योनौ ।
दिव्ये योषणे बृहती सुरुक्मे अधि श्रियं शुक्रपिशं दधाने ॥६॥

दैव्या होतारा प्रथमा सुवाचा मिमाना यज्ञं मनुपो यजध्यै ।
प्रचोदयन्ता विदथेषु कारू प्राचीनं ज्योतिः प्रदिशा दिशन्ता॥७॥

आ नो यज्ञं भारती तुयमेत्विला मनुष्वदिह चेतयन्ती ।
तिस्रो देवीर्बर्हिरेदं स्योनं सरस्वती स्वपसः सदन्तु ॥८॥

य इमे द्यावापृथिवी जनित्री रूपैरपिशद्भुवनानि विश्वा ।
तमद्या होतरिषतो यजीयान्देवं त्वष्टारमिह यक्षि विद्वान् ॥९॥

उपावसृजत्मन्या समञ्जन्देवानां पाथ ऋतुथा हवींषि ।
वनस्पतिः शमिता देवो अग्निः स्वदन्तु हव्यं मधुना धृतेन ॥१०॥

सद्यो जातो व्यमिमीत यज्ञमग्निर्देवानामभवत्पुरोगाः ।
अस्य होतुः प्रदिश्यृतस्य वाचि स्वाहाकृतं हविरदन्तु देवाः॥११॥

(ऋग्वेद १०/११०)

## भगवान् परशुराम की कठिन तपस्या

कैलाशपर्वत के समीप हिमालय पर्वत पर जाकर कठिन तपस्या करने लगे। भृगु जी के आदेश से ही तपस्या कर आशुतोष भगवान् शंकर जी को अत्यन्त प्रसन्न किये ।

इनकी तपस्या की परीक्षा लेने हेतु शंकर जी व्याध के रूप मे परशुराम जी के पास आये तथा अपना परिचय बताते हुए बोले-

मै तोषप्रवर्ष नाम वाला ब्याध हूँ। इस वन में निवास करता हूँ। इस क्षेत्र का स्वामी हूँ। मेरे आदेश के बिना यहाँ कोई प्रवेश नहीं कर सकता। आप कौन हैं? क्यों यहाँ आये हैं। अन्यत्र चले जाइये।

भगवान् परशुराम ने उत्तर दिया -

**जामदग्न्योऽस्मि भद्रं ते रामो नामा तु भार्गवः।**
**तपश्चर्तु मिहायातः सांप्रातं गुरु शासनात् ॥**
**भक्तानुकम्पी भगवान्यावत्प्रत्यक्षतां हरः ।**
**उपैतिताव दत्रैव स्थास्यामीति मतिर्मम ॥**

(ब्रह्माण्डपुराण ३/२३/२९ एवं ३३)

मै जमदग्निपुत्र राम हूँ। भार्गववंश मे मेरा जन्म है। अपने पूर्वज भृगु जी के आदेश से यहाँ तपस्या हेतु आया हूँ। जब तक भक्तों के उपर अनुकम्पा करने वाले भगवान् शंकर प्रकट होकर दर्शन नहीं देंगे तब तक यहीं तपस्या करूँगा यह मेरा निश्चय है।

तोषप्रवर्ष व्याध रूपधारी आशुतोष भगवान् शंकर बोले

**दास्ये चाभि मतं सर्वं भवतेऽहं त्वया वृतम् ।**
**भक्तो हिमे त्वमत्यर्थं नात्र कार्या विचारणा ॥**

(ब्रह्मवैवर्तपुराण २/२४/३४)

मैं तुम्हारी तपस्या से अत्यन्त प्रसन्न हूँ। तुम्हारी भक्ति सराहनीय है। जो इच्छा हो वरदान मांगों। मैं दूँगा इसमे सन्देह नही है। मै शङ्कर हूँ तुम्हारी तपश्चर्या से प्रसन्न होकर तुम्हे वरदान देने आया हूँ। मै वरदान देता हूँ मेरे आदेश से "देवताओं का हित करने के लिए तुम्हें दैत्यों का नाश करना है" तुम इन्हें मारने मे समर्थ रहोगे। तुम्हें यह कार्य करना है। शिवजी का आदेश सुनकर परशुराम जी ने कहा "भगवन् ! जब इन्हें देवता नहीं मार सके, तो मै कैसे मार सकूँगा?"

शंकर जी प्रसन्न होकर परशुराम जी की बात सुनकर अपना परशु देकर "उनका परशुराम नाम करण" कर दिये।

मेरी कृपा से तुम्हे इन्हें मारने की शक्ति स्वतः प्राप्त हो जायेगी।

इस शस्त्र (परशु) से युद्ध करते हुए सभी युद्ध कला को स्वयं समझ जाओगे।

अभी शीघ्र तुम्हें **विष्णु तेज प्राप्त हो जायेगा** तत्काल परशुराम जी विष्णुतेज से सम्पन्न हो गये। परशु प्राप्त कर तथा विष्णु तेज से सम्पन्न होकर चमकने लगे जैसे आकाश मे सूर्य चमकता है।

भगवान् शिव के जितने **पाशुपतादि शस्त्र** थे सभी का ज्ञान परशुराम जी को करा दिये। यथा-

**इत्युक्तस्तेन देवेशः सितं कालाग्निसमप्रभम् ।**
**शैवमस्त्रमयं तेजो ददौतस्मै महात्मने ॥**

(ब्रह्माण्ड महापुराण २/२४/७३)

**तातः स शुशुभे रामो विष्णुर्तेजोंऽशसंभवः ।**
**रूद्रभक्त्या समायुक्तो द्युत्येव सवितुर्महः ॥**

(ब्रह्माण्ड महापुराण २/२४/७८)

**हत्वा तु सकलान्दैत्यान्देवान्सर्वान्हर्षयत ।**
**क्षणेन नाशयामास रामः प्रहरतां वरः ॥**

(ब्रह्माण्ड महापुराण २/२४/८८)

शिव जी से वरदान के साथ शैव अस्त्र शस्त्र प्राप्त कर लिए। विष्णु का तेज भी परशुराम जी में आ गया। राक्षसों को मार कर देवताओं का कष्ट दूर किये। देवता आनन्दित होकर नाना भाँति के उत्सव मनाने लगे।

## परशुराम जी का भगवान् शंकर जी से पुनः वरदान माँगना-

मुझे सभी अस्त्रों तथा शस्त्रों का ज्ञान प्राप्त हो जाय- इसका प्रयोग करना, इन्हें वापस ले लेना, संहार करना सभी ज्ञान प्राप्त हो जाय।

अस्त्र, शस्त्र तथा शास्त्र में मुझसे कोई अधिक न रहे।

मुझे लोक में युद्धभूमि में जीतने वाला कोई न रहे। शंकर जी **एवमस्तु** कहकर उनकी सभी प्रार्थनायें स्वीकार कर लिए।

प्रयोग तथा संहार के साथ सभी अस्त्रों तथा शस्त्रों का ज्ञान करायें।

शुभ अश्व ध्वज से युक्त रथोत्तम, वाण से भरे तुणीर, अभेद्य, अजर, अमर, विजय, धनुष, महान कवच, युद्ध मे अजेय अप्रतीम शौर्य स्वेच्छा से प्राणों को धारण करने की शक्ति वरदान

मे दिये। सभी अभिलषित वरदान प्राप्त कर परशुराम कृत्यकृत्य हो गये।

**यदि देव प्रसन्नस्त्वं वारर्हेऽस्मि च यद्यहम् ।**
**भवतस्तदभीप्सामि हेतुमस्त्राण्यशेषतः ॥**

**अस्त्रे-शस्त्रे च शास्त्रे च न मत्तोऽभ्यधिकोभवेत् ।**
**लोकेषु मांरणेजेता न भवेत्त्वत्प्रसादतः ॥**

(ब्रह्माण्ड महापुराण २/२५/३६-३७)

आशुतोष भगवान् शंकर जी से वरदान प्राप्त कर पिता जी के आश्रम पर आये। उनका आशीर्वाद प्राप्त कर इतने दिनों बाद आने का तथा समस्त वरदान की बात सुनाकर तथा उनके साथ रहकर उनकी सेवा सुश्रुषा करने लगे। अपने जेष्ठ भ्राताओं के साथ भी परशुराम जी का व्यवहार उत्तमोत्तम तथा आनन्ददायक था।

## राजा सहस्त्रबाहु का परिचय

त्रेता युग में सहस्त्रबाहु नामक अत्यन्त शक्तिशाली राजा था। सहस्त्रबाहु की राजधानी महिष्मती नगरी थी। यह नगरी नर्मदा नदी के तट पर बसी थी। वर्तमान में यह स्थान मध्य प्रदेश राज्य के नर्मदा नदी के पास महेश्वर नगर हैं जहाँ राजा सहस्त्रबाहु को समर्पित मंदिर भी स्थित है।

भगवान् दत्तात्रेय सहस्रबाहु के गुरु थे। महर्षि अत्रि की तपस्या से चित्रकुट में माता अनसूया के गर्भ से भगवान् दत्तात्रेय प्रकट हुए। वर देते समय भगवान् विष्णु ने कहा था कि मैने अपने को तुम्हें (दत्त) दे दिया, अतः इनका दत्त नाम पड़ा। भगवान् दत्तात्रेय के चरणों की सेवा से राजा यदु, सहस्रार्जुन तथा अलर्क आदि ने योग-भोग तथा मोक्ष की भी सिद्धियाँ प्राप्त की थीं।

भगवान् दत्तात्रेय से तप-तपस्या के सहारे सहस्रबाहु ने क्रमशः चार वरदान प्राप्त किये थे-

सेना मे मैं हजार भुजा वाला हो जाऊ, घर पर नहीं।

युद्ध भूमि में सैनिक मेरी सहस्रभुजा देखें।

अपने पराक्रम से समस्त पृथिवी में विजयी होकर धर्म से पृथिवी पालन करूँ।

यदि मैं असत्य मार्ग पर चला जाऊँ तो श्रेष्ठ पुरुष मुझे सन्मार्ग पर चलने की शिक्षा दें।

उपर्युक्त चार वरदान राजा सहस्रार्जुन भगवान् दत्तात्रेय जी से प्राप्त कर समस्त पृथिवी जीत लिया और एकमात्र अकेला सम्राट बनकर धर्मपूर्वक पृथिवी का पालन करने लगा। वह हजारों यज्ञ किया जिसमें मणियों से युक्त सोने के स्तम्भ बने, तथा सुवर्णमयी वेदियाँ बनी थीं, जिनमें बड़ी-बड़ी दक्षिणाये आचार्यो को दी गईं। वैसा प्रभावशाली राजा कोई दूसरा नहीं हुआ। हजारों वर्ष तक चक्रवर्ती सम्राट बन कर सहस्रार्जुन ने निष्कंटक राज्य किया।

अपने समय में सहस्त्रबाहु अत्यधिक शक्तिशाली तथा पराक्रमी राजा था जिसनें तीनों लोकों के राजा दशकंधर रावण को भी पराजित कर दिया था और उसे अपने कारावास में बंदी बनाकर रखा था।

राजा सहस्त्रबाहु कृतवीर्य के पुत्र थे जो हैहय वंश के राजा थे। उनका वास्तविक नाम अर्जुन था। कालान्तर में विभिन्न अति उत्कट पुण्य एवं पाप कर्म करने के कारण उनके कई नाम पड़े। अपने पिता के बाद सहस्त्रबाहु महिष्मती नगरी के परम प्रतापी राजा बने। राजा बनने के पश्चात् उनका पृथ्वी के कई महान्

योद्धाओं से युद्ध हुआ था। राजा सहस्त्रबाहु अर्जुन राक्षसराज रावण से भी अधिक प्रभावशाली तथा शक्तिशाली था। कार्तवीर्य अर्जुन के पिता का नाम कृतवीर्य था। ये भी प्रतापी राजा थे। कृतवीर्य की कई रानियां थी लेकिन किसी को कोई संतान नहीं थी। राजा और उनकी रानियों ने पुत्र रत्न प्राप्ति के लिए घोर तपस्या की लेकिन उन्हें कोई सफलता नहीं मिली। तब उनकी एक रानी ने देवी अनुसूया से इसका उपाय पूछा। देवी अनुसूया ने उन्हें अधिक मास में शुक्ल पक्ष में पड़ने वाली एकादशी को उपवास रखने और भगवान विष्णु की पूजा करने के लिए कहा। यथाविधि एकादशी का व्रत करने के कारण भगवान् प्रसन्न होकर वर मांगने के लिए बोले, तब राजा और रानी ने कहा कि प्रभु उन्हें ऐसा पुत्र प्रदान करें जो सर्वगुण सम्पन्न और सभी लोकों में आदरणीय तथा किसी से पराजित न हो। भगवान ने राजा से कहा कि ऐसा ही होगा। कुछ माह के बाद रानी ने एक पुत्र को जन्म दिया, इस पुत्र का नाम कार्तवीर्य अर्जुन रखा गया, जिन्हे सहस्त्रबाहु के नाम से भी जाना जाता है। राजा सहस्त्रबाहु के अनेको नाम पुराणों में यत्र-तत्र मिलते हैं- बचपन में वास्तविक नाम अर्जुन था लेकिन इसी के साथ उन्हें कई अन्य नामों से भी बुलाया जाता रहा। कार्तवीर्य अर्जुन यह नाम उन्हें अपने पिता के कारण मिला। उनके पिता का नाम कृतवीर्य था एतदर्थ उन्हें कार्तवीर्य नाम से भी व्यवहृत किया जाता है। सहस्त्रबाहु, सहस्त्रार्जुन, कार्तवीर्य। सहस्त्र का अर्थ होता है हजार तथा बाहु का अर्थ होता है भुजाएं अर्थात् एक हजार भुजाएं हैं जिनके। सहस्त्रार्जुन को अपने गुरु भगवान् दत्तात्रेय के द्वारा मिले वरदान स्वरुप एक हजार भुजाएं मिली थीं जिसके बाद उन्हें सहस्त्रबाहु एवं सहस्त्रार्जुन के नाम से जाना जाने लगा।

हैहय वंशाधिपति सहस्त्रार्जुन अपने हैहय वंश में सबसे प्रतापी राजा था। एतदर्थ उसे हैहय वंश का प्रमुख अधिपति भी माना गया है। महिष्मती नरेश– महिष्मति नगरी के प्रमुख राजा होने के कारण इस नाम से जाना जाता है। दशग्रीवजयी– लंका के दस मुख वाले राजा रावण के ऊपर विजय प्राप्त करने के कारण इस नाम की उपाधि मिली थी। सप्त द्वीपेश्वर– सातों द्वीपों पर राज करने के कारण कार्तवीर्य को इस नाम से भी जाना गया। राज राजेश्वर– राजाओं के भी राजा होने के कारण राजराजेश्वर से पहचान मिली। राजराजेश्वर नाम से सहस्रबाहु का मंदिर मध्य प्रदेश राज्य के नर्मदा नदी के पास महेश्वर नगर में स्थित है।

सहस्त्रार्जुन का रावण से युद्ध हुआ था। लंकापति रावण को जब सहस्त्रबाहु अर्जुन की वीरता के बारे में पता चला तो वह सहस्त्रबाहु अर्जुन को हराने के लिए उनके नगर आया। यहां पहुंचकर रावण ने नर्मदा नदी के किनारे भगवान् शिव को प्रसन्न करने और उनसे वरदान मांगने के लिए तपस्या की। कुछ दूर पर सहस्त्रबाहु अर्जुन अपने पत्नियों के साथ नर्मदा नदी में स्नान करने के लिए गए थे, वे वहां जलक्रीड़ा करने लगे और अपनी हजार भुजाओं से नर्मदा का प्रवाह रोक दिया। प्रवाह रोक देने से नदी का जल किनारों से बहने लगा। जिस कारण राक्षस राज रावण की तपस्या में विघ्न पड़ गया। इससे रावण को क्रोध आ गया और उसने सहस्त्रबाहु अर्जुन को युद्ध के लिए ललकारा। रावण और सहस्त्रबाहु अर्जुन के मध्य घोर द्वन्दयुद्ध हुआ। सहस्रबाहु अर्जुन ने राक्षस राज रावण को युद्ध में पराजित किया और उन्हें करागृह में डाल दिया–

**ज्यामारोथ दृढे चापे सायकैः पञ्चभिः रातैः ।**
**लङ्केश मोहयित्वा तु सवलं रावणं वलात् ॥**

**निर्जित्य वशमानीय माहिष्मत्यां बबन्ध तम् ।**
**ततौ गत्वा पुलस्त्यस्तमर्जुनं च प्रसाधयत् ॥**

(ब्रह्माण्डमहापुराण २/६९/३५-३६)

बंदी बनाने की सूचना जैसे ही रावण के पिता महर्षि विश्वश्रवा को हुई तो वे घबरा कर अपने पिता ऋषि पुलस्त को इसकी सूचना दी। रावण के दादा ऋषि पुलस्त्य के कहने पर रावण को सहस्रबाहु ने मुक्त कर दिया।

माहिष्मती नगरी को कर्कोटक राजाओं से जीतकर अपनी राजधानी बनाया।

**न नूनं कार्तवीर्यस्य गतिं यास्यन्ति पार्थिवाः ।**
**यज्ञैर्दानैस्तपोभिश्च विक्रमेण श्रुतेन च ॥**

(ब्रह्माण्डमहापुराण २/६९/१९)

**प्रभावः कार्तवीर्यस्य लोके प्रथिततेजसः ।**
**प्रसङ्गात्कथितः सम्यङ्नातिसंक्षेपविस्तरः ॥**

(ब्रह्माण्डपुराण २/४७/६३)

**अनष्टद्रव्यता चासीन्न क्लेशो न च विभ्रमः ।**
**प्रभावेण महाराज्ञः प्रजाधर्मेण रक्षितः ॥**

(ब्रह्माण्डपुराण २/६९/२२)

**स एष पशुपालोऽभूत्क्षेत्रपालस्तथैवच ।**
**स एव वृष्ट्या पर्जन्यो योगित्वादर्जुनोऽभवत् ॥**

(ब्रह्माण्डपुराण २/६९/२४)

## सहस्रार्जुन का जमदग्नि के आश्रम में जाना

सहस्रार्जुन शिकार करते हुए एक समय महागंभीर वन मे चला गया। दैववश जमदग्नि ऋषि के आश्रम में आ गया। परम

तपस्वी जमदग्नि ऋषि के आश्रम में कामधेनु रहती थी। उसके प्रताप से जमदग्नि ऋषि सेना, मंत्री तथा वाहनों के साथ हैहयाधिपति सहस्रार्जुन का विधिवत स्वागत सत्कार किये। हैहयाधिपति ने देखा कि महर्षि का ऐश्वर्य तो मुझसे भी अधिक है। इससे उनके मन में कामधेनु गौ को ले लेने की अभिलाषा उत्पन्न हुई। वह महर्षि के स्वागत सत्कार को कुछ महत्व नहीं दिया तथा कामधेनु को ही लेना चाहा। अभिमान वश कामधेनु मांगी भी नहीं। सेवकों को आदेश दिया कि तुमलोग कामधेनु को छीन लो। आदेश पाकर सेवक बछड़े सहित कामधेनु को डकारती हुई बलपूर्वक अपनी राजधानी माहिष्मती नगरी ले कर चल दिए। वह कामधेनु बार-बार हुंकार करती तथा अश्रुपात करती हुई माहिष्मती आ गई।

## परशुराम जी का पीछा करते हुए माहिष्मती नगरी जाना

जब सहस्रबाहु और उसके सैनिक कामधेनु को लेकर चले गए तब परशुराम जी फल, फूल समिधा जंगल से लेकर आश्रम पर आ गये। तथा सारा वृतान्त सुनकर चोट खाये हुए सर्प की तरह क्रोध में तिलमिला गये। वे अपना भयंकर फरसा, तरकश, ढाल एवं धनुष लेकर बड़े वेग से उसके पीछे दौड़े। जैसे सिंह हाथी पर टूट पड़ता है।

सहस्रार्जुन अपनी नगरी में प्रवेश कर ही रहा था कि उसने देखा परशुराम जी बडे वेग से उसकी ओर आ रहे थे। वे हाथ में धनुष, वाण और फरसा लिए थे। शरीर में काला मृगचर्म लपेटे हुए थे। उनकी शिर की जटाये सूर्य की किरणों के समान चमक रही थी।

## परशुराम जी तथा सहस्रार्जुन का युद्ध

उन्हें देखते ही सहस्रार्जुन अपनी सजी-धजी सेना लेकर युद्ध के लिए निकल पड़ा। भयंकर संग्राम प्रारंभ हो गया। परशुराम जी की गति, मन तथा वायु के समान तेज है। वे सबके देखते ही देखते शत्रु सेना को काटते जाते थे। फरसा जहाँ चलाते थे वहीं वीरों की बाहें, जाँघ तथा शिर कट जाते थे। भयंकर युद्ध चल रहा था। यह समाचार सुन कर सहस्रार्जुन के मित्र राजा मत्स्य राज मंगल, बृहद्, विदर्भ के राजा सोमदत्त निषाधाधिपति मिथिलेश्वर तथा मगधाधिपति राजाओं का समूह सहस्रार्जुन की सहायता में आकर संग्राम प्रारम्भ कर दिया। परशुराम जी परमात्मा होते हुए तपस्वी थे। उन्हें अनेक प्रकार की युद्धकला, अस्त्रशस्त्र का प्रयोग, अपने बचाव हेतु कवच का ज्ञान शंकर जी से वरदान में प्राप्त था। तदनन्तर कार्तवीर्य अर्जुन को ललकार कर मार डाले। यह सारा दृश्य देखकर सहस्रार्जुन के लड़के युद्धभूमि से भाग गये।

**कृत्तबाहोः शिरस्तस्य गिरेः श्रृङ्गमिवाहरत् ।**
**हते पितरि तत्पुत्रा अयुतं दुद्रुवुर्भयात् ॥**

(श्रीमद्भागवत ९/१५/३५)

सेना सहित सहस्रार्जुन के मारे जाने के बाद सवत्सा कामधेनु लेकर वापस अपने पिता जी के आश्रम में आ गये। तथा सारा वृतान्त पिता जी से कह सुनाये। तदनन्तर महर्षि जमदग्नि ने कहा कि राजा सर्वदेवमय होता है। उसका वध देवताओ के वध जैसा है। हम ब्राह्मण है। क्षमा हि हमारा धर्म, कर्म तथा तपस्या है। क्षमा करने वाले ब्राह्मण पर भगवान भी प्रसन्न होते है। तुम जाओ तीर्थों का सेवन करते हुए अपने पाप को धो डालो।

**राज्ञो मूर्धा भिषिक्तस्य वधो ब्रह्मवधात् गुरुः ।**
**तीर्थसंसेवया चांहो जह्यङ्गाच्युतचेतनः ॥**

(श्रीमद्भागवत ९/१५/४१)

पिता जी के आदेश से परशुराम जी तीर्थ यात्रा करना प्रारम्भ किए। परशुराम जी एक वर्ष तक भारतवर्ष के तीर्थों, मन्दिरों तथा आश्रमों का दर्शन कर पुनः पिता जी के आश्रम मे आ गये।

सहस्रार्जुन के मारे जाने पर उसके लड़के युद्धभूमि से भाग गये थे। उन्हें अपने पिता की मृत्यु की बात बराबर याद रहती थी। एक क्षण के लिए भी उन्हें चैन नही था। एक समय परशुराम जी अपने भाइयों के साथ आश्रम से बाहर वन की ओर फल, फूल, समिधा आदि लाने हेतु गये थे। सहस्रार्जुन के पुत्र इसी क्षण अवसर पाकर वैर साधने हेतु आश्रम में आ पहुँचे। उस समय जमदग्नि जी अपनी यज्ञशाला मे बैठकर ब्रह्मचिन्तन मे मग्न थे। उन्हें बाहर की कोई सुध नही थी। धोखे से सहस्रार्जुन के पापपरायण पुत्रों ने महर्षि जमदग्नि का शिर काट डाला। माता रेणुका छाती पीट–पीटकर विलाप कर रही थी। जब भगवान् परशुराम जी आश्रम आये सारा वृतान्त सुनकर दुःखी हुए।

## जमदग्नि ऋषि का जीवित हो जाना

परशुराम जी अमृत बनाने की विद्या भी जानते थे। वे उनका शिर शरीर से जोड़ कर विद्या उपचार तथा दवा के प्रभाव से पिता जी को जीवित कर लिए।

जमदग्नि ऋषि मे पुनः उनका तेजपुंज आकर सर्वत्र प्रसर गया। आज भी वे सप्तर्षि मण्डल मे सातवें ऋषि है। अपनी तपस्या, विद्यादान, परमार्थ चिन्तन तथा राष्ट्रसेवा से देदीप्यमान होकर आकाश मे प्रकाशित है।

माता रेणुका पति जमदग्नि जी के मारे जाने पर इक्कीस बार छाती पीट–पीट कर रोई थी। परशुराम जी को यह गिनती याद थी। पिता जी का बदला लेने के लिए पुनः अस्त्र–शस्त्र से

सुसज्जित होकर माहिष्मती नगरी पहुच गये। पुनः भयंकर संग्राम छिड़ गया। संग्राम में भगवान् श्री परसुराम जी ने सहस्रार्जुन के पुत्रों सहित उनकी सेना का भी संहार कर दिया। जिन-जिन राजधानियों के अत्याचारी राजाओं द्वारा प्रजाओं का शोषण हो रहा था, सहस्रार्जुन के मित्र राजाओं ने महिष्मती राज्य की सहायता के लिए भगवान् परशुराम जी से युद्ध किए और युद्ध में अपनी सेनाओं के सहित मारे गए। जैसे- सहस्रार्जुन के मित्र राजा कश्मीर, दारद कुन्ति, छुद्रक, मालव, अंग, बंग, कलिंग, विदेह, तामलिप्त त्रिगर्त, मर्त्तिकावर्त, शिवि तथा अन्य अत्याचारी राजाओं से युद्ध हुआ और वे मारे गए। यह संग्राम इक्कीस बार हुआ। इन युद्धो में अंग-वंग के राजाओं के साथ लुटेरे निषादों को मारकर पृथिवी को अत्याचारियों से मुक्त किए। कश्मीर देशाधिपति को भी मृत्यु के घाट उतार कर स्वस्थ साम्राज्य की स्थापना किये।

## परशुराम जी द्वारा स्वस्थ सम्राज्य की स्थापना

जो राजा पृथिवी का पालन धर्म पूर्वक कर रहे थे। उनपर श्रीपरशुराम जी की कृपा बराबर बनी रही उनके कल्याण की कामना भी करते रहे। 'सर्वजन सुखाय सर्वजन हिताय' के लिए शस्त्र धारण कर पृथिवी पर विचरते रहे। गरीब, धनिक सब पर उनकी बराबर दृष्टि बनी रही। दिन-प्रतिदिन लोकतुष्टि मे रत रहते थे।

मत्स्यराज मंगल, वृहद्वल, सोमदत्त, विदर्भ मैथिल तथा निषध देश के राजाओं के साथ भयंकर युद्ध हुआ। शंकर जी के दिये शूल से सोमदत्त को समाप्त किये। गदा से वृहद्वल को मारे। मुष्टि नामक शस्त्र से विदर्भ नरेश को मारे। मुद्गर से मैथिल नरेश को समाप्त किये। शक्ति से निषध देश के राजाओं को मारे। चरणाघात से मत्स्यराज मंगल को मारे। ये सभी शस्त्र समूह तपस्या में शंकर जी से प्राप्त किये तथा वरदान मांगे।

परशुराम जी स्वयं परमात्मा थे। नरदेह धारण करने के कारण तपस्या करते थे। भगवान शंकर से वरदान भी प्राप्त किये थे।

**एवं भृगुषु विश्वात्मा भगवान् हरि रीश्वरः ।**
**अवतीर्य परं भारं भुवोऽहन् बहुशोनृपान् ॥**

(श्रीमद्भागवत ९/१६/२७)

सूर्यवंश मे एक राजा सुश्चन्द नाम के थे। जो अन्य राजाओं की सहायता से परशुराम जी से भयंकर संग्राम किये। उन्हे मारने मे नारायणास्त्र शक्ति, मूशल, तोमर, पहिश, गदा, परशु सभी शस्त्रों का प्रयोग करना पड़ा, परन्तु राजा मरे नही। तब परशुराम जी ने भगवती भद्रकाली की स्तुति की।

## परशुराम जी की युद्धभूमि मे तपस्या

**दृष्ट्वा विहाय शस्त्रास्त्रं नमस्कृत्य समैडत ।**
**राम उवाच**
**नमोस्तु ते शङ्करवल्लभायै जगत्सवित्र्यै समलङ्कृतायै ॥**

(ब्रह्माण्डमहापुराण २/३९/३५)

परशुराम जी की स्तुति से प्रसन्न होकर भगवती भद्रकाली ने परशुराम जी को वरदान प्रदान की । "सुश्चन्द" को आग्नेयास्त्र से मारकर मेरे लोक भेज दो वह पार्षद बन जाय ऐसा भद्रकाली वरदान परशुरामजी को दी। सुश्चन्द के मारे जाने के बाद उसका बेटा बदला लेने के लिए पुष्कराक्ष, मैदान में आकर बड़ी वीरता से संग्राम किया। परशुराम जी उसके शिर पर फरसा चलाये। वह फरसे के प्रहार से पुष्कराक्ष शिर से लेकर पाद तक बीच में फटकर उसका शरीर दो भाग में बट गया।

जामदग्न्यराम धनुर्धर, तेजस्वी शूर, संसद मे तथ्य वक्ता, नाना प्रकार की कलाओं के ज्ञाता, विद्या तथा शास्त्र में पारंगत,

विधिज्ञ तथा ब्रह्मास्त्र चलाने तथा रोकने में कुशल थे। सामान्य ऋषि जैसे वेद वेदाङ्ग का अध्ययन अध्यापन कर्मकाण्ड का प्रयोग शास्त्र विधि से बराबर करते थे।

इस प्रकार भगवान् परशुराम जी ने युद्ध भूमि में हैहयवंशीय आततायी क्षत्रियों का उनके मित्रों सहित संहार कर दिए। उसके पुत्र एवं सहायता मे आये सभी नर पतियों को मारकर पृथिवी का भार उतार दिये। तदनन्तर अपने शिष्य अकृतवर्ण के साथ नर्मदा में स्नान कर तर्पण आदि किये-

**रामोऽपि हत्वा नृपचक्रमाजौ राज्ञः सहायार्थमुपागतञ्च ।**
**समन्वितोऽसावकृत व्रणेन सस्नौमुदागत्य च नर्मदायाम् ॥**
(ब्रह्माण्डमहापुराण २/४१/१५)

## सहस्रार्जुन को मारने की भीषण प्रतिज्ञा

इसकी पूर्ति हेतु विष्णुलोक, ब्रह्मलोक तथा शिवलोक को गये। सबने भगवान शंकर की तपस्या हेतु उपदेश दिया। इसकी सिद्धि हेतु परशुरामजी भगवान् शंकर की कठिन तपस्या किए तथा वरदान प्राप्त किए।

## परशुराम जी का पुनः भगवान शंकर की तपस्या कर वरदान प्राप्त करना

शंकर जी परशुराम जी से कहे कि तुम आज से हमारे पुत्र के समान प्रिय हो। तुम्हे तीनो लोकों में दुर्लभ मंत्र दूँगा- वह कवच दूँगा जिससे तुम कार्तवीर्य अर्जुन को आसानी से मार सकोगे।

तुम्हारी कीर्ति सर्वत्र गाई जायेगी। ऐसा कहकर शंकर जी ने दुर्लभ मंत्र तथा परम अद्भूत त्रैलोक्य विजय कवच वरदान में दिये।

आशुतोष भगवान् शिव ने परशुराम जी को पुरश्चरण पूर्वक स्तव पूजा विधान, मंत्रसिद्धि अनुष्ठान नियम क्रम, सिद्धि का

स्थान, काल ज्ञान, संख्या ज्ञान, तथा वेद वेदाङ्ग का अध्ययन कराये।

नागपाश, पाशुपत, दुर्लभ ब्रह्मास्त्र, नारायणशास्त्र, आग्नेश, वारुण, वायव्य, गन्धर्व, गरुण जृम्भास्त्र, गदा, परशु, शूल शक्ति नाम के अस्त्र दिये तथा चलाने की विधि भी बताये।

नाना प्रकार के शस्त्रशास्त्र का ज्ञान तथा प्रयोग विधि भी बताये।

शस्त्रास्त्र की संघार विधि तुणीर अक्षय वाण तथा आत्मरक्षा की विधि भी बताये।

संग्राम विजय, मायायुद्ध का ज्ञान, विविध मंत्र पूर्वक हूँकार, अपनी सेना की रक्षा, शत्रुसेना का मर्दन तथा संकट से सुरक्षा हेतु अनेक प्रकार के उपाय भी बताये।

संहार में मृत्युहर, मोहिनी विद्या, भगवान शंकर ने परशुराम जी को दिया। उनके पास चिरकाल तक रहकर अस्त्र-शस्त्र तथा शास्त्र की सभी विद्याओं को समझ कर प्रयोग विधि जानकर तीर्थों में अपने मंत्रों को सिद्ध कर अपने आश्रम में आ गये।

एक बार नारद जी भगवान नारायण से पूछे-भगवन्! कौन-कौन अस्त्र-शस्त्र, स्तव, मंत्र-तंत्र, कवच देवताओं से परशुराम जी ने प्राप्त किया था।

नारायण ने कहा कि-भगवन्! श्रीकृष्ण से त्रैलोक्य विजय परमाद्भूत कवच, भूतियोग से उत्पन्न महापुण्यदायकस्तवराज पारिजात, देवलोक आश्रम मे माधव के पास समस्तकामनाप्रद मंत्रकल्पतरु प्राप्त किये।

भगवान् विष्णु ने परशुराम जी को कवच ग्रहण कराये तथा स्वयं वैकुण्ठ लेकर चले गये। वे कवच के प्रताप से पुत्र सहित सहस्राक्ष को मार गिराये। ब्रह्मास्त्र से 7 दिन तक युद्ध करने के बाद सपुत्र सगण तथा ससैन्य सहस्रार्जुन मारा गया। विशाल सेना के साथ स्वर्ण रथ पर सवार होकर सहस्रार्जुन रणभूमि में आया था तथा भृगुनन्दन को प्रणाम किया था। भगवान् परशुराम बोले- अब आपका समय पूर्ण हो गया है इसलिए स्वर्ग जाओ, यह आशीर्वाद दिया। युद्धभूमि में कार्तवीर्य अर्जुन परशुराम जी पर दत्तात्रेय के दिये हुए महाशूल का प्रहार किया। इससे बचाव के लिए भगवान शंकर ने नारायण की आज्ञा से परशुराम जी को बचा लिया।

**शङ्करश्च महाज्ञानीमहाज्ञानेन लीलया ।**
**ब्राह्मणं जीवयामास तूर्णं नारायणाज्ञया ॥**

(ब्रह्मवैवर्तपुराण गणपति खण्ड)

कार्तवीर्य को मारने की प्रतिज्ञा पर परशुराम जी ब्रह्मा जी के पास जाकर सारा वृतान्त तथा पृथिवी पर उसका अत्याचार कहकर सुना दिये। तदन्तर ब्रह्मा जी शंकर जी की तपस्या हेतु आदेश दिये।

## त्रैलोक्य विजय कवच तथा पाशुपतास्त्र प्राप्त करने के लिए माता पार्वती का आशीर्वाद

परशुराम जी को माता पार्वती जी अमर होने का वरदान देती हैं। तथा यह भी कहती हैं कि- श्रीकृष्ण की राधा अधिष्ठात्रि मूर्ति सावित्री, ऐश्वर्याधिष्ठात्रि मूर्ति महालक्ष्मी ज्ञानाधिष्ठात्रिमूर्ति सरस्वती जगत् कल्याणकारिणी ये देवियाँ सतत् आराध्या हैं। इनकी आराधना से आपका मनोरथ पूरा होगा। इसी सन्दर्भ में परशुराम जी दुर्गा स्तुति करते हैं। यथा-

**रक्ष रक्ष जगन्मातरपराधं क्षमस्व मे ।**
**शिशूनामपराधेन कुतोमाता हि कुप्यति ॥**

(ब्रह्मवैवर्त पुराण ३/४५/५७)

## भगवती दुर्गा का वरदान प्राप्त करना

**श्रीकृष्णस्य च भक्तस्त्वं शिष्यो वै शंकरस्य च ।**
**गुरुपत्नीं स्तौषि यस्मात् कस्त्वां हन्तुमिहेश्वरः ॥**

(ब्रह्माण्डमहापुराण २/४९/६२)

कार्तवीर्य अर्जुन से युद्ध समापन के बाद शंकर जी को प्रणाम करने के लिए भगवान् परशुराम जी उनके आश्रम कैलाश पर्वत पर गए।

परशुराम जी ने श्री गणेशजी से कहा कि मैं माता पार्वती तथा शंकर जी को प्रणाम कर शीघ्र घर जाऊगाँ। उनकी कृपा से कार्तवीर्य अर्जुन को ससैन्य सगण मार दिया हूँ। उन्हीं की कृपा से समस्त विद्यायें ग्रहण किया था। मैं अखण्डचन्द्रखण्ड धारी देवाधिदेव आशुतोष भगवान् शिव का दर्शन करना चाहता हूँ। गणेश जी ने कहा इस समय भगवान् शिव माता पार्वती के साथ हैं ऐसी दशाओं में आपको दर्शन नहीं करना चाहिए। यथा-

**श्रोणीवक्षःस्थलं वक्त्रं यः पश्यति परस्त्रियः ।**
**कामतोऽपि विमूढश्च सोऽन्धो भवति निश्चितम् ॥**

(ब्रह्मवैवर्त पुराण ३/४२/१४)

परशुराम जी ने कहा यह वाक्य विकारी तथा कामी पुरुषों के लिए है। मुझे देखकर माता-पिता को लज्जा कहाँ। गणेश जी के मना करने पर भी नहीं माने। दोनो में वाक् युद्ध प्रारम्भ हो गया। परशुराम जी कुपित होकर परशु चलाना चाहते हैं, तब तक

कार्तिकेय जी हा! हा! का उच्चारण करते हुए कहते हैं कि- हे श्रेष्ठ भ्राता जी! गुरुपुत्र पर प्रहार क्यों कर रहे हो, परशुराम जी नहीं माने। गणेश जी पर परशु चला दिये। गणेश जी उन्हें अपनी सूँढ़ में लपेट कर सारी पृथिवी स्वर्ग, वैकुण्ठ, शिवलोक, ब्रह्मलोक सभी दिखा दिये। परशुराम जी शिव का स्मरण किये और परशुराम ने शिव जी का दिया हुआ अजेय परशु का प्रहार गणेश जी के वामदन्त पर कर दिया। उनका दाँत कट गया । यह शिव जी का दिया वरदान था। अत: गणेश जी ने उसे स्वीकार कर एकदन्त बन गये।

इस युद्ध में पृथिवी काँप उठी। शिव जी की निद्रा टूटी। वे आश्रम के बाहर आये। पार्वती जी सारा वृतान्त जानकर अत्यन्त दुखी हुई। क्रोध में परशुराम जी को श्राप देने हेतु उद्यत हो गई। यह परिस्थिति देखकर परशुराम जी ने गुरु शिव का स्मरण किये। तदनन्तर शिव जी तथा श्रीकृष्ण एक साथ वहाँ उपस्थित हो गये। भगवान् गोलोक वासी श्रीकृष्ण जी बोले यह मेरा सुदर्शन चक्र है। शिव जी को छोड़कर सारे ब्रह्माण्ड का नाश कर सकता है।

भगवान् श्रीकृष्ण ने निर्णय दिया, उनसे कहा कि जैसे गणेश तथा कार्तिकेय आप के पुत्र हैं। वैसे इन्हीं के समान परशुराम भी आपका शिष्य है। इन तीनों मे आपको प्रेम करने में कोई अन्तर नहीं है। यह दोनों का विवाद दैववश हुआ है। दैव बलवान होता है। उसे कोई मिटा नहीं सकता है। शास्त्रों में गणेश एकदन्त कहे गये हैं-

**गणेशमेकदन्तं च हेरम्बं विघ्ननाशकम् ।**
**लम्बोदरं शूर्पकर्णं गजवक्त्रं गुहाग्रजम ॥**
**ज्ञानार्थवाचको गश्च णश्च निर्वाणवाचक: ।**
**तयोरीशं परं ब्रह्म गणेशं प्रणमाम्यहम् ॥**

(ब्रह्मवैवर्त पुराण ३/४४/८६-८७)

**एकशब्दः प्रधानार्थो दन्तश्च बलवाचकः ।**
**बलं प्रधानं सर्वास्मादेकदन्तं नमाम्यहम् ॥**

(ब्रह्मवैवर्तपुराण ३/४४/८९)

भगवान् के आदेश से परशुराम ने माता पार्वती जी तथा श्रीगणेशजी की स्तुति कर सबको प्रसन्न किए। ये आशुतोष भगवान् शंकर के अत्यन्त प्रिय भक्त तथा विद्यार्थी थे। उनकी कृपा से महाबलशाली कार्तवीर्य अर्जुन का वध कर अपनी प्रतिज्ञा पूरी किये। प्रतिज्ञा पूर्ण होने के पश्चात् आशुतोष भगवान् शिव जी का दर्शन कर एवं आशीर्वाद लेकर अपने आश्रम पिता जी के पास गये। माता-पिता का दर्शन कर आनन्दित हुए।

## भगवान् परशुराम कृत दुर्गा स्तुति

कार्तवीर्य अर्जुन यज्ञ-यागादि के द्वारा देवताओं को प्रसन्न कर वरदान प्राप्त किया था। उसे युद्ध में जीतना तथा मारना असाधारण कार्य था। उसका अन्याय, अत्याचार तथा पाप उसके विनाश का कारण बना। युद्धभूमि में परशुराम जी के साथ भयानक युद्ध हुआ तथा उसे मारना अत्यन्त कठिन काम था। आशुतोष भगवान् शंकर जी के निर्देशानुसार युद्धभूमि में परशुराम जी दुर्गा जी की स्तुति कर मारने में समर्थ हुए। यथा-

**परशुरामकृतं दुर्गास्तोत्रम्**

**श्रीकृष्णस्य च गोलोके परिपूर्णतमस्य चः ।**
**अविर्भूता विग्रहतः पुरा सृष्ट्युन्मुखस्य च ॥१॥**

**सूर्यकोटिप्रभायुक्ता वस्त्रालंकारभूषिता ।**
**वह्निशुद्धांशुकाधाना सुस्मिता सुमनोहरा ॥२॥**

नवयौवनसम्पन्ना सिन्दूरविन्दु शोभिता ।
ललितं कबरीभारं मालतीमाल्यमण्डितम् ॥३॥

अहोऽनिर्वचनीया त्वं चारुमूर्तिं च बिभ्रती ।
मोक्षप्रदा मुमुक्षूणां महाविष्णोर्विधिः स्वयम् ॥४॥

मुमोह क्षणमात्रेणदृ त्वां सर्वमोहिनीम् ।
बालैः सम्भूय सहसां सस्मिता धाविता पुरा ॥५॥

सखिः ख्याता तेन राधा मूलप्रकृतिश्वरी ।
कृष्णस्त्वां सहसाहूय वीर्याधानं चकार ह ॥६॥

ततो डिम्भं महज्जज्ञे ततो जातो महाविराट् ।
यस्यैव लोमकूपेषु ब्रह्माण्डान्यखिलानि च ॥७॥

तच्छङ्गारक्रमेणैव त्वन्निःश्वासर बभुवः ह ।
स निःश्वासो महावायुः स विराड् विश्वधारकः ॥८॥

तव घर्मजलेनैव पुप्लुवे विश्वगोलकम् ।
स विराङ् विश्वनिलयो जलराशिर्बभूव ह ॥९॥

ततस्त्वं पञ्चधाभूय पञ्चमूर्तीश्च बिभ्रती ।
प्रणाधिष्ठातृमूर्तिर्या कृष्णस्य परमात्मनः ॥१०॥

कृष्णप्राणाधिकां राधां तां वदन्ति पुराविदः ॥११॥

वेदाधिष्ठातृमूर्तियां वेदाशास्त्रप्रसूरपि ।
तौ सावित्रीं शुद्धरूपां प्रवदन्ति मनीषिणः ॥१२॥

ऐश्वर्याधिष्ठातृमूर्ति शान्तिश्च शान्तरूपिणी ।
लक्ष्मीं वदन्ति संतस्तां शुद्ध सत्त्वस्रूपिणीम् ॥१३॥

रागाधिष्ठातृदेवी या शुक्लमूर्तिः सतां प्रसू ।
सरस्वतीं तां शास्त्रज्ञां शास्त्रज्ञाः प्रवदन्त्योहो ॥१४॥

बुद्धिर्विद्या सर्वशक्ते र्या मूर्तिरधिदेवता ।
सर्वमङ्गलमङ्गल्या सर्वमङ्गलरूपिणी ॥१५॥

सर्वमङ्गलबीजस्य शिवस्य निलयेऽधुना ॥१६॥

शिवे शिवास्वरूपा त्वं लक्ष्मीर्नारायणान्तिके ।
सरस्वती च सावित्री वेदसूर्ब्रह्मणः प्रिया ॥१७॥

राधा रासेश्वरस्यै परिपूर्णतमस्य च ।
परमानन्दरूपस्य परमानन्दरूपिणी ॥१८॥

त्वत्कलांशांशकलया देवानामपि योषितः ॥१९॥

त्वं विद्या योषितः सर्वास्त्वं सर्वबीजरूपिणी ।
छाया सूर्यस्य चन्द्रस्य रोहिणी सर्वमोहिनी ॥२०॥

शची शक्रस्य कामस्य कामिनी रतिरीश्वरी ।
वरुणानी जलेशस्य वायोः स्त्री प्राणवल्लभा ॥२१॥

वह्नेः प्रिया हि स्वाहा च कुबेरस्य च सुन्दरी ।
यमस्य तु सुशीला च नैर्ऋतस्य च कैटभी ॥२२॥

ईशानस्य शशिकला शतरूपा मनोः प्रियाः ।
देवहूतिः कर्दमस्य वसिष्ठस्याप्यरुन्धती ॥२३॥

लोपामुद्राप्यगस्त्यस्य देवमातादितिस्तथा ।
अहल्या गौतमस्यापि सर्वाधारा वसुन्धराः ॥२४॥

गङ्गा च तुलसी चापि पृथिव्यां या सरिद्वराः ।
एताः सर्वा श्च या ह्यन्याः सर्वास्त्वत्कलयाम्बिके ॥२५॥

गृहलक्ष्मीगृहे नृणांराजलक्ष्मी श्च राजसु ।
तपस्विनां तपस्या त्वं गायत्री ब्राह्मणस्य च ॥२६॥

सतां सत्त्वस्वरूपा त्वमसतां कलहाङ्कुरा ।
ज्योतिरूपा निर्गुणस्य शक्ति स्त्वं सगुणस्य च ॥२७॥

सूर्ये प्रभास्वरूपा त्वं दाहिका च हुताशने ।
जले शैत्यस्वरूपा च शोभारूपा निशाकरे ॥२८॥

त्वं भूमौ गन्धरूपा च आकाशे शब्दरूपिणी ।
क्षुत्पिपासादयस्त्वं च जीविनां सर्वशक्त यः ॥२९॥

सर्वबीजस्वरूपा त्वं संसारे साररूपिणी ।
स्मृतिर्मेधा च बुद्धिर्वा ज्ञानशक्ति र्विर्पा श्चताम् ॥३०॥

कृष्णेन विद्या या दत्ता सर्वज्ञानप्रसूः शुभा ।
शूलिने कृपया सा त्वं यतो मृत्युञ्जयः शिवः ॥३१॥

सृष्टिपालनसंहारशक्त यस्त्रिविधा श्च याः ।
ब्रह्मविष्णुमहेशानां सा त्वमेव नमोऽस्तु ते ॥३२॥

मधुकैटभभीत्या च त्रस्तो धाता प्रकम्पितः ।
स्तुत्वा मुमोच यां देवीं तां मूधंनर् प्रणमाम्यहम् ॥३३॥

मधुंकैटभयोर्युद्धे त्रातासौ विष्णुरी श्वरीम् ।
बभूव शक्ति मान् इस्तुत्वा तां दुर्गा प्रणमाम्यहम् ॥३४॥

त्रिपुरस्य महायुद्धे सरथे पतिते शिवे ।
यां तुष्टवुः सुराः सर्वे तां दुर्गा प्रणमाम्यहम् ॥३५॥

विष्णुना वृषरूपेण स्वयं शम्भुः समुत्थितः ।
जघान त्रिपुरं स्तुत्वा तां दुर्गा प्रणमाम्यहम् ॥३६॥

यदायज्ञा वाति वातः सूर्यस्तपति संततम् ।
वर्षतीन्द्रो दहत्यगिन्स्तां दुर्गा प्रणमाम्यहम् ॥३७॥

यदायज्ञा हि काल श्च शश्वद् भ्रमति वेगतः ।
मृत्यु श्चरति जन्त्वोघे तां दुर्गा प्रणमाम्यहम् ॥३८॥

स्त्रष्टा सृजति सृष्टिं च पाता पाति यदाज्ञया ।
संहर्ता संहरेत् काले तां दुर्गा प्रणमाम्यहम् ॥३९॥

ज्योतिःस्वरूपो भगवाञ्छ्रीकृष्णो निर्गुणः स्वयम् ।
यया विना न शक्त श्च सृष्टिं कर्तु नमानि ताम् ॥४०॥

रक्ष रक्ष जगन्मातरपराधं क्षमस्व ते ।
शिशूनामपराधेन कुतो माता हि कुप्यति ॥४१॥

इत्युक्त्वा पर्शुराम श्च प्रणम्य तां रुरोद ह ।
तुष्टा दुर्गा सम्भ्रमेण चाभयं च वर ददौ ॥४२॥

अमरो भव हे पुत्र वत्स सुस्थिरतां व्रज ।
सर्वप्रारदात् सर्वत्र ज्योऽस्तु तव संततम् ॥४३॥

सर्वान्तरात्मा भगवांस्तुष्टोऽस्तु संततं हरि ।
भक्ति र्भवतु ते कृष्णे शिवदे च शिवे गुरौ ॥४४॥

इष्टदेवे गुरौ यस्य भक्ति र्भवति शाश्वती ।
तं हन्तु न हि शक्ता श्च रुष्टा श्च सर्वदेवताः ॥४५॥

श्रीकृष्णस्य च भक्त स्त्वं शिष्यो हि शंकरस्य च ।
गुरुपत्नीं स्तौषि यस्मात् कस्त्वां हन्तुमिहेश्वरः ॥४६॥

अहो न कृष्णभक्त अनामशुभं विद्यते क्वचित् ।
अन्यदेवेषु ये भक्ता न भक्तां वा निरेङ्कुशाः ॥४७॥

चन्द्रमा बलवांस्तुष्टो येषां भाग्यवतां भृगो ।
तेषां तारागणा रुष्टाः किं कुर्वन्ति च दुर्बलाः ॥४८॥

यस्य तुष्टः सभायां चेन्नरदेवो महान सुखी ।
तस्य किं वा करिष्यन्ति रुष्टा भृत्या श्च दुर्बलाः ।।४९।।

इत्युक्ता पार्वती तुष्टा दत्त्वा रामं शुभाशिषम् ।
जगामान्तःपुरं तूर्ण हरिशब्दो बभूव ह ।।५०।।

स्तोत्रं वै काण्वशाखोक्तं पूजाकाले च यः पठेत ।
यात्राकाले च प्रातर्वा वाञ्छितार्थ लभेद्ध्रुवम ।।५१।।

पुत्रार्थी लभते पुत्रं कन्यार्थी कन्यकां लभेत् ।
विद्यार्थी लभते विद्यां प्रजार्थी चाप्नुयात् प्रजाम ।।५२।।

भ्रष्टराज्यो लभेद् राज्यं नष्टवित्तो धनं लभेत् ।।५३।।

यस्य रुष्टो गुरुर्देवो राजा वा बान्धवोऽथवा ।
तस्य तुष्ट श्च वरदः स्तोत्रराजप्रसादतः ।।५४।।

दस्युग्रस्तोऽहिग्रस्त श्च शत्रु ग्रस्तो भयानकः ।
व्याधिग्रस्तो भवेन्मुक्तः स्तोत्रस्मरणमात्रतः ।।५५।।

राजद्वारे श्मशाने च कारागारे च बन्धने ।
जलराशौ निमग्न श्च मुक्त स्तत्स्मृतिमात्रतः ।।५६।।

स्वामिभेदे पुत्रभेदे मित्रभेदे च दारुणे ।
स्तोत्रस्मरणमात्रेण वाञ्छितार्थ लभेद् ध्रुवम् ।।५७।।

कृत्वा हविष्यं वर्ष च स्तोत्रपराजं श्रृणेति या ।
भक्त्या दुर्गा च सम्पूज्य महावन्ध्या प्रसूयते ।।५८।।

लभते सा दिव्यपुत्रं ज्ञानिनं चिरजीविनम् ।
असौभाग्या च सौभाग्यं षणमासश्रवणाल्लभेत् ।।५९।।

**नवमांस काकवन्ध्या मृतवत्सा च भक्ति तः ।**
**स्तोत्रराजं या श्रृणोति सा पुत्रं लभते धुरवम् ॥६०॥**

**कन्यामाता पुत्रहीना पञ्चमासं श्रृणोति या ।**
**घटे सम्पूज्य दुर्गा च सा पुत्रं लभते ध्रुवम् ॥६१॥**

(ब्रह्मवैवतपुराण, गणपतिखण्ड ४५/१-६१)

दुर्गा जी ने परशुराम जी को वरदान दिया-तुम शंकर प्रिय भक्त तथा शिष्य हो। अस्त्र-शस्त्र की सारी विद्यायें उनसे प्राप्त किए हो। अतएव सर्वत्र विजयी रहोगे, तुम्हें मारने में कोई समर्थ नहीं होगा, अमर रहोगे और सुस्थिर रहोगे।

रेणुकानन्दवर्धन श्रीपरशुराम भगवती श्री दुर्गापरमेश्वरी जी से अमरत्व का वरदान प्राप्त कर कृतकृत्य हो गये। उनको प्रणाम किये, स्तुति किये। पुनः शंकर जी का दर्शन किये। आशीर्वाद प्राप्त कर अपने शिष्य अकृतवर्ण के साथ पिता जी के आश्रम पर आ गये।

## परशुराम जी का कार्तवीर्य अर्जुन से युद्ध के पूर्व प्रश्न

युद्ध के पूर्व परशुराम जी कार्तवीर्य से प्रश्न किये-
तुम चन्द्रवंश मे उत्पन्न महादानी वीर राजा हो?

विष्णुअंश से अवतीर्ण दत्तात्रेय के शिष्य हो?

सज्जनो से हिंसा करने की बुद्धि तुममें क्यों आई?

ब्राह्मणों को क्यों मारे हो?

तुम वन में उपवासे तथा भूखे थे। यह समझकर पिता जी तुम्हें भोजन दिये। उसका फल तुम राजा होकर उलटा दिये। तुमने

जीवन में बहुत यश कमाये परन्तु वृद्धावस्था में अयश क्यों कमाये? तुम्हें लोग दाता, धर्मिष्ठ तथा महादानी कहते हैं। तुम्हें यह दुष्कीर्ति क्यों प्राप्त होती है? सूर्य, चन्द्र तथा मनु के वंशज यहाँ उपस्थित हैं। सत्य बताओ? तुम्हारे कुल के देवता, पितर तथा पूर्वज इस सभा में विराजमान हैं। विद्वान, ज्ञानी राजा भी यहाँ उपस्थित हैं इसे सुनो तथा निर्णय पर विचार करें-

## कार्तवीर्य अर्जुन का अनुपयुक्त उत्तर

**रागतः कामधेनुश्च मया वै याचिता मुने ।**
**को दोष एव मे जातः क्षत्रियस्यानुरागिणः ॥**

(ब्रह्मवैवर्त पुराण ३/५२/७८)

हे मुनि श्रेष्ठ परशुराम जी ! मैने आपसे कामधेनु गाय की याचना की किन्तु जब आपने नहीं दिया तो मैंने उसे बलपूर्वक ले लिया क्योंकि मैं यहाँ का राजा हूँ। महर्षि जमदग्नि का आश्रम मेरे अधिकार क्षेत्र में आता है ।

कवच को नारायण ने त्रिपुर विजय हेतु शंकर को दे दिया था। शंकर जी ने दुर्वासा को दिया। दुर्वासा ने सुश्चन्द्र को दिया। कवच के प्रसाद से वह सप्तद्वीपेश्वर सम्राट् था।

सुश्चन्द्र के मारे जाने पर उसका पुत्र पुष्कराक्ष युद्धभूमि में आ डटा। परशुराम जी ने तीन औक्षौहिणी सेना के साथ मार गिराया। जो जो राजा सहायता में आये सभी अपनी सेना के साथ मारे गये।सारी पृथिवी जीतने के बाद अश्वमेघ यज्ञकर पृथिवी दान कर दिये। स्वयं महेन्द्र पर्वत पर तपस्या करने चले गये।

द्रोणाचार्य परशुराम जी के शिष्य थे। वे महेन्द्र पर्वत पर जाकर धन की याचना किये। महादानी परशुराम जी ने कहा हिरण्य

तथा धन ब्राह्मणों को दान कर दिया हूँ। पृथिवी कश्यप को दे दिया हूँ। मेरे पास शरीर तथा अस्त्र-शस्त्र हैं। जो चाहो ले लो। द्रोणाचार्य ने कहा कि समस्त अस्त्र-शस्त्र, ससंहार, सप्रयोग तथा सरहस्य मुझे कृपा पूर्वक प्रदान करें।

## परशुराम जी का दान

परशुराम जी समस्त पृथिवी अश्वमेघ यज्ञ के बाद कश्यप को दे दिये। अस्त्र-शस्त्र सप्रयोग, सरहस्य द्रोणाचार्य को दे दिये। कर्मकाण्ड के साथ नीतिशास्त्र की भी शिक्षा दिये। ब्रह्मास्त्र भी द्रोणाचार्य को दे दिये। अश्वमेघ यज्ञ की वेदी सोने की बनी थी। जो 40 हाथ लम्बी 36 हाथ चौड़ी थी। इसे वे कश्यप जी को दे दिये। कश्यप जी के आदेश से ब्राह्मणों ने इसे खण्ड-खण्ड कर आपस में बाट लिए। स्वर्ण वेदी के खण्ड-खण्ड कर बाँटने के कारण वे सभी ब्राह्मण खण्डवायन कहे गये।

**न च रामं महावीर्यं शक्नोमि? रणमूर्धनि ।**
**विजेतुं समरे विप्रं जामदग्न्यं महाबलम् ॥**

(महाभारत उघोगपर्व ५/१८३/४)

तदनन्तर महेन्द्र पर्वत पर तपस्या करने के लिए चले गये। सिद्ध गन्धर्व तथा चारणगण सतत् उनका गुणगान करते रहते थे। आज भी भगवान् परशुराम महेन्द्र पर्वत पर विराजित हैं। इस प्रकार भृगु वंश मे विश्वात्मा भगवान् अवतार धारण कर बहुत से आततायी राजाओं को मारकर पीड़ित पृथिवी के भार को दूर किये।

**एवं भृगुषु विश्वात्मा भगवान् हरिरीश्वर ।**
**अवतीर्य परं भारं भुवोऽहन् वहुशो नृपान् ॥**

(श्रीमद्भागवत् ९/१६/२७)

## परशुराम जी के द्वारा भारत की सीमा का विस्तार

कश्यप जी सारी पृथिवी दान में ले लिए, तब उन्होंने परशुराम जी से कहा- अब तुम मेरी आज्ञा से इस पृथिवी से निकल जाओ और कहीं अन्यत्र जाकर निवास करो।

कश्यप जी के इस आदेश के बाद परशुराम जी एक वाण समुद्र में फेक दिये। जितना दूर वह वाण गया उतना दूर समुद्र पीछे हट गया। समुद्र को हटाकर, ब्राह्मण की आज्ञा का पालन करते हुए उत्तम गिरि महेन्द्र पर्वत पर निवास करने लगे। यह भूभाग भारत की सीमा में बढ़ाये थे।

चोरों से रहित इस पृथिवी को बनाकर साधुजनों की रक्षा करते हुए सैकड़ो यज्ञों द्वारा भगवान का पूजन कर पृथिवी दान कर दिये। यथा-

**निर्दस्युं पृथिवीं कृत्वा शिष्टेष्टजन संकुलाम् ।**
**कश्यपाय ददौ रामो हयमेधे महामखे ॥**

(महाभारत ४/७०/१९)

## शूर्पारक क्षेत्र

जो भूमि परशुराम जी वाण चला कर रिक्त कराये थे वह शूर्पारक देश के नाम से प्रसिद्ध हुआ। उसे **उपरान्त भूमि** भी कहा जाता है।

## नये राजतंत्र का उदय

काल क्रम से दुरात्मा राजा प्रजा को अपने अत्याचारों से पीड़ित करने लगे। सर्वत्र हाहाकार, आर्तनाद तथा उथल-पुथल मच गया। धर्मरक्षक, प्रजापालक, राजा स्वयं अत्याचार तथा पाप में डूब गये। इससे आक्रान्त होकर पृथिवी पाताल में जाने लगी। पृथ्वी को

रसातल की तरफ भागते हुए देखकर कश्यप जी अपने उरुओं की सहायता से इसे रोक लिए। पृथिवी स्थिर होकर रह गई। इस कारण पृथिवी को उर्वी भी कहा गया जाता है। तदनन्तर पृथिवी कश्यप जी से बोलीं- महात्मन् ! आप अनेक परमार्थी वीर पुरुषों को छिपाकर रखें हैं जो मेरी रक्षा कर सकते हैं। आप उन्हें मुझे दे दीजिए जैसे- पुरुवंशी विदूरथ, सौदास पुत्र, शिवि पुत्र, गोपति, प्रतर्दन, पुत्र दधिवाहन आदि अनेक हैं। पृथिवी की इच्छानुसार कश्यप जी ने इनका राज्याभिषेक कर राज्यपाट दिया और वे धर्म से पृथिवी का पालन करने लगे। इस प्रकार नये राजतंत्र का उदय हुआ।

## भगवान् परशुराम के अन्य पुरूषार्थ

महाशक्तिशाली परशुराम जी ने दस्यु सदृश शासकों से रहित कर अश्वमेघ यज्ञकर कश्यप को सारी पृथिवी दान में दे दिये-

**सर्वानष्टादशद्वीपान् वशमानीय भार्गवः ।**
**ईजे क्रतुशतैः पुण्यैः समाप्तवर दक्षिणैः ॥**

(महाभारत द्रोणपर्व ४/७०/१५)

अठारह द्वीपों को अपने वश में करके उत्तम दक्षिणाओं से युक्त सौ पवित्र यज्ञों का अनुष्ठान किये-

**एवं गुणशतैर्युक्तो भृगूणां कीर्तिवर्धनः ।**
**जामदग्न्योह्यतियशाश्चिरजीवी महाद्युतिः ॥**

(महाभारत द्रोणपर्व ४/७०/२३)

परशुराम जी के आचरण को देखकर देवताओं ने कहा अहो! यह मनुष्यलोक धन्य है। इस भूतल के मनुष्य भाग्यवान हैं। जहाँ द्विजवर परशुराम जी ने ऐसा धर्म सङ्गत कार्य किया। यथा-

**अहो धन्यो नृलोकोऽयं सभाग्याश्च नरा भुवि ।**
**यत्र कर्मेदृशं धर्म्यं द्विजेन कृतमित्युत ॥**
(महाभारत शान्तिपर्व ५०/४)

## गोकर्ण क्षेत्र का उद्धार

गोकर्ण क्षेत्र समस्त देवताओं से पूजित सार्द्धयोजन विस्तृत पश्चिम समुद्र के किनारे स्थित था। वहाँ असंख्य तीर्थ थे। उसमें मुनि, देवता, सिद्ध, प्रमथ, पितृगण तथा भूतगण निवास करते थे। माता पार्वती के साथ शंकर जी भी निवास करते थे। यहाँ अन्य क्षेत्र की अपेक्षा अधिक मात्रा में दान, जप, होम, पितृदेव द्विजार्चन अधि क मात्रा में होता था। अगस्त ऋषि द्वारा समुद्र जल पी लेने के बाद वहाँ सूखा हो गया। सगर पुत्रों ने अश्व का पता लगाते समय खनन करते हुए उस क्षेत्र को गर्त बना दिया। वहाँ के तीर्थ आश्रम कानन भूभाग पुर ग्राम का अधो:पतन हो गया। भगीरथ द्वारा गंगा के लाने के बाद महागर्त बना दिया। समुद्रीभाग जलमग्न हो गया। गोकर्ण क्षेत्र भी जलमग्न हो गया। वहाँ के निवासी, देव, दनुज, नर, पितृ प्रभृति सभी जीव धारी यत्र-तत्र भटकते हुए सह्यादिपर्वत पर अपना निवास बनाये।

जब वे सुने कि परशुराम जी युद्ध विराम कर तपस्या हेतु महेन्द्र पर्वत पर निवास कर रहे हैं। तो वे सभी शुष्क सुमित्र आदि ऋषिगण परशुराम जी का दर्शन करने हेतु महेन्द्राचल पर्वत पर गए।

शिष्यों सहित उनका दर्शन कर वन्दना किए। परशुराम जी ने अर्घ्य पाद्य से पूजन कर उनका स्वागत किया। आने का कारण भी पूछा। ऋषियों ने कहा कि हम गोकर्ण क्षेत्र के वासी हैं। अपनी पूरी कथा उनसे सुनायें, यह भी कहें कि समुद्र जल हट जाय और हम अपना क्षेत्र पाना चाहते हैं। आप भृगुकुल में उत्पन्न विष्णु के

अवतार हैं, हमारा दुःख दूर करें। त्रैलोक्य में कुछ भी करना आप के लिए कठिन नहीं है। इस लोक में वाञ्छित फल देने वाले आप ही हैं। हम यही याचना करने आये हैं कि समुद्रजल हटाकर हमारा पवित्र गोकर्ण क्षेत्र हमें दें।

परशुराम जी ने कहा– यह कार्य अत्यन्त दुरूह है। बिना शस्त्रग्रहण किए हो नहीं सकता है। मैं पितरों के आदेश से शस्त्र का परित्याग कर पृथिवी पर शान्ति स्थापित कर तपस्या हेतु यहाँ निवास कर रहा हूँ। आप का मनोरथ जान कर मेरा मन विचलित हो रहा है–

**किं तु युष्मदभिप्रेतं कर्मलोकेसुदारुणम् ।**
**शस्त्र ग्रहणाच्छक्यं मयाऽपि न तदन्यथा ॥**
**दत्तसर्वामयोऽहं वै न्यस्तशस्त्रः शमान्वितः ।**
**तपः समास्थितश्चर्तु प्रागवे पितृ शासनात् ॥**
**न जातु शस्त्र ग्रहणं करिष्यामीत्यहं पुरा ।**
**प्रतिश्रुत्य सतां मध्ये तपः कर्त्तुमिहानघाः ॥**
**शस्त्रग्रहणसाध्यत्वाद्युष्मदीप्सितवस्तुनः ।**
**किं कर्तव्यं मयात्रेति मम डोलायते मनः ॥**

(ब्रह्माण्डपुराण २/५७/१९–२२)

शुष्क ऋषि ने कहा–धर्म एवं सज्जनों की रक्षा हेतु शस्त्र आपको ग्रहण करना चाहिए। हम सबके हित के लिए शस्त्र ग्रहण कीजिए। आप धर्म का ही आचरण करेंगे।

परशुराम जी धर्म समझकर सह्यादिपर्वत पार किए तथा मुनियों के साथ दक्षिण पश्चिम समुद्र तट पर आ गये। वरुण को बुलाये पर वरुण सुने नहीं और न आये।

परशुराम जी आचमन कर विजयधनु हाथ में लिए शंकर जी की स्तुति कर धनुष टंकार किए। अत्यन्त भयंकर नाद हुआ। वाण चढ़ाकर संधान किए। उस समय उनका रूप सूर्य सदृश तेजस्वी, कल्पान्त, अग्नि सदृश भयंकर, नरसिंह सदृश क्रुद्ध दिखाई देने लगे। वरूण, यम सदृश भयंकर कालरूप परशुराम जी को देखकर भीरु बनकर धीरता त्यागकर चरणों में गिरकर शरणागत बन गये। क्षमा याचना करने लगे कहे कि जो आपका आदेश होगा सब पालन करूँगा, मुझे अभयदान दीजिए।

परशुराम जी ने कहा- गोकर्ण क्षेत्र के ऋषि-मुनि महेन्द्र पर्वत पर मुझसे मिलने आये थे। राजा सगर के पुत्रों ने अश्व का पता लगाते हुए इस क्षेत्र का उत्खनन कर गड्ढा बना दिया था। तुम समुद्र में मिला लिए। पूरा गोकर्ण क्षेत्र जलमग्न बन गया। इसे खाली कर ऋषियों को दे दो। वरुण स्वीकार कर लिए। कितना खाली किया जाय इसका प्रमाण परशुराम जी से माँगे। परशुराम जी स्रुवा फेंककर क्षेत्र का निर्धारण कर दिये। यथा-

**तस्माद्यावत्प्रमाणं मे भवान्सङ्कल्पयिष्यति ।**
**तावत्संधारयिष्यामि भूमौ सलिलमात्मनः ॥**

(ब्रह्माण्डपुराण-२/५८/१२)

प्रथम बार में श्रुव फेंककर २०० योजन, द्वितीय बार में ४०० योजन, तृतीय बार में ६०० योजन समुद्र जल का माप किए। वरूण इतनी भूमि रिक्त कर ऋषियों को समर्पित किए। वह क्षेत्र सुर्पारक के नाम से प्रसिद्ध है। आज भी परशुराम जी के पौरूष पराक्रम का प्रमाण बना है। इस प्रकार परशुराम जी भारत की सीमा क्षेत्र का भी विस्तार किए हैं। उस क्षेत्र में अनेक धर्मस्थल, मन्दिर तथा पूजाक्षेत्र बने हुए हैं।

**एवं रामेण जलधेः पुनः सृष्टा वसुन्धरा ।**
**दक्षिणोत्तरतो राजन् योजनानां चतुः शतम् ॥**
**नाति क्रामति सोऽद्यापि सीमानं पयसां निधिः ।**
**कृतं रामेण महता न तु सज्यं महद्धनुः ॥**

(महाभारत द्रोणपर्व)

परशुराम जी महेन्द्रपर्वत पर चले आये अपनी तपस्या में लग गये।

## काशीराज की असहाय कन्या अम्बा की सहायता

काशीराज की कन्या अम्बा राजकुमार साल्व से विवाह करना चाहती थी। हठात् भीष्म अपहरण कर लाये। विवाह भी उसके साथ नहीं किए। उसे परित्यक्ता बना दिये। असहाय अम्बा परशुराम जी के पास आई और अपनी पीड़ा कह सुनाई। परशुराम जी भीष्म से विवाह हेतु कहे परन्तु वे स्वीकार नहीं किये। अतः नारी कल्याण हेतु भीष्म के साथ परशुराम जी का 23 दिन तक भयंकर युद्ध हुआ। परशुराम जी भीष्म को मारने ही वाले थे कि इसी बीच पितर देवता तथा माता गंगा आकर युद्ध बन्द करने हेतु आग्रह की। गंगा के आग्रह से युद्ध समाप्त हुआ।

**न हि मां क्षत्रियः कश्चिद्वीर्येण व्यजचेद्युधि ।**
**ऋते ब्रह्मविदस्तात तपसा संसितव्रतात् ॥**

(महाभारत उद्योगपर्व १८७/१५)

यह कह कर भीष्म ने अपनी पराजय परशुराम जी से स्वीकार कर ली। गंगा जी ने भीष्म से कहा–

**किन्न वै क्षत्रियहणो हरतुल्यपराक्रमः ।**
**विदितः पुत्र रामस्ते यतस्त्वं योद्ध मिच्छसि ॥**

(महाभारत ५/१७९)

गंगा ने कहा- भीष्म ! तुम राम के पराक्रम को जानते थे तो भी क्यों उनसे युद्ध किये।

भीष्मजी ने परशुराम जी से कहा - परशुराम के पास रथ, घोड़े, सारथि नहीं है? कैसे युद्ध करेंगे?

परशुराम जी ने कहा-भीष्म मेरा रथ पूरी पृथिवी है। मेरे घोड़े चारो वेद हैं। वायु मेरा सूत है। वेदमातायें मेरी कवच हैं। हे कुरू नन्दन! मैं इनसे युक्त होकर युद्ध करूँगा। यथा-

**ततो ममब्रवीद्रामः स्मयमानो रणाजिते ।**
**रथो मे मेदिनी भीष्म वाहा वेदाः सदश्ववत् ॥**
**सूतो मे मातरिश्वा वे कवचं वेदमातरः ।**
**सुसंवीतो रणे ताभिर्यौत्स्येऽहं कुरुनन्दन ॥**

(महाभारत उद्योगपर्व १८०/३-४)

## परशुराम जी का उद्देश्य

परशुराम जी पृथिवी को सुखी बनाना चाहते थे। वे त्याग की मूर्ति थे। पृथिवी की परिस्थिति देखने के लिए ही बराबर भ्रमण भी करते थे। यदि उनकी इच्छा होती तो अनेक युगों तक पृथिवी के चक्रवर्ती सम्राट बने रहते क्योंकि वे चिरंजीवी हैं। परशुराम जी युगों-युगों तक पृथिवी का शासन करते रहते। सारी पृथिवी जीतने के बाद भी अश्वमेघ यज्ञ कर पृथिवी का दान कश्यप को कर दिये।

## पृथिवी दान का उद्देश्य

सर्वविध पृथिवी को सुखी करने हेतु नए राजतंत्र की स्थापना करना था।

**रामोऽपि हत्वा दितिजानभ्यनुज्ञाप्य चामरान् ।**
**स्वमाश्रयं सभापेदे तपस्यासक्तमानसः ॥**

(ब्रह्माणपुराण २/२४/८६)

परशुराम जी कार्तवीर्य के साथ उसके सभी सहायक राजाओं को मारकर प्रसन्नता के साथ नर्मदा नदी में स्नान किये।

## जमदग्न्य राम का परशुराम नामकरण

**त्रिस्सप्तकृत्वोनिर्भूपांमहीं दृष्ट्वा महेश्वरः ।**
**रमणंतेनपरशुरामंदृष्ध्वाचकातरम् ॥**

(ब्रह्मवैवर्तपुराण पुराण ३/४०/७६)

जामदग्न्य राम पृथिवी पर इक्कीस बार राजाओं से युद्ध कर विजय प्राप्त कर पृथिवी को सुखी किये। उनके परसे के साथ युद्धभूमि में पराक्रम को देखकर भगवान शंकर ने उनका नाम परशुराम रख दिये। तब से भगवान जामदग्न्य राम परशुराम कहे जाने लगे ।

**एवं भृगुषु विश्वात्मा भगवान् हरिरीश्वरः ।**
**अवतीर्य परं भारं भुवोऽहन् वहुशो नृपान् ॥**

(श्रीमद्भागवतपुराण ९/१६/२७)

इस प्रकार विश्वात्मा भगवान् भृगुवंश में अवतार लेकर अत्याचारी राजाओं के अत्याचार से पृथिवी को मुक्त कर सुखी बनाये।

**ब्राह्मणं पूजयामास यथावद्गुरुणासह ।**
**अलंकृत्य यथान्याय कन्यां रूपवतीं महीम् ॥**
**पुरग्रामशतोपेतां समुद्रांबरमालिनिम् ।**
**आहूय भृगुशार्दुलः सशैलवन काननाम् ॥**
**कश्यपाय ददौ सर्वामृते तं शैलमुत्तमम् ।**
**आत्मनः सन्निवासार्थ तं रामः पर्यकल्पयत् ॥**
**ततः प्रभृतिराजेन्द्र पुजयामास शास्त्रतः ।**
**हिरण्यरत्लवस्त्रश्वगोगजान्नादिभिस्तथा ॥**

**पुरा समाप्य यज्ञान्ते तथा चावभृथाप्लुतः ।**
**चक्रे द्रव्य परित्यागं तेषामनुमते तदा ॥**

(ब्रह्माण्ड पुराण ३/४७/५२-५६)

पूरी पृथिवी को सुखमय बनाकर गुरु के साथ ब्रह्मा का पूजन किये। कन्या के रूप में पृथिवी को अलंकृत कर सैकड़ों पुरग्रामों से युक्त समुद्र वस्त्रमाला वाली पर्वत तथा वनों से युक्त समस्त पृथिवी कश्यप को प्रदान कर दी। केवल उत्तम महेन्द्र पर्वत को छोड़कर उसे अपना निवास हेतु बनाया। पितरों की आज्ञा पालन कर शस्त्रों का परित्याग कर दिया।

**दत्त्वा च सर्वभूतानामभयं भृगुनन्दनः ।**
**तत्रापि पर्वतवरे तपश्चर्तुं समारभत् ॥**

(ब्रह्माण्ड पुराण ३/४७/५७)

समस्त प्राणियों को अभयदान देकर महेन्द्र पर्वत पर तपस्या करना प्रारम्भ कर दिये।

## शंकर जी का पुनः परशुराम जी को वरदान देना।

परशुराम जी के नाम का उच्चारण कर जो कोई भी व्यक्ति जिस कार्य को प्रारंभ करेगा। वह समस्त कार्य पूर्ण हो जायेगा। यथा-

**भवतोर्नाम चोच्चार्य यत्कार्यं यः समारभेत् ।**
**सिद्धिं प्रयातु तत्सर्वं मत्प्रसादाद्धि तस्य तु ॥**

(ब्रह्माण्ड पुराण २/४३/२२)

## शंकर जी का पुरशुराम जी को दूसरा वरदान देना

आज से इस संसार में परशुराम जी से बढ़कर दूसरा कोई बलवान तथा तेजस्वी जन्म नहीं लेगा। यथा-

**अद्यप्रभृति लोकेऽस्मिन् भवतोवलवत्तरः ।**
**न कोऽपि भवताद् वत्स तेजस्वी च भवत्तरः ॥**

(ब्रह्माण्ड पुराण २/४३/२८)

भगवान् विष्णु का कोई भी अवतार ऐसा अद्‌भुत पराक्रम पूर्ण कार्य नहीं किया है। इस प्रकार परशुराम जी की त्रिलोकों में प्रसिद्धि हो जाती है। उनके पवित्र नाम का जप होता है। नाम जपने वाला साधक चिरायु प्राप्त करेगा तथा सभी विद्याओं में पारंगत हो जायेगा। यथा–

**यो वै विप्रः पठेन्नित्यं शतकं भार्गवस्य हि ।**
**विद्याचतुर्दशत्वञ्च चिरमायुष्यमाप्नुपात् ॥**

## परशुराम जी को वरदान में शंकर जी से प्राप्त अस्त्र–शस्त्र समूह

सहस्रार्जुन माता भद्रकाली का परम भक्त था। भद्रकाली ने युद्धभूमि में स्वयं प्रगट होकर उसकी सहायता में युद्ध करने लगी। उसे मारना परशुराम जी के लिए कठिन हो गया। उद्‌विग्न होकर भगवान शंकर की प्रार्थना किए वे स्वयं प्रकट होकर नाना प्रकार अस्त्र–शस्त्र समूह का ज्ञान कराये तथा सहस्रार्जुन को मारने का वरदान दिये। भगवान् शिव ने कहा तुम मेरे परम प्रिय पुत्र समान प्रिय शिष्य हो। तुम्हें मंत्र तथा कवच दूँगा जिससे सहस्रार्जुन को सरलता से मार सकोगे। तुम्हारे यश से संसार पूर्ण हो जायेगा। ऐसा कहकर शंकर जी परशुराम जी को सुदुर्लभ मंत्र, परम अद्‌भूत त्रैलोक्य विजय कवच, पुरश्चरण पूर्वक स्तुति, देवताओं की पूजा विधि मंत्र सिद्धि का अनुष्ठान, नियमबद्ध सिद्धि का स्थान काल ज्ञान, संख्याज्ञान, समग्रवेद वेदाङ्ग आदि का अध्यापन कराया।

नागपाश, पाशुपतास्त्र, ब्रह्मास्त्र, नारायणास्त्र, आग्नेयास्त्र, वायव्यास्त्र, वारुणास्त्र, गान्धर्वास्त्र, जृम्भास्त्र, गदा शक्ति, परशुशूल इत्यादि का शस्त्रास्त्रों का प्रयोग तथा संघार विधि का ज्ञान कराया तथा, असंख्य वाण, आत्मरक्षा संधाव, संग्राम विजय, मायायुद्ध की विधि परशुराम जी को दिये तथा अभय चिरंजीवी होने का वरदान भी दिये।

## गणेश जी का एक दन्त होना

परशुराम जी जब गणेश जी का दाँत तोड़कर एक दन्त बना दिये तो माता पार्वती बड़ी दुःखित तथा क्रोधित हुई और परशुराम जी को श्राप देने के लिए उद्यत हो गईं। यह दृश्य देखकर परशुराम जी माता पार्वती की स्तुति कर उन्हें प्रसन्न किये तथा सर्वत्र विजयी होने का और अमर होने का वरदान भी प्राप्त किये।

परशुराम जी माता पार्वती की स्तुति किये हैं-

**रक्ष रक्ष जगन्मातरपराधं क्षमस्व मे ।**
**शिशूनामपराधेन कुतोमाता हि कुप्यति ॥**

(ब्रह्मवैवर्तपुराण ३/४५/५७)

## पार्वती जी का वरदान

**श्रीकृष्णस्य च भक्तस्त्वं शिष्यो वै शंकरस्य च ।**
**गुरूपत्नीं स्तौषि यस्मात् कस्त्वां हन्तुमिहेश्वर ॥**

(ब्रह्मवैवर्त पुराण ३/४९/६२)

## परशुराम जी का राक्षसों से भयंकर युद्ध

राक्षसों से भी परशुराम जी का भयंकर युद्ध हुआ। दश सहस्र सिंहिका राक्षसी के पुत्रों से जो सैंहिकेय कहे जाते थे, शंकर जी के आदेश से, भयंकर युद्ध हुआ तथा इन्हें मारे। ये देवताओं से नष्ट होने योग्य नहीं थे-

इत्योते सिंहिकापुत्रा देवैरपि दुरासदाः ।
दारुणाभिजनाः क्रूराः सर्वे ब्रह्मणश्चते ॥
दश तानि सहस्राणिसैंहिकेया गणाः स्मृताः ।
निहता जामदग्न्येन भार्गवेण बलीयसा ॥
(ब्रह्माण्डपुराण २/६/२१-२२)

## परशुराम जी की तपस्या का स्वरूप

पूजयामास देवेशमेकाग्रमनसा नृप ।
अनिकेतः स वर्षासु शिशिरे जलसंश्रयः ॥
ग्रीष्मे पंचाग्निमध्यस्थश्चचारैवं तपश्चिरम् ।
रिपुन्निर्जत्य कामादीनूर्मिषषट्कं विधुय च ॥
(ब्रह्माण्डपुराण २/२२/७१-७२)

## परशुराम जी के प्रसिद्ध शिष्य

वेद-वेदाङ्ग के अतिरिक्त युद्ध विद्या के भीष्म, द्रोण तथा कर्ण जगत् विख्यात शिष्य थे। जो अजेय तथा महारथी कहलाते थे।

भगवती दुर्गा द्वारा चाक्षुस मनवन्तर में चण्ड-मुण्ड, शुम्भ-निशुम्भ, रक्तवीर्य आदि आसुरों के मारे जाने पर भी पुनः दूसरे जन्म में असुरों ने उद्दण्ड राजाओं के रूप में विश्व में अधर्म तथा अशान्ति का साम्राज्य स्थाापित कर दिया था। उन्हें ही मारने के लिए भी भगवान् परशुराम का अवतार हुआ था।

जब रावण आदि राजाओं के अत्याचार से पृथिवी तथा त्रैलोकी पीडित थी। उस पीड़ा को दूर करने हेतु सीता और राम के रूप में भगवान विष्णु एव लक्ष्मी का अवतार हुआ। दुर्तान्त उच्छृङ्खल नृपतियों के अत्याचारों को नष्ट करने हेतु विष्णु तथा लक्ष्मी का अवतार श्रीकृष्ण तथा रूक्मिणी के रूप में हुआ और वे महाभारत युद्ध कराकर उन अत्याचारी राजसमूह का सर्वनाश कराये। इसी तरह पृथिवी की रक्षा हेतु भगवान परशुराम इनसे पूर्व

वैवस्वत मन्वन्तर १९वें चतुर्युग के १९वें त्रेता युग में भगवान परशुराम का अवतार हुआ।

**भृगोः ख्यात्यां समुत्पन्ना श्रीः पूर्वमुदधेः पुनः ।**
**देवदानवयत्नेन प्रसूताऽमृतमन्थने ॥**
**एवं यदा जगत्स्वामी देवराजो जनार्दनः ।**
**अवतारः करोत्येषा तथा श्रीस्तत्सहायिनी ॥**
**पुनश्चपद्मा सम्भुता यदाऽदित्योऽभवद्धरिः ।**
**यदा च भार्गवो रामस्तदाभूद् धरिणीत्वियम् ॥**
**राघवत्वेऽभवत्सीता रूक्मिणी कृष्णजन्मनि ।**
**अन्येषु चावतारेषु विष्णोरेखाऽनपायिनीः ॥**

(विष्णुपुराण १/९/१४१-१४४)

## परशुराम जी की उदारता तथा दानशीलता

परशुराम जी हजारों यज्ञ कर ब्राह्मणों को अपार धन दान में दिये।

**इष्ट्वा क्रतुशतैर्वीरो ब्राह्मणेभ्योह्यमन्यत ।**

(महाभारत द्रोणपर्व)

परशुराम जी की माता पिता तथा गुरु में अपार भक्ति थी। संसार सुख में निमग्न न रहकर पृथिवी को पापभार से मुक्त करने के लिए संसार सम्बन्धी सुख मे तल्लीन न होने के लिए धन संग्रह नहीं किए और न अपनी गृहस्थी बसाये। भगवान् परशुराम की दान शीलता प्रसिद्ध है।

**स शुश्राव महात्मानं जामदग्न्यं परंतपम् ।**
**ब्राह्मणेभ्यस्तदा राजन्दित्सन्तं वसु सर्वशः ॥**

(महाभारत आदिपर्व १२१/१६)

द्रोणाचार्य के धन माँगने पर परशुराम जी ने कहा कि हिरण्य आदि सभी धन ब्राह्मणों को दे दिया हूँ। पुर नगर वन नदी

युक्त सारी पृथिवी कश्यप को दे दिया हूँ। अब मेरे पास मेरे शरीर तथा अस्त्र-शस्त्र शेष है। जो माँगिये वह दूँगा।

द्रोणाचार्य ने कहा- भगवन्! प्रयोग संहार रहस्य सहित सभी अस्त्र-शस्त्रों का ज्ञान दीजिए। यही वर मैं माँग रहा हूँ। श्रीपरशुराम जी सम्पूर्ण धनुर्वेद तथा ब्रह्मास्त्र भी द्रोणाचार्य को दे दिये। अन्त में शंकर जी का दर्शन कर उनका आशीर्वाद लेकर तपस्या में संलग्न हो गये।

**हिमाद्रेर्दक्षिणे भागे रामोनाम महातपाः ।**
**मुनिपुत्रोऽति तेजस्वी मामुद्दिश्य तपस्यति ॥**

(ब्रह्माण्डपुराण ३/२४/५१)

इस प्रकार महामहोपाध्याय **श्रीकेदारनाथ द्विवेदी** 'वेदाचार्य' प्रणीत एवं विद्यावाचस्पति प्रो. देवेन्द्र प्रसाद मिश्र द्वारा सम्पादित **भगवान् श्रीपरशुराम एवं सोहनाग धाम** ग्रन्थ का 'श्रीपरशुराम चरित की व्यापकता' नामक पञ्चमाध्याय समाप्त ॥ ५ ॥

**प्रीणातु भगवान् वेदः प्रीणन्तु सर्वदेवताः ।**
**प्रीणन्तु पितरः सर्वे प्रीणन्तु च महर्षयः ॥**
**॥ बलं विष्णोः प्रवर्धताम् ॥**

# षष्ठ-अध्याय

# परशुराम जी से सम्बन्धित महत्वपूर्ण स्थान

## महेन्द्राचल

भगवान् परशुराम चिंरजीवी हैं और उनके आज भी धरती पर होने से जुड़े प्रमाण यत्र-तत्र प्राप्त होते हैं। महेन्द्रगिरि उड़ीसा के गजपति जिले के परालाखेमुंडी में स्थित है। यह स्थान अपने आप में कई विशेषताओं और रहस्यों को समेटे हुए है। इस पर्वत से कई ऐतिहासिक कहानियां जुड़ी हैं और कई धार्मिक मान्यताएं भी इस पर्वत की कहानियां कहती हैं। ऐतिहासिक और धार्मिक दोनों ही दृष्टि से यह पर्वत महत्वपूर्ण है। महेन्द्रगिरि रामायण, महाभारत काल की कईं कथाओं से जुड़ा हुआ है। इस पर्वत के बारे में सबसे अधिक प्रचलित कथा के अनुसार सम्पूर्ण पृथ्वी को राजाओं से जीत कर महर्षि कश्यप जी को दान में देने के पश्चात् भगवान् परशुराम तपस्या के लिए महेन्द्राचल चले गए थे और ये उनकी तपस्या की जगह बन गई। महेन्द्रगिरि भगवान् परशुराम की तपस्थली है।

ऐतिहासिक और धार्मिक दृष्टि के साथ-साथ यह स्थान खूबसूरत प्राकृतिक सौन्दर्य की भी गवाही देता है, जिससे इसकी मनोहारिणी छवि देखते ही बनती है। समुद्र, नदियाँ और हरा-भरा पर्वतीय क्षेत्र इसकी रमणीयता को द्योतित करता है। यह पहाड़ और यहां के मंदिर भी काफी प्रसिद्ध हैं और श्रध्दालु मन में ढ़ेरों प्रार्थनाएं लिए यहां दर्शन के लिए आते हैं। भक्तों को यह विश्वास

रहता है कि उनकी प्रार्थनाएं स्थान देवता अवश्य सुनेंगे। कुछ आस्थावान आंगतुक भक्तों का कहना है कि इस पर्वत पर आज भी रेणुकानन्दवर्धन श्रीपरशुरामजी का दर्शन कभी-कभार होता है। इस पर्वत पर महाभारत कालीन अनेकों मंदिर आज भी विद्यमान हैं, जिनमें माता कुंती, धर्मराज युधिष्ठिर, महाबली भीम के अतिरिक्त श्रीदारु ब्रम्हा के मंदिर अत्यन्त प्रसिद्ध हैं। लोक मान्यता है कि इन मंदिरों का निर्माण पाण्डवों ने कराया था। इस पर्वत शिखर तक पहुंचने के लिए तीन मार्ग हैं, जिनसे यहां पहुंचा जा सकता है।

## माहिष्मती नगरी

मध्यप्रदेश के खरगौन जिले मे नर्मदा नदी के तट पर स्थित है। राजा साहस्रार्जुन की राजधानी है। माहिष्मती नगरी की गणना काशी, प्रयाग आदि तीर्थो की श्रेणी में की जाती है।

## विराटनगर

वनवास के समय पाण्डव यहाँ निवास किये थे। यह जम्बू प्रदेश के समीप में है।

## परशुराम कुण्ड

यह अरुणाचल प्रदेश में है। यहाँ भारत, वर्मा तथा चीन की सीमायें मिलती है। ब्रह्मपुत्र नदी भी भारत में यहीं से प्रवेश करती है। ब्रह्मपुत्र नदी की विशाल जलराशि एक जगह सिमट कर एक विशाल झील के रूप में निर्मित हो जाती है। जिसे ब्रह्मकुण्ड कहा जाता है। परशुराम जी ने पर्वत को काटकर ब्रह्मपुत्र नदी को भारतवर्ष में बहवाया। अरुणाचल प्रदेश में यह नदी एक विशाल सरोवर बनाती है। जिसे परशुराम कुण्ड कहा जाता है। पूर्व दिशा में यह अन्तिम हिन्दूओं का तीर्थ है। यहाँ अमावस्या, पूर्णिमा तथा संक्रान्ति के समय में स्नान, दान, जप आदि पुण्य के काम करते हैं।

## भृगुकच्छ

यह क्षेत्र गुजरात प्रान्त में है। इस समय इसका नाम भड़ौच है। नर्मदा नदी के मुहाने पर स्थित है। भृगुजी का यह आवास क्षेत्र है। यहाँ के चन्द्रमौली महादेव भार्गवों के कुलदेवता हैं। भड़ौच बन्दरगाह व्यापारिक दृष्टिकोण से भी प्रसिद्ध है।

## शूर्पारक क्षेत्र

इसे इस समय वसई के नाम से जाना जाता है। केरल कोंकण गोवा के साथ इसे समुद्र से खाली कराकर परशुराम जी ऋषियों को तपस्या के लिए आश्रम बनाकर रहने हेतु दिये थे। यहाँ विमल सरोवर तथा विमलेश्वर महादेव का मंन्दिर है। माता रेणुका की सहयोगिनी ६४ योगिनियों १० पुष्करिणियों की स्थापना भी परशुराम जी किये थे।

## कोंकण तथा गोमान्तक क्षेत्र

दक्षिण भारत में महाराष्ट्र में कोंकण, गोवा तथा कर्णाटक मे कनारा जिले को परशुराम सृष्टि कहा जाता है। उत्तर से दक्षिण तक ५०० कि. मी. लम्बी तटरेखा का भूभाग परशुराम सृष्टि कहा जाता है। यहाँ के गौडं सारस्वत पंक्तिपावन ब्राह्मणों को परशुराम जी बसाये थे, जिन्हें ये ब्राह्मण अपना कुलदेवता मानते हैं।

## चिपलून का पर्वतीय क्षेत्र

यह क्षेत्र परशुराम पर्वत कहा जाता है। परशुराम जी का यह स्थान है महाराष्ट्र के रत्नागिरि जिले में चिपलून के समीप स्थित है।

## केरल

यह राज्य दक्षिण भारत में स्थित है। केरल भगवान् परशुराम जी का अपना क्षेत्र है। इस भूमि को वे सागर में **स्रुवा** फेंककर

सागर से प्राप्त किये थे। पूरे केरल क्षेत्र का इतिहास परशुराम जी से ही प्राप्त होता है। यहाँ वे ६४ ब्राह्मण परिवारों को बसाये हैं। इन्हें नम्बूदरीपाद ब्राह्मण कहा जाता है। ये ब्राह्मण वेद विद्या के पारंगत विद्वान होते हैं। वे अपना आदि पुरुष परशुराम जी को ही मानते हैं।

## माहुरगढ़

इसका प्राचीन नाम मातृपुरा है। देवी भागवत के अनुसार सह्यदि पर्वत पर माता रेणुका का स्थान है। माता रेणुका दशमुख ब्राह्मणों की कुल देवी हैं।

## गोवा गोमान्तक

गोवा में एक गांव है कुडथाल। इसे कुट्ठाल भी कहते हैं। इसका प्राचीन नाम कुशस्थल है। इस गांव में **मंगेश महादेव** का विशाल मन्दिर था, परन्तु पुर्तगालियों के शासनकाल में मन्दिर को नष्ट कर दिया गया। इस महादेव मन्दिर का भगवान् परशुराम से विशेष सम्बन्ध है। भगवान् परशुराम ने अनेक महायज्ञों का अनुष्ठान किया था, उसी क्रम में एक महारुद्र यज्ञ इसी सह्याद्रि पर्वत क्षेत्र में सम्पन्न कराया था। गोवा में भगवान परशुराम ने गौड़ सारस्वत ब्राह्मणों के ६६ गाँव बसाये थे।

## गोकर्ण

कर्णाटक में जिला उडुपी का कोल्लुरू तथा दक्षिण कनारा का क्षेत्र गोकर्ण क्षेत्र है। परशुराम जी वरुण से कहकर इस क्षेत्र को सागर से खाली कराकर ऋषियों को बसाये थे। करावती कर्णाटक का क्षेत्र आज भी परशुराम जी की गाथा का प्रतिदिन गायन करता है।

## रेणुका क्षेत्र

हिमाचल प्रदेश के सिरमौर जिला में रेणुका क्षेत्र स्थित है। यहाँ पर भव्य एवं मनोहारी रेणुका नामकी झील है। यह झील देवी के रूप में परिलक्षित होती है। इस स्थान में महर्षि जमदग्नि के साथ उनकी आह्लादिनी पत्नी भगवती रेणुका जी ने तपस्या किया था। साथ-साथ रेणुकानन्दवर्धन परशुराम जी भी यहाँ बहुत वर्षों तक रहे हैं। इस स्थान में आज भी भगवती रेणुका माता और श्रीपरशुरामजी का मन्दिर आस-पास में बना हुआ है।

रेणुका झील समुद्र तल से ६७२ मीटर ऊपर है। रेणुका झील नाहन से ३७ किमी दूर और पाँवटा साहिब से ६० किलोमीटर दूर स्थित है, जो २.५ किमी दूर है। हिमालय के हरे भरे वनों के बीच स्थित, झील का परिवेश पर्वतारोहण जैसे साहसिक खेलों के लिए पर्यटकों के लिए एक उत्कृष्ट स्थान प्रदान करता है। रेणुका झीलों के आसपास के पहाड़ पौधों और पशु जीवन के विभिन्न प्रकारों का समर्थन करते हैं। वर्तमान में इस क्षेत्र में जंगली जीवन की बहुतायत की उपलब्धता को देखते हुए, हिमाचल प्रदेश की राज्य सरकार ने एक मिनी चिड़ियाघर का निर्माण किया है। सार्वजनिक दृश्य के लिए चिड़ियाघर में विभिन्न प्रकार की प्रजातियां हैं, उनमें से कुछ हिमालयी काली भालू, हिरण, और कई अन्य विशिष्ट प्रजातियां हैं। हिमाचल प्रदेश के लोकप्रिय मंदिरों में से एक रेणुका झील के तट पर स्थित है।

मां रेणुकाजी से मिलने वर्ष में एक बार इस स्थान में रेणुकानन्दवर्धन श्रीपरशुरामजी आते हैं। कार्तिक मास के शुक्ल पक्ष की दशमी से पूर्णिमा पर्यन्त भगवान् श्रीपरशुराम जामूकोटी से वर्ष में एक बार अपनी माता रेणुकाजी से मिलने इस स्थान पर आते हैं।

देवी श्रीरेणुका झील नारी देह के आकार की प्राकृतिक झील है, जिसे मां रेणुका जी की प्रतिछाया भी माना जाता है। इसी झील के किनारे मां श्री रेणुका जी व भगवान् परशुराम जी के भव्य मंदिर स्थित हैं।

महर्षि जमदग्नि के पास कामधेनु गाय थी, जिसे पाने के लिए सभी तत्कालीन राजा ऋषि लालायित थे। राजा सहस्रार्जुन ने वरदान में भगवान् दत्तात्रेय से एक हजार भुजाएं पाई थी जिसके कारण वह सहस्त्रार्जुन कहलाए जाने लगा। एक दिन वह महर्षि जमदग्नि के पास कामधेनु मांगने पहुंच गया। महर्षि जमदग्नि ने सहस्त्रबाहु एवं उसके सैनिकों का खूब सत्कार किया तथा उसे समझाया कि कामधेनु गाय उसके पास कुबेर जी की अमानत है। जिसे किसी को नहीं दिया जा सकता। यह सुनकर गुस्साए सहस्त्रबाहु ने महर्षि जमदग्नि की हत्या कर दी। यह सुनकर मां रेणुका शोकवश राम सरोवर में कूद गई। राम सरोवर ने मां रेणुका की देह को ढकने का प्रयास किया, जिससे इसका आकार स्त्री देह समान हो गया। उधर भगवान् परशुराम महेन्द्र पर्वत पर तपस्या में लीन थे। फिर योगशक्ति से उन्हें अपनी जननी एवं जनक के साथ हुए घटनाक्रम का अहसास हुआ और उनकी तपस्या टूट गई। परशुराम अति क्रोधित होकर सहस्त्रबाहु को ढूंढने निकल पड़े तथा उसे आमने-सामने के युद्ध के लिए ललकारा। भगवान् परशुराम ने सेना सहित सहस्त्रबाहु का वध कर दिया। तत्पश्चात् भगवान् परशुराम ने अपनी योगशक्ति से पिता जमदग्नि तथा मां रेणुका को जीवित कर दिया।

## तत्तापानी

यह तीर्थ स्थल हिमाचल प्रदेश की राजधानी शिमला से करीब 56 किलोमीटर दूर देवनदी सतलुज के तट पर स्थित है। यहां

सतलुज नदी की पवित्र धारा एक तरफ गर्म तो दूसरी ओर शीतल प्रवाहित होती है। यहां स्नान करने से चर्म से संबंधित रोगों में लाभ मिलता है। यहां तुला दान करवाने से ग्रह नक्षत्रों की शांति की जाती है। यहां पर महर्षि जमदग्नि और श्री परशुराम जी ने तपस्या किया था। यहाँ महर्षि जमदग्नि हर रोज यज्ञ करने के बाद भण्डारे का आयोजन करते थे। भगवान् जमदग्नि जी का मन्दिर आज भी यहां निर्मित है।

## अरावली पर्वतमाला-श्रीपरशुराम-महादेव मन्दिर

परशुराम-महादेव मन्दिर राजस्थान राज्य की अरावली पर्वतमाला के मध्य स्थान में पूर्ण रुप से प्राकृतिक रूप से बना है। ऐसी मान्यता है कि **श्रीपरशुराम** ने फरसे के प्रहार से इस मन्दिर का निर्माण किया था

श्रीपरशुराम जी त्रेता युग में मंदिर में बनी गुफा के रास्ते से यहाँ आये थे। यहाँ बैठकर भगवान् शिव की गुप्त आराधना की। भगवान् शिव को प्रसन्न करके उन्होनें अमरत्व का वरदान और इसके साथ ही कई दिव्यास्त्र एवं अस्त्र-शस्त्र भी प्राप्त किए। फरसे को भी आशुतोष भगवान् शङ्कर जी द्वारा यहीं से प्राप्त किये। कालान्तर में इस मंदिर का नाम परशुराम-महादेव मन्दिर पड़ गया। उन्होनें जगह-जगह तप किया पर उनको अपने गुरु शिव के दर्शन नहीं हुए। ऋषि-मुनियों ने बताया की उन्हें मातृहत्या का अपराध लगा है। ऋषि-मुनियों के कहने पर मातृ हत्या के दोष के निवारण के लिए यहाँ आये। ऋषि-मुनियों के अनुसार उन्हें अरावली पर्वतमाला में प्रवाहित मातृकुंडया नदी जो कि राजस्थान के चित्तौड़गढ़ जिले में स्थित है, में स्नान करके शिव की आराधना करनी थी।

इसीलिए वे स्नान करके गुफा के रास्ते आये थे। कुदरत ने अब गुफा बंद करदी। आज भी यह गुफा जो कि १८० किलोमीटर लम्बी है, जिसका दूसरा छोर नदी में निकलता था, उसमें ५-७ मीटर तक अन्दर जा सकते हैं। ऊपर श्रीहनुमान् जी का प्राचीन मन्दिर भी है। यह मन्दिर राजस्थान के दो जिलों राजसमंद एवं पाली की सीमाओं के बीच स्थित है। इस मन्दिर का परिसर ३ किलोमीटर परिधि में फैला हुआ है। कई वर्षों तक यहां भगवान् परशुरामजी ने तपस्या की थी। पहाड़ी पर बसे इस गुफा मंदिर तक पहुंचने के लिए करीब ६०० के आस-पास सीढ़ियां हैं। नीचे ३ कुण्ड हैं, जो १२ महीने भरे रहते हैं। यहाँ मन्दिर आने के दो रास्ते हैं, एक मारवाड़ वालों के लिये जो १६०० मीटर का है, इसमे चढ़ाई कम है और दुसरा मेवाड़ से आने वालो के लिए १२०० मीटर का है पर इसमें चढाई अधिक है। यह मन्दिर समुद्र तट से ३९५० फिट से लगभग ४००० फिट की उंचाई पर है। बारिश के दिनों में स्वर्ग से भी सुन्दर माहौल बन जाता है। वर्तमान में इसे राजस्थान का अमरनाथ धाम कहा जाता है।

## देवगढ़

देवगढ़ में भगवान् श्रीविष्णु जी के दशावतार का प्राचीन मन्दिर है। यह स्थान झांसी से १३० किमी तथा ललितपुर से ३३ किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। भगवान् परशुराम सहित दशावतारों का यह मन्दिर गुप्तकालीन है, यह ईसा से तीन सौ वर्ष पूर्व का माना जाता है। मन्दिर के भीतर भगवान् विष्णु के दशावतार-मत्स्य, कच्छप, वराह, नरसिंह, वामन, परशुराम, राम, कृष्ण, बुद्ध तथा कल्कि की जीवन्त मूर्तियां स्थापित हैं।

## उत्तरकाशी

उत्तरकाशी में महर्षि जमदग्नि एवं भगवती रेणुका जी का मंदिर है। जहां महर्षि जमदग्नि की प्रतिमा सिर रहित है। सिर रहित महर्षि जमदग्नि की प्रतिमा हैहयाधिपति सहस्रार्जुन द्वारा उनका वध करके सिर काट लेने की कथा को द्योतित करती है।

इस प्रकार महामहोपाध्याय **श्रीकेदारनाथ द्विवेदी** 'वेदाचार्य' प्रणीत एवं विद्यावाचस्पति प्रो. देवेन्द्र प्रसाद मिश्र द्वारा सम्पादित **भगवान् श्रीपरशुराम एवं सोहनाग धाम** ग्रन्थ का 'श्रीपरशुराम जी से सम्बन्धित महत्वपूर्ण स्थान' नामक षष्ठाध्याय समाप्त ।। ६।।

**प्रीणातु भगवान् वेदः प्रीणन्तु सर्वदेवताः ।**
**प्रीणन्तु पितरः सर्वे प्रीणन्तु च महर्षयः ॥**
**॥ बलं विष्णोः प्रवर्धताम् ॥**

# सप्तम-अध्याय

## सोहनाग धाम

उत्तरप्रदेश के देवरिया जिला में सलेमपुर रेलवे स्टेशन से दक्षिण की तरफ पाँच किमी की दूरी पर सोहनाग धाम स्थित है। यहाँ भगवान् परशुराम जी का प्राचीन शैली में निर्मित भव्य मन्दिर है। मन्दिर भग्नावशेष राजदरबार के किला के ऊपर बना हुआ है। मन्दिर में श्रीब्रह्मा जी भगवान् विष्णु एवं अन्य देवी-देवताओं की मूर्तियों के साथ काले पत्थर से निर्मित भगवान् श्रीपरशुराम जी की भव्य मूर्ति है। मन्दिर के चारों तरफ छोटे पैमाने में एक चहारदीवारी भी है। सोहनाग से कुछ ही मील की दूरी पर महान योगी देवरहा बाबा का आश्रम-गाँव-मइल, तहसील-बरहज (सलेमपुर, देवरिया) में देवनदी सरयूजी के तट पर स्थित है। यहाँ योगिराज देवरहाजी ने सैकड़ो वर्ष तक साधना की थी। परशुराम जी के मन्दिर के समीप में ही उनके गुरु आशुतोष भगवान् शिव जी का मन्दिर है। इनकी पूजा की व्यवस्था स्थानीय ब्राह्मणों द्वारा होती है। वे आस-पास ही कई घरों मे बसे हुए हैं। मन्दिर में परशुराम जी की पूजा हेतु कोई आय अन्यत्र से नही है। वहीं के निवासी ब्राह्मण लोग आपस में मिलकर नियमित विधिवत् पूजा, आरती, राग, भोग करते रहते हैं। समय-समय पर परशुराम जयन्ती, रामनवमी, श्रीकृष्णजन्माष्टमी इत्यादि पर्वों पर परमात्मा के अवतारों की पूजा, अर्चना, आरती, राग, भोग की व्यवस्था कुल परम्परा प्राप्त स्थानीय ब्राह्मण करते रहते हैं। अन्य विविध उत्सव भी यहाँ समय-समय पर होता रहता है। ये स्थानीय ब्राह्मण कुल परम्परा से भगवान् परशुराम जी के मन्दिर के पुजारी हैं।

वैशाख मास शुक्लपक्ष की अक्षय तृतीया परशुराम जयन्ती के नाम से प्रसिद्ध है। इस तिथि में प्रतिवर्ष यहाँ एक विशाल मेला का आयोजन होता है। जो लगभग एक माह तक चलता रहता है। दूर-दूर से भक्तगण अक्षय तृतीया को सोहनाग धाम आकर भगवान् परशुराम जी का दर्शन एवं पूजन करते हैं तथा मेले का आनन्द लेकर अपने-अपने घर चले जाते हैं।

## परशुराम सरोवर

परशुराम जी के मन्दिर के पूर्व दिशा में लगभग दो सौ मीटर की दूरी पर एक विशाल सरोवर है। जो परशुराम सरोवर के नाम से प्रसिद्ध है। यह लगभग १० एकड़ में बना है। इसमें सदा स्वच्छ एवं निर्मल जल भरा रहता है। भक्त एवं श्रद्धालु जन प्रतिदिन आकर इसमें स्नान कर परशुराम जी का दर्शन तथा पूजन करते हैं। सरोवर के विषय में एक प्रसिद्धि है कि चर्मरोग से ग्रसित रोगी कुछ दिन तक नियमित रूप से इसमें स्नान कर स्वस्थ हो जाते हैं ।

## जमदग्नि एवं रेणुका जी का मन्दिर

परशुराम जी के मन्दिर के पूर्वभाग में लगभग सौ मीटर की दूरी पर भगवान् परशुराम जी की माता रेणुका तथा पिता महर्षि जमदग्नि जी का मन्दिर वैदिक काल के ईटों से बना हुआ है। मन्दिर में मूर्तियाँ काले पत्थरों से बनी थीं जो अत्यन्त आकर्षक थीं वर्तमान में मूर्तिचोर मूर्तियों को चुरा ले गये हैं। इस समय मन्दिर का भग्नावशेष है।

## माता पार्वती जी का मन्दिर

भगवान् परशुराम जी के मन्दिर से अग्निकोण में लगभग दो सौ मीटर की दूरी पर राजदरबार के किला के खण्डहर के ऊपर पार्वती जी का मन्दिर भग्नावशेष है। किसी के बताने पर ही ज्ञात

हो सकेगा कि यह मन्दिर है। इसमें माता पार्वती जी की मूर्ति थी, जो सम्प्रति नहीं है। समीप के ही एक गाँव से फाल्गुन मास की शिवरात्रि तिथि में वर्तमान में भी शिवजी की बारात आती है। मन्दिर के पास ठहर कर कुछ समय बाद वापस चली जाती है। शिवपार्वती का विवाहोत्सव मनाया जाता है। भगवान् परशुराम जी के मन्दिर के पुजारी लोग बारात का स्वागत करते हैं।

## भगवान विष्णु का मन्दिर

श्रीपरशुराम सरोवर के पश्चिम भाग में लगगभग 50 मी. की दूरी पर श्रीभगवान् विष्णु का मन्दिर है। मन्दिर खण्डहर है। मूर्तियों को चोर चुरा ले गये हैं। मन्दिर वैदिक कालीन ईटों से बना है।

## बुढ़वा शंकर जी का मन्दिर

भगवान् विष्णु जी के मन्दिर से सटे दक्षिण तरफ बुढ़वा शंकर जी का मन्दिर है। यह भी खण्डहर है। मन्दिर में शिवलिंग विराजमान है। पूजा अर्जना की कोई व्यवस्था नहीं है। यह मन्दिर भी वैदिक काल के इटों से बना है।

## मन्दिरों की विशेषता

श्रीपरशुराम जी, श्रीशंकर जी, महर्षि जमदग्निजी, पार्वती जी, भगवान् श्रीविष्णुजी तथा श्रीबुढ़वा शंकर जी के ये छः मन्दिर एक साथ एक समय तथा एक शैली में सम्भवतः ईसवी शताब्दी के प्रारम्भ के समय में ही निर्मित प्रतीत होते हैं। सभी मन्दिरों की ईटें एक प्रकार की हैं। परशुराम जी तथा शंकर जी के मन्दिर को छोड़कर किसी पर छत नहीं बना है। सभी भग्नावशेष हालत में हैं। सभी मन्दिरों में मूर्तियाँ थी किन्तु वर्तमान में मूर्तिचोर सभी मन्दिरों की मूर्तियों को चूरा ले गये हैं। भगवान् परशुराम जी तथा भगवान्

शंकर जी की मूर्ति की चोरी नहीं हुई है। पर्यटन की दृष्टि से भी इन मन्दिरों तथा स्थान का अत्यन्त महत्व है।

## वैदिक काल के ईंटो की बनावट तथा आकार-प्रकार-

वैदिक काल मे यज्ञों या मन्दिरों के निर्माण में ईंटे काट कर नही लगाई जाती थी। चौदह प्रकार की ईंटे होती थी। उसी से यज्ञशाला, यज्ञशाला की वेदी तथा मन्दिर बनाये जाते थे। इनके नाम तथा बनावट निम्नलिखित है।

▲ **पद्या**- पद्या नामक ईंट द्वादश अंगुल की समचतुरस्र बनाई जाती थी।

▲ **अर्द्धपद्या**- बारह अंगुल लम्बी तथा छः अंगुल चौड़ी अर्द्धपद्या ईंट होती थी।

▲ **पादोनपद्या**- बारह अंगुल की समचतुरस्र तथा एक कोण रहित पादोन पद्या नामक ईंट होती थी।

▲ **जंघामात्री**- अठारह अंगुल समचतुरस्र जंघामात्र नामक ईंट होती थी।

▲ **अध्यर्द्धा**- अठारह अंगुल लम्बी तथा बारह अंगुल चौड़ी अध्यर्द्धा नामक ईंट होती थी।

▲ **अर्द्धोत्सेधापद्या**- बारह अंगुल की समचतुरस्र, तीन या दो अंगुल उच्च अर्द्धोत्सेधापद्या नामक ईंट होती थी।

▲ **अर्द्धोत्सेधा अर्द्धपद्या**- बारह अंगुल लम्बी तथा छः अंगुल चौड़ी दो या तीन अंगुल की मोटी अर्द्धोत्सेधा अर्द्धपद्या नामक ईंट होती थी।

▲ **पादभागा**– छः अंगुल की समचतुरस्र पादभागा नामक ईट होती थी।

▲ **त्रिग्राहिणी**– चौबीस अंगुल की लम्बी तथा अठारह अंगुल की चौड़ी त्रिग्राहिणी नामक ईट बनाई जाती थी।

▲ **अर्द्धपाद भागा**– छः अंगुल की लम्बी तथा तीन अंगुल की चौड़ी अर्द्धपाद भागा नामक ईट होती थी।

▲ **वृहती**– चौबीस अंगुल की समचतुरस्र वृहती नामक ईंट होती थी।

▲ **वक्रा अर्द्धवृहती**– चौबीस अंगुल लम्बी द्वादश अंगुल की चौड़ी वक्रा अर्द्धवृहती नामक ईंट होती थी।

▲ **चतुर्भागा**– तीन अंगुल की समचतुरस्र चतुर्भागा नामक ईट होती थी।

▲ **वक्रेष्टका**– टेढ़े वृक्षों के मेल से निर्मित आकृति के समान वक्रेष्टा ईंट होती थी

ये सभी ईंटें चौदह प्रकार की परशुराम जी, शंकर जी तथा इन चार खण्डहर मन्दिरों में पायी जाती हैं। तथा खण्डहर पड़े हुए राज दरबार के किले में भी मिलते हैं। ये पर्यटन तथा खुदाई करने वाले विभागों के अध्ययन के विषय हैं।

## श्रीपरशुराम चण्डिका वेद विद्यालय-सोहनाग

इस वेद विद्यालय की स्थापना बरहज आश्रम के अधिपति परम विरक्त बाबा श्रीराघवदास जी तथा परम विरक्त महात्मा श्रीसत्यव्रत जी, श्रीब्रह्मचारी जी आदि महापुरूषों ने मघौली राज की महारानी श्रीचण्डिका कुवरी से भूमि लेकर किये थे। यहाँ शास्त्री

एवं आचार्य स्तर पर वेद विषय की शिक्षा की व्यवस्था है। वेद के साथ आधुनिक विषयों की भी शिक्षा दी जाती है। परीक्षा का सम्बन्ध श्रीसम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी से है। विद्यालय में छात्रावास की व्यवस्था है। विद्यालय का भवन श्रीपरशुराम जी के प्रांगण में ही है।

## श्रीजीवाराम वाना का मन्दिर

सरोवर की उत्तर दिशा में लगभग सौ मीटर की दूरी पर श्रीजीवाराम बाबा का मन्दिर है। मन्दिर में श्रीब्रह्मबाबा का चौरा है। श्रीठाकुर जी की भी मूर्ति इसमें विराजमान है। पूजा-पाठ की व्यवस्था सामान्यतया ठीक है। मन्दिर से सटे पूर्व दिशा में उच्चतर माध्यमिक विद्यालय भी है। विद्यालय उत्तर-प्रदेश शासन द्वारा संचालित है। यहाँ विद्यार्थियों की परीक्षा का केन्द्र भी है।

## श्रीठाकुर जी का मन्दिर

सरोवर के तटपर उत्तर दिशा में भगवान् विष्णु का मन्दिर है। इस मन्दिर में पूजन-अर्चन की व्यवस्था स्थानीय नापित परिवार द्वारा की जाती है।

## श्रीराधाकृष्ण का मन्दिर

सरोवर से सटे ईशान दिशा में भगवान् श्रीराधाकृष्ण का मन्दिर है। पूजा अर्चना की उत्तम व्यवस्था है। जन्माष्टमी के अवसर पर भगवान् श्रीकृष्ण से सम्बन्धित विभिन्न प्रकार के अनेक कार्यक्रमों का आयोजन होता है। मन्दिर का खर्च स्थानीय यादव परिवार के लोगों की तरफ से होती है। मन्दिर आकर्षक है।

## श्रीहनुमान् जी का मन्दिर

सरोवर से सटे पूर्व दिशा में हनुमान जी का भव्य मन्दिर है। नित्य पूजा-अर्चना की उत्तम व्यवस्था है।

## भगवान् विश्वकर्मा जी का मन्दिर

मन्दिर में भगवान् विश्वकर्मा जी की मूर्ति है। स्थानीय लोहार जाति के लोगों की तरफ से पूजा पाठ की व्यवस्था की जाती है। प्रतिवर्ष १७ सितम्बर को विश्वकर्मा जयन्ती होती है। इस दिन दो पहिया एवं चारपहिया वाहनों को लाकर स्थानीय लोग गाड़ी की पूजा कराते हैं। मेला जैसी भीड़ का आयोजन हो जाता है।

## श्रीशंकर जी का मन्दिर

सरोवर से सटे दक्षिण दिशा में भगवान् शंकर का मन्दिर है। इसकी व्यवस्था भर जाति के लोगों की तरफ से होती है। मन्दिर दर्शनीय है।

## प्रायमरी विद्यालय

सरोवर से सटे उत्तर दिशा में प्रायमरी विद्यालय है। यह विद्यालय बहुत पुराना है। उत्तर-प्रदेश शासन द्वारा संचालित है। शिक्षा की व्यवस्था उत्तम है।

## पूर्व माध्यमिक विद्यालय

सरोवर से सटे अग्निकोण में शासन से संचालित पूर्वमाध्यमिक विद्यालय भी है। जहाँ कक्षा ८ तक की शिक्षा दी जाती है। शिक्षा की व्यवस्था उत्तम है।

सरोवर से सटे पूर्व दिशा में कस्बा जैसी कुछ दुकानें भी हैं जहाँ आवश्यकता की प्रायः सभी वस्तुएँ मिल जाती हैं।

सोहनाग धाम शासन की तरफ से पर्यटन स्थल भी घोषित है। यह स्थान मनोरम एवं दर्शनीय है।

**स्वस्ति प्रजाभ्यः परिपालयन्तां**
**न्यायेन मार्गेण मही महीशाः ।**

**गोब्राह्मणेभ्यस्शुभमस्तु नित्यं**
**लोकास्समस्ताः सुखिनो भवन्तु ॥**

इति शुभम्

इस प्रकार महामहोपाध्याय **श्रीकेदारनाथ द्विवेदी** 'वेदाचार्य' प्रणीत एवं विद्यावाचस्पति प्रो. देवेन्द्र प्रसाद मिश्र द्वारा सम्पादित **भगवान् श्रीपरशुराम एवं सोहनाग धाम** ग्रन्थ का 'सोहनाग धाम' नामक सप्तमाध्याय समाप्त ॥ ७ ॥

**प्रीणातु भगवान् वेदः प्रीणन्तु सर्वदेवताः ।**
**प्रीणन्तु पितरः सर्वे प्रीणन्तु च महर्षयः ॥**

**॥ बलं विष्णोः प्रवर्धताम् ॥**

# परिशिष्टात्मक द्वितीय भाग

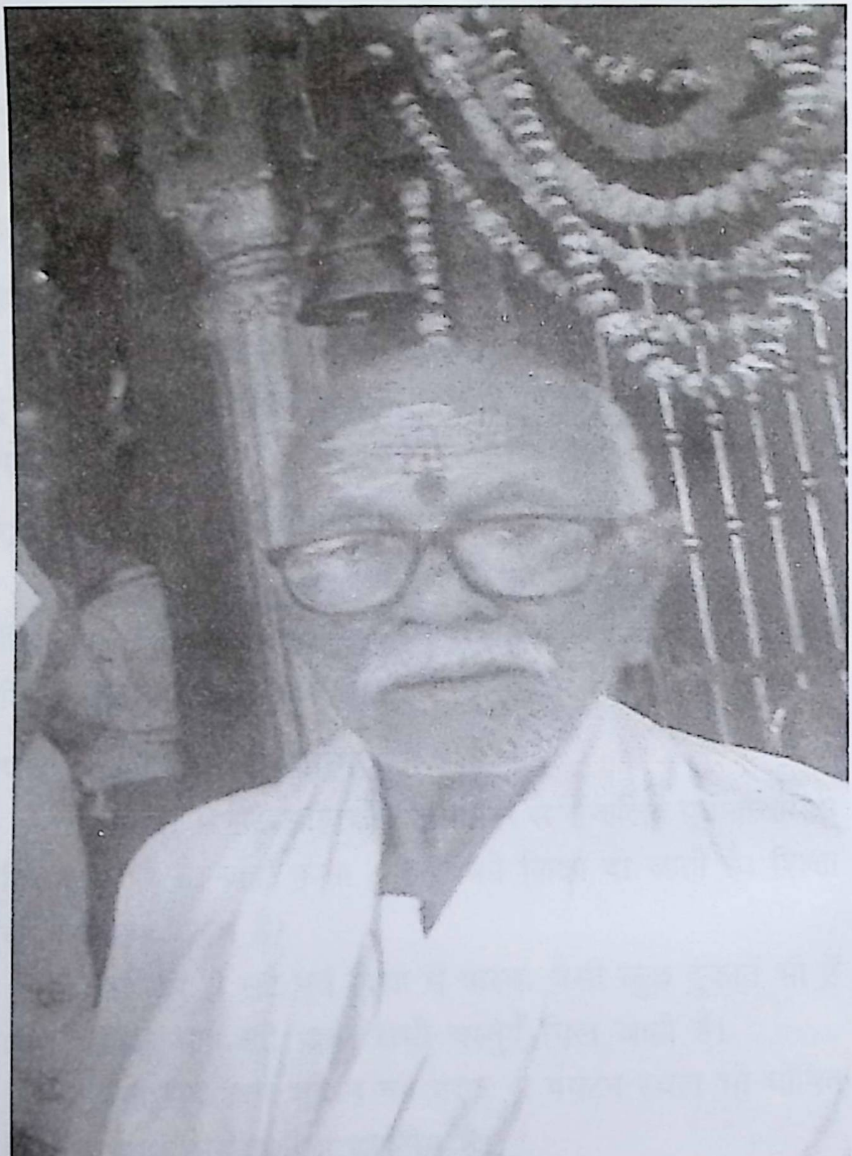

महामहोपाध्याय श्रीकेदारनाथ द्विवेदी 'वेदाचार्य'

# श्रीपरशुराम-पूजनविधिः

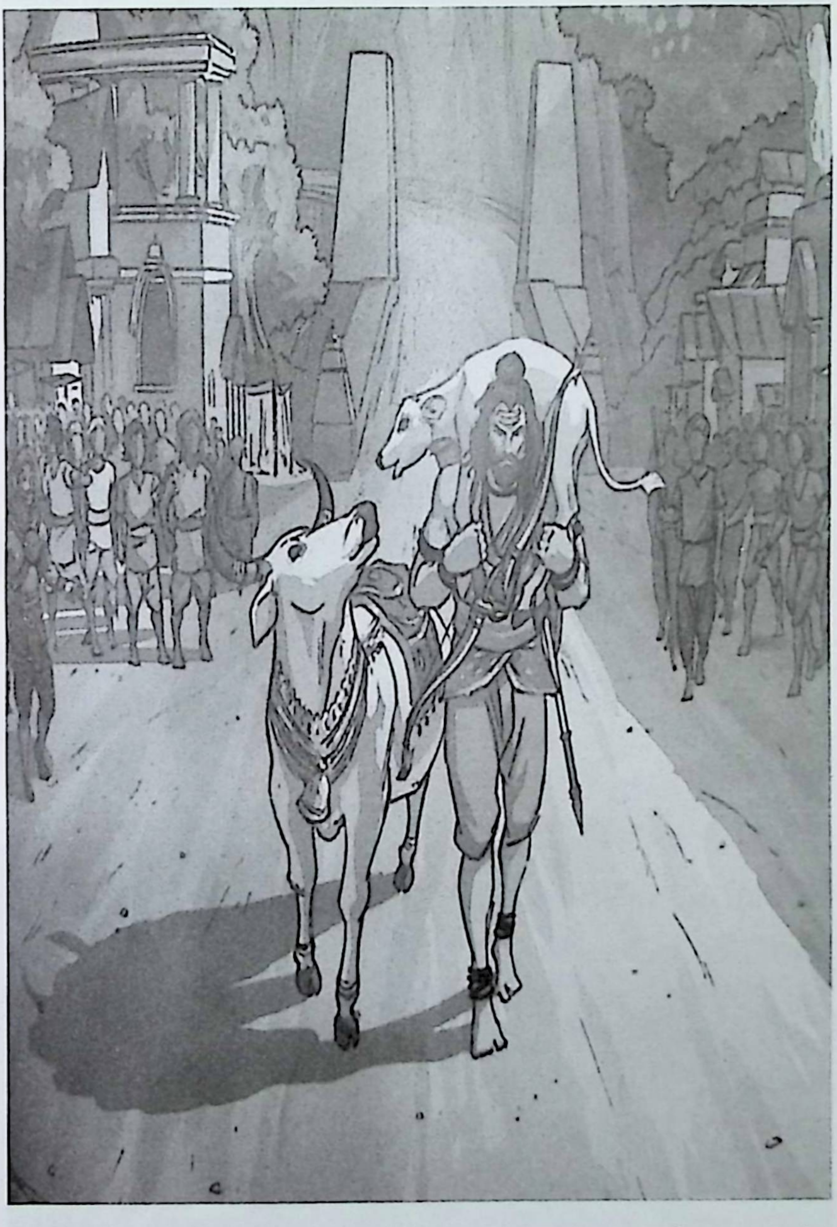

महामहोपाध्याय श्रीकेदारनाथ द्विवेदी 'वेदाचार्य'

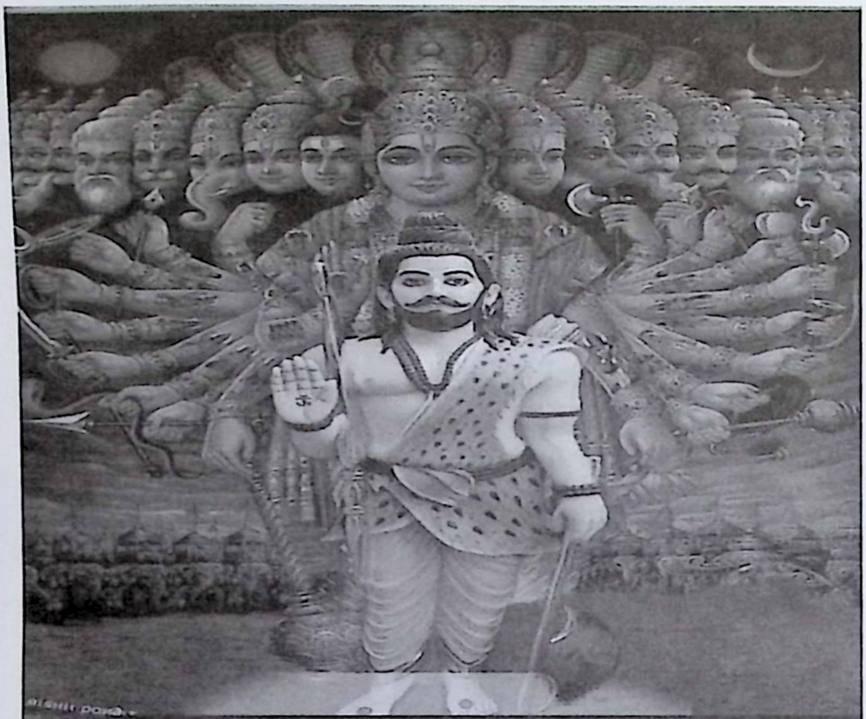

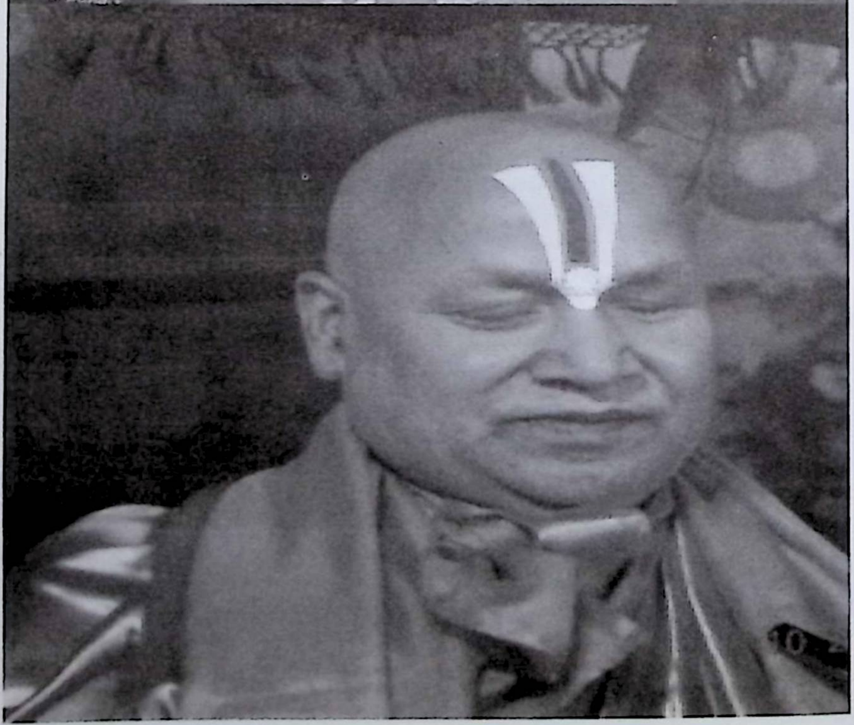

श्रीगणेशाय नमः

# श्रीपरशुराम-पूजनविधिः

**नमोऽस्तु शुक्राश्रयवामनाय**
**नमोऽस्तु विप्रोत्सव भार्गवाय ।**
**नमोऽस्तु सीताहितराघवाय**
**नमोऽस्तु पार्थस्तुतयादवाय ॥१॥**

**श्रीतत्वानिधि** में पवित्रकीर्ति जमदग्निनन्दन श्रीपरशुराम जी का ध्यान सम्बन्धी श्लोक स्मरणीय है-

**परशुज्ज्वलहस्ताब्जो जटामण्डलमण्डितः ।**
**ददातुचिरञ्जीवित्वं प्रसन्नात्माभृगूद्वहः ॥२॥**

(श्रीतत्वानिधिः, परशुरामध्यानम् १६९/१)

**अर्चनं सम्प्रवक्ष्यामि विष्णोरमिततेजसः ।**
**यत्कृत्वा मुनयः सर्वे परं निर्वाणमाप्नुयुः ॥३॥**
**प्रीणातु भगवान् वेदः प्रीणन्तु सर्वदेवताः ।**
**प्रीणन्तु पितरः सर्वे प्रीणन्तु च महर्षयः ॥४॥**

अमित तेजस्वी भगवान् विष्णु (श्रीपरशुराम) के पूजन विधान को कहते हैं, जिसे करके मुनिगण निर्वाण को प्राप्त हुए हैं। इस पूजन विधान से भगवान् वेद तृप्त हों, सभी देवता तृप्त हों, सभी पितर तृप्त हों और सभी ऋषि-मुनि तृप्त हों।

**प्रातरुत्थाय शुचिर्भूत्वा सुस्नातः कृतसन्ध्यावश्यककर्मा देवमन्दिरं गत्वा द्वारसन्धौ तालत्रयं दत्त्वा कपाटमुद्धाट्यान्तः प्रविश्य हस्तौ प्रक्षाल्य पूजनपात्राणि संविमृज्य जलेन प्रक्षाल्य वस्त्रेण संप्रोक्ष्य च यथास्थाने संस्थापयेत् ।**

प्रातःकाल उठकर शौच स्नान करके सन्ध्या आदि आवश्यक कर्म किया हुआ पुरुष देवमंदिर में (अथवा पूजन करने के स्थान में) जा के द्वारसन्धि में तीन ताली देवे और कपाट (किंवाड) खोलकर भीतर घुस के हाथ धोकर पूजन के पात्रों को मांजे और जल से धोकर वस्त्र से पोंछ के यथास्थान पर रख देवे ।

**सुवासितजलैः पूर्णं कुम्भं दक्षिणे संस्थाप्य वामे घण्टां पुरतः गन्धपुष्पभूषणानि दक्षिणतः शंखदीपौ वामे तु धूपम् अन्यामपि पूजनोपयुक्तसामग्री च यथास्थाने संस्थाप्य आचम्य प्राणानायम्य मङ्गलोच्चारणं कुर्यात् । सुशांतिर्भवतु । मङ्गलोच्चारणम् ।**

सुगंधित जल से भरा हुआ कलश दक्षिण तरफ में रखें, घण्टा बांईं तरफ रखें, गन्ध पुष्प भूषणादि आगे रखें, शंख और दीपक दाहिनी तरफ रखें, धूप बायें तरफ रखें और जो पूजन के वास्ते सामग्री हो सो अपने अपने स्थान में रखकर आचमन प्राणायाम करके यथोक्त मंगल श्लोकों का उच्चारण करे ।

**हस्ते अक्षतपुष्पाणि गृहीत्वा मङ्गलमन्त्रान्पठेत् –**

**ॐ स्वस्तिनऽइन्द्रोव्वृद्धश्रवाः स्वस्ति-नः पुषाव्विश्ववेदाः।**
**स्वस्तिनस्ताक्ष्योऽअरिष्टनेमिः स्वस्तिनोबृहस्पतिर्द्दधातु ॥१॥**
**भद्रंकर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रंपश्येमाक्षभिर्य्यजत्राः ।**
**स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवाꣳसस्तनूभिर्व्यशेमहि देवहितंय्यदायुः ॥२॥**

तम्पत्क्नीभिरनुगच्छेम देवाः पुत्रैर्भ्रातृभिरुतवा हिरण्यैः ।
नाकंगृब्भ्णानाः सुकृतस्य लोके तृतीयेपृष्ठेऽअधिरोचने दिवः ॥३॥ सुशान्तिर्भवतु ॥

**नमस्काराः-**

श्रीमहागणपतये नमः। इष्टदेवताभ्यो नमः। कुलदेवताभ्यो नमः। ग्रामदेवताभ्यो नमः। स्थानदेवताभ्यो नमः। श्रीलक्ष्मी-नारायणाभ्यां नमः। उमामहेश्वराभ्यां नमः। शचीपुरंदराभ्यां नमः। मातापितृभ्यां नमः। सर्वेभ्यो देवेभ्यो नमः। सर्वेभ्यो ब्राह्मणेभ्यो नमः। एतत् कर्मप्रधानश्रीपरशुरामाय नमः ॥

सुमुखश्चैकदन्तश्च कपिलो गजकर्णकः ।
लम्बोदरश्च विकटो विघ्ननाशो विनायकः ॥१॥
धूम्रकेतुर्गणाध्यक्षो भालचन्द्रो गजाननः ।
द्वादशैतानि नामानि यः पठेच्छुणुयादपि ॥२॥
विद्यारम्भे विवाहे च प्रवेशे निर्गमे तथा ।
संग्रामे सङ्कटे चैव विघ्नस्तस्य न जायते ॥३॥
शुक्लाम्बरधरं देवं शशिवर्णं चतुर्भुजम् ।
प्रसन्नवदनं ध्यायेत्सर्वविघ्नोपशान्तये ॥४॥
अभीप्सितार्थसिद्ध्यर्थं पूजितो यः सुरासुरैः ।
सर्वविघ्नहरस्तस्मै गणाधिपतये नमः ॥५॥

ततः सङ्कल्पं कुर्यात् ।

उपर्युक्त मन्त्र तथा श्लोकों का पाठ करें और सबको नमस्कार पूर्वक संकल्प करे।

**संकल्पः-**

ॐ विष्णुर्विष्णुर्विष्णुः तत्सदद्य मासोत्तमे मासे अमुकमासे अमुकपक्षे अमुकवासरे अमुकतिथौ अमुकगोत्रोत्पन्नस्य ममात्मनः

**(वा अमुकयजमानस्य) श्रुतिस्मृतिपुराणोक्तफलप्राप्त्यर्थं श्रीपरशुरामदेवस्य प्रीत्यर्थं यथाज्ञानेन यथामिलितोपचारद्रव्यैः पुरुषसूक्तमन्त्रेण श्रीपरशुरामस्य ध्यानावाहनादिषोडशोपचारेण पूजनमहं करिष्ये। तत्रादौ अङ्गन्यासपूर्वकं निर्विघ्नतासिध्यर्थं श्रीगणेशाम्बिकयोः आवाहनपूर्वकपूजनं कलशादिपूजनं च अहं करिष्ये॥१॥**

हाथ में गंधपुष्प सहित जल लेकर **ॐ तत्सदद्य....** इत्यादि का उच्चारण करके संकल्प करे । इतना ध्यान अवश्य रखें कि, जिस दिन जो तिथि बार हो उसी का उच्चारण करे, तथा आप स्वयं करे तो अपना और दूसरे की ओर से करे तो उसका नाम उच्चारण करे। यदि श्रीपरशुराम के सिवाय अन्य देव का पूजन करना हो तो जहां **श्रीपरशुरामस्य** लिखा है वहां गणेश-रमेश-महेश-दिनेश आदि जिस देवता का पूजन करना हो उसी देवताका नाम उच्चारण करके संकल्प करे। और फिर कलशादि का पूजन करे।

**कलशपूजनम्-**

**तत्रादौ कलशाऽऽवाहनम्-**

**कलाकला हि देवानां दानवानां कलाकलाः।**
**सङ्गृह्य निर्मितो यस्मात्कलशस्तेन कथ्यते ॥१॥**
**कलशस्य मुखे विष्णुः कण्ठे रुद्रः समाश्रितः ।**
**मूले त्वस्य स्थितो ब्रह्मा मध्ये मातृगणाः स्मृताः ॥२॥**
**कुक्षौ तु सागराः सप्त सप्तद्वीपा च मेदिनी ।**
**अर्जुनी गोमती चैव चन्द्रभागा सरस्वती ॥३॥**
**कावेरी कृष्णवेणा च गङ्गा चैव महानदी ।**
**तापी गोदावरी चैव माहेन्द्री नर्मदा तथा ॥४॥**
**नदाश्च विविधा जाता नद्यः सर्वास्तथापराः ।**
**पृथिव्यां यानि तीर्थानि कलशस्थानि तानि वै ॥५॥**

सर्वे समुद्राः सरितस्तीर्थानि जलदा नदाः ।
आयांतु देवपूजार्थं दुरितक्षयकारकाः ॥६॥
ऋग्वेदोऽथ यजुर्वेदः सामवेदो ह्यथर्वणः ।
अङ्गैश्च सहिताः सर्वे कलशं तु समाश्रिताः ॥७॥
अत्र गायत्री सावित्री शान्तिः पुष्टिकरी तथा ।
आयान्तुदेवपुजार्थं दुरितक्षयकारकाः ॥८॥

ततो वरुणावाहनम्-

ॐ तत्त्वायामि ब्रह्मणाव्वन्दमानस्तदाशास्ते यजमानोहविर्भिः। अहेडमानोव्वरुणेहबोध्युरुशꣳसमानऽआयुः प्प्रमोषीः ॥९॥

अस्मिन् कलशे वरुणं साङ्गं सपरिवारं सायुधं सशक्तिकमावाहयामि ।

ततः कलशप्रार्थना-

देवदानवसंवादे मध्यमाने महोदधौ ।
उत्पन्नोऽसि तदा कुम्भ विधृतो विष्णुना स्वयम् ॥
त्वत्तोये सर्वतीर्थानि देवाः सर्वे त्वयि स्थिताः ।
त्वयि तिष्ठन्ति भूतानि त्वयि प्राणाः प्रतिष्ठिताः ॥
त्वत्प्रसादादिमां पूजां कर्तुमीहे जलोद्भव ।
सान्निध्यं कुरु मे देव प्रसन्नो भव सर्वदा ॥

ॐ कलशस्थवरुणाय नमः आवाहयामि। सर्वोपचारार्थे गन्धाक्षतपुष्पाणि समर्पयामि ।

**सर्वे समुद्राः सरितः** इन मन्त्रों से कलश का आवाहन करे और उसमें **तत्त्वायामि** इस मंत्र से वरुण का आवाहन करके **देवदानवसंवादे** इत्यादि से कलश की प्रार्थना करे और फिर गन्धाक्षतपुष्पों से कलश का पूजन करे ।

**अनन्तरं कलशोदकेन पूजाद्रव्याणि तथाऽऽत्मानं च-**

**अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा॥**
**यः स्मरेत्पुण्डरीकाक्षं स बाह्याभ्यन्तरः शुचिः ॥**

**ॐ आपोहिष्ठामयोभुवस्तानऽऊर्जे दधातन । महेरणाय चक्षसे ॥५॥**

**योवः शिवतमो रसस्तस्य भाजयतेहनः। उशतीरिवमातरः॥६॥**

**तस्माऽअरंगमामवो यस्यक्षयायजिन्वथ। आपोजनयथा च नः॥ इत्यादिमन्त्रैः सम्प्रोक्ष्य शंखं च जलेन प्रपूर्य पश्चात् कलशमुद्रां प्रदर्शयेत्।**

तत्पश्चात् कलश के जल से पूजन सामग्री को तथा अपने शरीर को **अपवित्रः..... आपोहिष्ठा....** इत्यादि मंत्रों से छींटा दे और शंख को जल से भर देवे । पीछे कलश मुद्रा दिखावे।

**शंखपूजनम्-**

**शंखादौ चंद्रदैवत्यं कुक्षौ वरुणदेवता ।**
**पृष्ठे प्रजापतिश्चैव अग्रे गङ्गा सरस्वती॥**
**त्रैलोक्ये यानि तीर्थानि वासुदेवस्य चाज्ञया ।**
**शंखे तिष्ठन्ति विप्रेन्द्र तस्माच्छंखं प्रपूजयेत् ॥**
**त्वं पुरा सागरोत्पन्नो विष्णुना विधृतः करे ।**
**निर्मितः सर्वदेवैश्च पाञ्चजन्य नमोऽस्तु ते ॥**
**पाञ्चजन्याय विद्महे पावमानाय धीमहि ।**
**तन्नः शंखः प्रचोदयात् ।**
**ॐ अग्निर्ऋषिः पवमानः पाञ्चजन्यः पुरोहितः ।**
**तमीमहे महागयम् ॥ ८॥**

**ॐ शंखस्थदेवतायै नमः आवाहयामि ।**
**सर्वोपचारार्थे गन्धपुष्पाणि समर्पयामि ।**
**नमस्करोमि ॥ शंखमुद्रां प्रदर्शयेत् ।**

**शंखादौ चन्द्रदै...** इन श्लोकों से प्रार्थना करके **ॐ अग्निर्ऋषिः..** इस मंन्त्र से गन्धपुष्प लेकर शंख का पूजन करे और शंखमुद्रा दिखावे।

**घण्टापूजनम्-**

**आगमार्थं तु देवानां गमनार्थं तु रक्षसाम् ।**
**घण्टानादं प्रकुर्वीत पश्चाद् घण्टां प्रपूजयेत् ॥**

**ॐ सुपर्णोसिगुरुत्माँस्त्रिवृत्ते शिरो गायत्रं चक्षुर्बृहद्रथंतरे पक्षौ। स्तोमऽआत्माच्छन्दाꣳस्यंगानि यजूꣳषि नाम॥**

**साम ते तनूर्वामदेव्यं यज्ञायज्ञियं पृच्छंधिष्ण्याः शफाः ।**
**सुपर्णोसि गरुत्मान्दिवं गच्छस्वः पत ॥९॥**

**ॐ गरुडाय नमः, आवाहयामि सर्वोपचारार्थे गंधपुष्पाणि समर्पयामि, नमस्करोमि । घण्टामुद्रां प्रदर्शयेत् ।**

**आगमार्थं तु....** इससे घंटा की प्रार्थना करके **सुपर्णोसि गरु....** इस मन्त्र से गन्ध पुष्प लेकर घंटास्थ गरुड का पूजन करे और घंटामुद्रा दिखावे ।

**गणपत्यादिपञ्चायतनदेवतानां पूजनम्-**

**तत्रादौ गणानांत्वेति गणेशपूजनम्-**

**ॐ गणानांत्वागणपतिꣳहवामहेप्रियाणां त्वा प्रियपतिꣳहवामहे निधीनांत्वा निधिपतिꣳहवामहेव्वसोमम। आहमजानिगर्ब्भधमात्वमजासि गर्ब्भधम् ॥१०॥**

**गणपतये नमः आवाहनादिपूजनम् ।**

**ॐ अम्बेऽअम्बिकेऽअम्बालिके नमानयतिकश्चन ।**

**ससस्त्यश्वकः सुभद्रिकांकाम्पीलवासिनीम् ॥**

**देव्यै नमः आवाहनादिपूजनम् ।**

**ॐ इदं विष्णुर्व्विचक्रमेत्रेधानिदधेपदम् ।**

**समूढमस्यपाᳬ सुरे स्वाहा ॥**

**श्रीपरशुरामाय नमः आवाहनादिपूजनम् ।**

**ॐ नमः शम्भवायचमयोभवायचनमः**

**शंकरायचमयस्करायचनमः शिवाय च शिवतरायच ॥**

**शिवायनमः आवाहनादिपूजनम् ।**

**ॐ आ कृष्णेन रजसावर्तमानो निवेशयन्नमृतंमर्त्त्यञ्च ।**

**हिरण्ययेन सविता रथेना देवो याति भुवनानिपश्यन् ॥**

**सूर्याय नमः आवाहनादिपूजनम् । तदनन्तरं शालिग्रामपूजनम् ॥**

गणेशजी को आदि लेकर अन्य जो मूर्तियां हों उनका यथोक्त मंत्रों से पूजन करे। यथा-**गणानां त्वा...** इस मंत्र से गणेशजी का, **अम्बेऽअंबिके..** इससे देवी का, **इदं विष्णु...** इससे विष्णु के अवतार श्रीपरशुराम जी का, **नमः शम्भवाय...** इससे शिवजी का और **आकृष्णेन..** इससे सूर्य का पूजन करे, और इनके पीछे श्रीशालग्राम जी का पूजन करे ।

## तत्रादौ षोडशांगन्यासप्रयोगः-

**अद्य पूर्वोच्चरितशुभपुण्यतिथौ ममात्मनः श्रुतिस्मृतिपुराणोक्तफलप्राप्त्यर्थ परशुरामपूजनार्थे षोडशांगन्यासांश्च करिष्ये ॥**

यहाँ परशुरामपूजन करने से पहले पुरुषसूक्त के सोलह मन्त्रों से क्रमशः सङ्कल्प पूर्वक अङ्गन्यास करें, मन्त्र आगे लिखे गए हैं। **षोडशांगन्यासार्थ अद्य....** यह उच्चारण करके संकल्प और पीछे अंग न्यास करे । **ॐ संहस्रशीर्षा... इति वामकरे।** (इस मंत्र

से बांये हाथ को स्पर्श करे) **ॐ पुरुषऽए... इति दक्षिण करे** (इससे दाहिने हाथ को) **एतावान.... इति वामपादे** (इससे बांये पांव को) **त्रिपादूर्ध्व... इति दक्षिणपादे** (इससे दाहिने पांवको) **ॐ ततो व्विराड... इति वामजानुनि** (इससे बांई जंघा को) **ॐ तस्माद्यज्ञा... इति दक्षिणजानुनि** (इससे दाहिनी जंघा को) **ॐ तस्माद्यज्ञात्सर्वहुतऽऋचः... इति वामकट्याम्** (इससे बांई कटि को) **ॐ तस्मादश्वा.... इति दक्षिणकट्याम्** (इससे दाहिनी कटि को) **ॐ तं यज्ञं इति नाभौ** (इससे नाभिको) **ॐ यत्पुरुषं...इति हृदये** (इससे हृदयको) **ॐ ब्राह्मणोस्य..... इति वामकुक्षौ** (इससे बांई कुक्ष को ) **ॐ चन्द्रमा मनसो... इति दक्षिणकुक्षौ** (इससे दहिनी कुक्षको ) **ॐ नाभ्याऽआ.... इति कण्ठे** (इससे कण्ठको) **ॐ यत्पुरुषं.... इति वचे** (इससे मुखको ) **ॐ सप्तास्यासन प. ...इति अक्ष्णोः** (इससे नेत्रों को) और **ॐ यज्ञेन यज्ञ.... इति मूर्ध्नि** (इससे मस्तक को) स्पर्श करे। **ततः पूजा समारभेत्।** (अंगन्यास किये पीछे पूजा आरंभ करे) ।

**परशुरामरुत्थापनम्–**

**भद्रंकर्णेभिः श्रृणुयाम देवाभद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः ।**
**स्थिरैरंगैस्तुष्टुवाꣳसस्तुनूभिर्व्यशेमहिदेवहितं यदायुः ॥**
**इति मन्त्रेण घण्टानादं कुर्यात् ।**
**उत्तिष्ठोत्तिष्ठ गोविन्द उत्तिष्ठ गरुडध्वज ।**
**उत्तिष्ठ कमलाकान्त त्रैलोक्ये मङ्गलं कुरु ॥**

**इति तालत्रयं दत्त्वा परशुराममुत्थाप्य ताम्रपात्रे तुलसीदलोपरि सचक्रपरशुरामं संस्थाप्य [ दन्तधावनगण्डूषानन्तरं देहन्यासवत् देवन्यासं कुर्यात् ]**

**भद्रंकर्णे....** इस मन्त्र से घण्टा बजाकर तीन ताली देवे और

ये प्रार्थना करे कि हे गोविन्द ! (श्रीपरशुरामजी !) उठिये, हे कमलापति भगवान् ! उठिये, और त्रैलोक्य में मंगल कीजिये। ऐसा कहकर भगवान् के ऊपर से वस्त्र उतार देवे, और तांबे के पात्र में तुलसी के पत्तों पर श्रीपरशुरामजी की मूर्ति को अच्छी तरह स्थापित करके (दातून और कुल्लों के निमित्त जल की दो चमची छोड देवे और तुलसीदल से मूर्ति को स्पर्श करके नेत्र मूँदकर देहन्यास की तरह देवन्यास का ध्यान करे) और फिर पूजन करे यथा–

**आवाहनम् –**

**आगच्छ भगवन्देव स्थाने चात्र स्थिरो भव ।**
**यावत्पूजां करिष्यामि तावत्त्वं सन्निधौ भव ॥**
**ॐ सहस्त्रशीर्षा पुरुषः सहस्राक्षः सहस्रपात् ।**
**सभूमिर्ठ्ठंसर्व्वतस्पृत्वात्यतिष्ठदशांगुलम् ॥१॥**
**श्रीपरशुरामाय नमः आवाहनं समर्पयामि ।**

(इससे आवाहन करे)

**आसनम्–**

**रम्यं सुशोभनं दिव्यं सर्व सौख्यकरं शुभम् ।**
**आसनं च मया दत्तं गृहाण परमेश्वर ॥**
**ॐ पुरुषऽएवेदर्ठ्ठंसर्व्वं यद्भुतं य्यच्चभाव्यम् ।**
**उतामृतत्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति ॥२॥**
**श्रीपरशुरामाय नमः आसनं समर्पयामि ।**

(इससे आसन प्रदान करे)

**पाद्यम्–**

**उष्णोदकं निर्मलं च सर्व सौगन्ध संयुतम् ।**
**पादप्रक्षालनार्थाय दत्तं ते प्रतिगृह्यताम् ॥**

ॐ एतावानस्य महिमाऽतो ज्यायाँश्च पूरुषः ।
पादोस्य व्विश्वाभूतानि त्रिपादस्यामृतन्दिवि ॥३॥
श्रीपरशुरामाय नमः पाद्यं समर्पयामि ।
(इससे पाद्यार्थ जल अर्पित करें)

अर्घ्यम्-

अर्घ्यं गृहाण देवेश गन्धपुष्पाक्षतैः सह ।
करुणाकर मे देव गृहाणार्घ्यं नमोऽस्तु ते ॥
ॐ त्रिपादूर्ध्वऽउदैत्पुरुषः पादोस्येहाभवत्पुनः ।
ततोव्विष्ष्वङ् व्यक्क्रामत्साशनानशनेऽअभि ॥४॥
श्रीपरशुरामाय नमः अर्घ्यं समर्पयामि ।
(इससे अर्घ्य प्रदान करे)

आचमनम्-

सर्वतीर्थसमायुक्तं सुगन्धि निर्मलं जलम् ।
आचम्यतां मया दत्तं गृह्यतां परमेश्वर ॥
ॐ ततो व्विराडजायत व्विराजोऽअधिपूरुषः ॥
सजातोऽअत्यरिच्यतपश्चाद्भूमिमथोपुरः ॥५॥
श्रीपरशुरामाय नमः आचमनीयं जलं समर्पयामि
(इससे आचमन प्रदान करें)

स्नानम्-

गङ्गासरस्वतीरेवापयोष्णीनर्मदाजलैः ।
स्नापितोऽसि मया देव तथा शान्तिं कुरुष्व मे ॥
ॐ तस्माद्यज्ञात्सर्व्वहुतः सम्भृतंपृषदाज्यम् ।
पशूँस्ताँश्चक्रेव्वायव्यानारण्याग्ग्राम्याश्चये ॥६॥
श्रीपरशुरामाय नमः स्नानं समर्पयामि ।

**[ अत्रावसरे शंखपूरितोदकेन इदंविष्णुर्विचक्रमे.... इति मन्त्रेण शालग्रामं स्नापयेत् ]**

( इससे स्नान करते समय बांये हाथ से घण्टा बजायें, और दाहिने हाथ से जल से शंख भरके स्नान करावे ) [इस अवसर में **इदंवि.** .. इस मंत्र से शालग्राम जी का स्नान करावे]

यह ध्यान रखना चाहिये कि यदि नित्य न बने तो व्रतोत्सव पर्वदिन महापूजा आदि में अधोलिखित मन्त्र से पंचामृत से स्नान करावे, इसके पीछे एक तुलसीपत्र से गंध लेकर उद्वर्तन (उबटन) कर देवे। शालग्रामजी के सिवाय धातु या पाषाण की जो छः अंगुल से बडी देवमूर्ति हों उनको नित्य स्नान नहीं कराना चाहिये ।

**पञ्चनद्यः सरस्वतीमपियन्ति सस्रोतसः ।**
**सरस्वती तु पञ्चधा सो देशेऽभवत्सरित् ॥**
**श्रीपरशुरामाय नमः पञ्चामृतस्नानं समर्पयामि।**

## शुद्धोदकस्नानम्-

**गङ्गा च जमुना चैव गोदावरि सरस्वती।**
**नर्मदा सिन्धुकावेरी स्नानार्थं प्रतिगृह्यताम् ॥**
**श्रीपरशुरामाय नमः शुद्धोदकस्नानम् समर्पयामि।**

## वस्त्रम्-

**सर्वभूषाधिके सौम्ये लोकलज्जानिवारणे ।**
**मयोपपादिते तुभ्यं वाससी प्रतिगृह्यताम् ॥**
**तस्माद्यज्ञात्सर्व्वहुतऽऋचः सामानिजज्ञिरे ।**
**छन्दाथंसिजज्ञिरे तस्माद्यजुस्तस्मादजायत ॥७॥**
**श्रीपरशुरामाय नमः वस्त्रं समर्पयामि ।**

(इससे वस्त्र समर्पित करें)

**यज्ञोपवीतम्-**

**नवभिस्तन्तुभिर्युक्तं त्रिगुणं देवतामयम् ।**
**उपवीतं चोत्तरीयं गृहाण परमेश्वर ॥**
**तस्मादश्श्वाऽअजायन्तयेकेचोभयादतः।**
**गावोहजज्ञिरेतस्मात्तस्माजाताऽअजावयः ॥८॥**
**श्रीपरशुरामाय नमः यज्ञोपवीतं समर्पयामि ।**

(इससे यज्ञोपवीत धारण करावे)

**गन्धम्-**

**श्रीखण्डचन्दनं दिव्यं गन्धाढ्यं सुमनोहरम् ।**
**विलेपनं सुरश्रेष्ठ चन्दनं प्रतिगृह्यताम् ॥**
**तंयज्ञम्बर्हिषिप्प्रौक्षन्पुरुषञ्जातमग्रतः ॥**
**तेन देवाऽअयजन्तसाध्याऽऋषयश्श्चये ॥९॥**
**श्रीपरशुरामाय नमः गन्धं समर्पयामि ।**

(इससे गन्ध चढावे)

**अक्षतम्** (अक्षत के स्थान पर श्वेत तिल चढ़ाएँ, चावल नहीं)-

**अक्षताश्च सुरश्रेष्ठ कुंकुमाक्ताः सुशोभिताः ।**
**मया निवेदता भक्त्या गृहाण परमेश्वर ॥**
**श्रीपरशुरामाय नमः अक्षतं समर्पयामि ।**

**पुष्पाणि-**

**माल्यादीनि सुगन्धीनि मालत्यादीनि वै प्रभो ।**
**मयाऽऽनीतानि पुष्पाणि गृहाण परमेश्वर ॥**
**यत्पुरुषं व्यदधुः कतिधाव्व्यकल्पयन् ।**
**मुखंकिमस्यासीत्किम्बाहू किमूरू पादाऽउच्येते ॥१०॥**
**श्रीपरशुरामाय नमः पुष्पाणि समर्पयामि।**

(इससे पुष्प चढावे)। ध्यातब्य है कि, विष्णुको सुगन्धित पुष्प एवं पुष्प माला तथा तुलसी माला, श्रीगणेशजी को दूर्वा एवं सुगन्धित पुष्पों की माला और शिवको विल्वपत्र तथा श्वेत पुष्प की माला प्रिय है।

**तुलसीदलम्-**

**तुलसीं हेमरूपां च रत्नरूपां च मञ्जरीम्।**
**भवमोक्षप्रदां तुभ्यमर्पयामि हरिप्रियाम् ।**
**विष्णोः कर्माणि पश्यत यतोव्रतानि पस्पशे।**
**इन्द्रस्य युज्यः सखा॥**
**श्रीपरशुरामाय नमः तुलसीदलं समर्पयामि।**
(इससे तुलसी चढावे)।

**धूपम्-**

**वनस्पतिरसोद्भूतो गन्धाढ्यो गन्ध उत्तमः ।**
**आघ्रेयः सर्वदेवानां धूपोऽयं प्रतिगृह्यताम्**
**'ब्राह्मणोस्यमुखमासीद्बाहूराजन्यः कृतः।**
**ऊरूतदस्य यद्वैश्यः पद्भ्याथ्ठंशुद्रोऽअजायत ॥११॥**
**श्रीपरशुरामाय नमः धूपमाघ्रापयामि।**
(इससे धूप देवे)

**दीपम्-**

**साज्यञ्च वर्तिसंयुक्तं वह्निना योजितं मया ।**
**दीपं गृहाण देवेश त्रैलोक्यतिमिरापहम् ॥**
**चन्द्रमामनसो जातश्चक्षोः सूर्य्योऽअजायत ।**
**श्रोत्राद्वायुश्श्चप्राणश्श्चमुखाग्निरजायत ॥१२॥**
**श्रीपरशुरामाय नमः दीपं दर्शयामि ।**
(इससे दीपक दिखावे)

**नैवेद्यम्-**

**नैवेद्यं गृह्यतां देव भक्तिं मे ह्यचलां कुरु।**
**ईप्सितं मे वरं देहि परत्र च परां गतिम्॥**
**शर्कराखण्डखाद्यानि दधिक्षीरघृतानि च ।**
**आहारं भक्ष्यभोज्यं च नैवेद्यं प्रतिगृह्यतां ॥**
**नाभ्याऽआसीदन्तरिक्षᳬंशीर्ष्णोद्यौः समवर्त्तत ।**
**पद्भ्याम्भूमिर्दिशः श्रोत्रात्तथालोकाँ२ऽअकल्पयन् ॥१३॥"**

**[ इति मन्त्रेण तुलसीदलेन सम्प्रोक्ष्य नैवेद्योपरि तुलसी निधाय धेनुमुद्रां प्रदर्श्य सव्यहस्तस्यांगुलीः समानाः कृत्वा नैवेद्यं समर्पयेत् । यथा-ॐ प्राणाय स्वाहा, ॐ अपानाय स्वाहा, ॐ व्यानाय स्वाहा, ॐ उदानाय स्वाहा, ॐ समानाय स्वाहा । इति समर्प्य मध्ये पानीयं दत्त्वा आचमनीयं च समर्पयामि श्रीपरशुरामाय नमः ।**

इससे नैवेद्य अर्पण करे । यथा- (नैवेद्य के पदार्थ को भगवान् श्रीपरशुराम के सामने रखकर तुलसीदल से प्रोक्षण करके तुलसीपत्र नैवेद्य पर रख देवे और धेनुमुद्रा दिखाकर दाहिने हाथकी अंगुलियों को समान करके **ॐ प्राणाय स्वाहा** इत्यादि से नैवेद्य अर्पण करे । और पीछे मध्य में जलपान कराके आचमन करावे)

**ऋतुफलम्-**

**इदं फलं मया देव स्थापितं पुरतस्तव ।**
**तेन मे सफलावाप्तिर्भवेज्जन्मनि जन्मनि ॥**
**श्रीपरशुरामाय नमः ऋतुफलं समर्पयामि।**

**तांबूलम्-**

**पूगीफलं महद्दिव्यं नागवल्लीदलैर्युतम् ।**
**एलाचूर्णादिसंयुक्तं तांबूलं प्रतिगृह्यताम् ।**

यत्पुरुषेणहविषा देवायज्ञमतन्वत ।
वसन्तोस्यासीदाज्यं ग्रीष्मम्ऽइध्मः शरद्धविः ॥१४॥
श्रीपरशुरामाय नमः ताम्बूलं समर्पयामि
(इससे ताम्बूल समर्पण करे)

## दक्षिणा

हिरण्यगर्भगर्भस्थं हेमबीजं विभावसोः ।
अनन्तपुण्यफलदमतः शान्तिं प्रयच्छ मे ॥
हिरण्यगर्भः समवर्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेकऽआसीत्॥
सदाधार पृथिवीन्द्यामुतेमांकस्मै देवाय हविषाव्विधेम ॥१५॥
श्रीपरशुरामाय नमः दक्षिणां समर्पयामि ।

(इससे दक्षिणा सर्मपण करे । और छत्र, चामर, पाटुका, दर्पण आदि राजोपचार का ध्यान करे)

## आरार्तिक्यम्-

कदलीगर्भसम्भूतं कर्पूरं च प्रदीपितम् ॥
आरार्तिक्यमहं कुर्वे पश्य मे वरदो भव ॥

ॐ इदन्थ्ठं हविः प्प्रजननम्मेऽअस्तु दशवीरन्थ्ठं सर्व्वगणन्थ्ठं स्वस्तये । आत्मसनि प्प्रजासनि पशुसनि लोकसन्न्यभयसनि॥ अग्निः प्प्रजांबहुलाम्मेकरोत्वन्नम्पयोरेतोऽअस्मासुधत्त ॥१६॥

इति मन्त्रेण कर्पूरं घृतवर्तिकां वा प्रज्वाल्य॥

ॐ श्रीश्चतेलक्ष्मीश्च पत्न्यावहोरात्रे पार्श्वे नक्षत्राणि रूपमश्विनौ व्यात्तम् । इष्णन्निषाणामुम्मऽइषाण सर्वलोकम्मऽइषाण ॥

इति मन्त्रेण तुलसीपुष्पयुक्तजलेन आरार्तिकोपरि मण्डलं कुर्यात्। स्थितः सन् वामकरेण घण्टानादं कृत्वा दक्षिणकरेण आरार्तिकां शंखमपि भ्रामयेत् ॥

**कदलीगर्भ... इदश्रृंहवि...** इन मंत्रों से कपूर किंवा घृतबत्तियों को जलाकर श्रीश्चते... इस मंत्र से हाथ में तुलसी-पुष्पयुक्त जल लेकर उसके चारो तरफ मंडल कर देवे । फिर खडा होके बांये हाथ से घण्टा बजावे और दाहिने हाथ से धीरे धीरे आरती उतारे और शंख का भी परिभ्रमण करें ।

**अत्रावसरे-**

**परशुज्ज्वलहस्ताब्जो जटामण्डलमण्डितः ।**
**ददातुचिरञ्जीवित्वं प्रसन्नात्माभृगूद्वहः ॥**
**शान्ताकारं भुजगशयनं पद्मनाभं सुरेशं**
**विश्वाधारं गगनसदृशं मेघवर्णं शुभाङ्गम् ।**
**लक्ष्मीकान्तं कमलनयनं योगिभिर्ध्यानगम्यं**
**वन्दे विष्णुं भवभयहरं सर्वलोकैकनाथम् ॥**
**नमोऽस्त्वनन्ताय सहस्रमूर्तये**
**सहस्र पादाक्षिशिरोरुबाहवे ।**
**सहस्रनाम्ने पुरुषाय शाश्वते**
**सहस्र कोटीयुगधारिणे नमः ॥**
**नमः कमलनाभाय नमस्ते जलशायिने ।**
**नमस्ते केशवानन्त वासुदेव नमोऽस्तु ते ॥**
**वासनाद्वासुदेवस्य वासितं भुवनत्रयम्।**
**सर्वभूतनिवासोऽसि वासुदेव नमोस्तु ते ॥**
**नमो ब्रह्मण्यदेवाय गोब्राह्मणहिताय च ।**
**जगद्धिताय कृष्णाय गोविन्दाय नमो नमः॥**

**इत्यादिश्लोकान्पठित्वा नानाविध-वादित्रादीनि वादयेत्**
**श्रीपरशुरामाय नमः कर्पूरनीराजनं समर्पयामि ।**

आरती उतारने के समय **परशुज्ज्वल.... शान्ताकारं...**

**नमोस्त्वनन्ताय...** आदि श्लोकों को पढे और शंख, भेरी, मृदंग, घण्टा, घढावल आदि को बजावे । पीछे शखोदक का छिंटा और आरती का आतप देवे। इस प्रकार आरती करें ।

**पुष्पाञ्जलिः-**

**नानासुगन्धपुष्पाणि यथाकालोद्भवानि च ।**
**पुष्पाञ्जलिं मया दत्तं गृहाण परमेश्वर ॥**
**यज्ञेनयज्ञमयजन्तदेवास्तानि धर्माणिप्रथमान्यासन् ।**
**तेहनाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः ॥**
**श्रीपरशुरामाय नमः । मन्त्रपुष्पाञ्जलिं नमस्कारं समर्पयामि ।**
(इससे मन्त्रपुष्पाञ्जलि देवे और नमस्कार करे)

**प्रदक्षिणा-**

**यानि कानि च पापानि जन्मान्तरकृतानि च ।**
**तानि सर्वाणि नश्यन्तु प्रदक्षिणपदेपदे ॥**
**सप्तास्या सन्परिधयस्त्रिः सप्त समिधः कृताः ।**
**देवा यद्यज्ञन्तन्वानाऽ अबध्नन्पुरुषम्पशुम् ॥१७॥**
**श्रीपरशुरामाय नमः प्रदक्षिणां समर्पयामि ।**

इससे प्रदक्षिणा (परिक्रमा करे। ध्यान रहे कि एक परिक्रमा गणेश की, दो सूर्य की, तीन शिव की, चार भगवान् श्रीपरशुराम की, और सात पीपल की करना चाहिये ।

**क्षमाप्रार्थना-**

**कायेन वाचा मनसेन्द्रियैर्वा**
**बुद्ध्याऽऽत्मना वा प्रकृतिस्वभावात् ।**
**करोमि यद्यत्सकलं परस्मै**
**नारायणायेति समर्पये तत् ॥**

( इससे क्षमा प्रार्थना करे, अर्थात् हाथ जोडकर कहे कि, मैंने काया

वाक्य, मन, इन्द्रियां, बुद्धि वा प्रकृति के स्वभाव से जो कुछ किया है वह नारायण के लिए समर्पित है)।

**देवतीर्थ ( चरणामृत ) ग्रहणम्-**

**प्रह्लादनारदपराशरपुण्डरीक**
**व्यासाम्बरीषशुकशौनकभीष्मकाद्याः।**
**रुक्मांगदार्जुनवशिष्ठविभीषणाद्या**
**एतानहं परमभागवतान्नमामि ॥१॥**

**हनुमद्-गरुड-नारद-सनक-सनन्दन-सनातन- सनत्कुमार -जय- विजय-शील सुशीलादि-समस्तभगवद्भक्तानां देवतीर्थार्पणं कृत्वा पश्चात्**

**विष्णुपादाभिषिक्तं यः पात्रेणैव पिबेज्जलम् ।**
**सर्वपापविनिर्मुक्तः स याति परमां गतिम् ॥१॥**
**अकालमृत्युहरणं सर्वव्याधिविनाशनम् ।**
**विष्णुपादोदकं पीत्वा पुनर्जन्म न विद्यते ॥२॥**
**इति पात्रान्तरेण स्वयमेव सर्वं पिबेत् ।**

( इससे चरणामृत ग्रहण करे यथा-प्रथम में आचमनी भरके **प्रह्लाद नारदादि....**भगवद्भक्तों को देने का ध्यान करे और पीछे **विष्णुपादाभिषि... अकालमृ...**इन मन्त्रों से पात्रांतर से स्वयं पीवे।)

**प्रथमं कायशुद्ध्यर्थं द्वितीयं धर्मसाधनम्।**
**तृतीयं मोक्षदं प्रोक्तं त्रिधा तीर्थजलं पिबेत् ॥१॥**

भक्तगण चरणामृत की जो तीन आचमनी लेकर पीते हैं उसका यह कारण है कि, पहला शरीर शुद्धि के वास्ते, दूसरा धर्मसाधन के वास्ते और तीसरा मोक्ष देनेवाला कहा गया है। इसलिये तीन बार तीर्थ (चरणामृत) पीना चाहिये।

**इति श्रीपरशुरामपूजाप्रयोगः ॥**

## ॥ पञ्चायतन-आरती ॥

करुणापारावारं कलिमलपरिहारं
कद्रूसुतशयितारं करधृतकह्लारम् ।
घनपटलाभशरीरं कमलोद्भवपितरं
कलये विष्णुमुदारं कमलाभर्त्तारम् ॥
जय देव जय देव जय केशव हर
गजमुख सवितर्नगतनयेऽहं चरणौ तव कलये ॥
जय देव जय देव...॥ १॥

भूधरजारतिलीलं मङ्गलकरशीलं
भुजगेशस्मृतिलोलं भुजगावलिमालम् ।
भूषाऽऽकृतिमतिविमलं संधृतगाङ्गजलं
भूयो नौमि कृपालं भूतेश्वरमतुलम् ॥
जय देव... ॥२॥

विघ्नारण्यहुताशं विहितानयनाशं
विपदवनीधरकुलिशं विधृतांकुशपाशम् ।
विजयार्कज्वलिताशं विदलितभवपाशं
विनताः स्मो वयमनिशं विद्याविभवेशम् ।
जय देव... ॥३॥

कश्यपसूनुमुदारं कालिन्दीपितरं
कालत्रितयविहारं कामुकमन्दारम् ।
कारुण्याब्धिमपारं कालानलमुदरं
कारणतत्त्वविचारं कामय ऊष्मकरम् ।
जय देव....॥४॥

निगमैर्नुतपदकमले निहतासुरजाले
हस्ते धृतकरवाले निर्जरजनपाले ।
नितरां कृष्णकृपाले निरवधिगुणलीले
निर्जरनुतपदकमले नित्योत्सवशीले ॥
जय देव...॥५॥

सुशान्तिर्भवतु । वृद्धिशतानि भवन्तु । ॐ विष्णवे नमः। ॐ विष्णवे नमः। ॐ विष्णवे नमः।

अनेन षोडशोपचारपूजनारार्तिकेन श्रीपरशुरामः प्रीयतां न मम॥

ॐ तत्सद्ब्रह्मार्पणमस्तु ।

## ॥ इति श्रीपरशुरामपूजनविधिः समाप्तः ॥

प्रीणातु भगवान् वेदः प्रीणन्तु सर्वदेवताः ।
प्रीणन्तु पितरः सर्वे प्रीणन्तु च महर्षयः ॥
॥ बलं विष्णोः प्रवर्धताम् ॥

## ॥ श्रीपरशुरामस्तोत्रम् ॥

कराभ्यां परशुं चापं दधानं रेणुकात्मजं।
जामदग्न्यं भजे रामं भार्गवं क्षत्रियान्तकं॥१॥

नमामि भार्गवं रामं रेणुका चित्तनन्दनं।
मोचितंबार्तिमुत्पातनाशनं क्षत्रनाशनम्॥२॥

भयार्तस्वजनत्राणतत्परं धर्मतत्परम्।
गतगर्वप्रियं शूरं जमदग्निसुतं मतम्॥३॥

वशीकृतमहादेवं दृप्त भूप कुलान्तकम्।
तेजस्विनं कार्तवीर्यनाशनं भवनाशनम्॥४॥

परशुं दक्षिणे हस्ते वामे च दधतं धनुः।
रम्यं भृगुकुलोत्तंसं घनश्यामं मनोहरम्॥५॥

शुद्धं बुद्धं महाप्रज्ञापण्डितं रणपण्डितं।
रामं श्रीदत्तकरुणाभाजनं विप्ररंजनम्॥६॥

मार्गणाशोषिताब्ध्यंशं पावनं चिरजीवनम्।
य एतानि जपेन्द्रामनामानि स कृति भवेत्॥७॥

॥ इति श्री प. श्री वासुदेवानंदसरस्वतीविरचितं श्री परशुराम स्तोत्रं संपूर्णम् ॥

## ॥ अथ श्रीपरशुरामस्तुतिः ॥

कुलाचला यस्य महीं द्विजेभ्यः
प्रयच्छतः सोमदृपत्त्वमापुः।
वभूवुरुत्सर्गजलं समुद्राः
स रैणुकेयः श्रियमातनोतु ॥१॥

नाशिष्यः किमभूद्भवः किमभवन्नापुत्रिणी रेणुका
नाभूद्विश्वमकार्मुकं किमिति यः प्रीणातु रामत्रपा।
विप्राणां प्रतिमन्दिरं मणिगणोन्मिश्राणि दण्डाहते-
र्नाब्धीनां स मया यमोऽपि महिषेणाम्भांसि नोद्वाहितः॥२॥

पयाद्वो यमदग्निवंश तिलको वीरव्रतालङ्कृतो
रामो नाम मुनीश्वरो नृपवधे भास्वत्कुठारायुधः।
येनाशेषहताहिताङ्गरुधिरैः सन्तर्पिताः पूर्वजा
भक्त्या चाश्वमखे समुद्रवसना भुर्हन्तकारीकृता॥३॥

द्वारे कल्पतरुं गृहे सुरगवीं चिन्तामणीनङ्गदे
पीयूषं सरसीषु विप्रवदने विद्याश्चतस्त्रो दश॥
एवं कर्तुमयं तपस्यति भृगोर्वंशावतंसो मुनिः
पायाद्वोऽखिलराजकक्षयकरो भूदेवभूषामणिः॥४॥

इति परशुरामस्तुतिः।

## ॥ श्रीपरशुरामाष्टकम् ॥

शुभ्रदेहं सदा क्रोधरक्तेक्षणं
भक्तपालं कृपालुं कृपावारिधिं
विप्रवंशावतंसं धनुर्धारिणम् ।
भव्ययज्ञोपवीतं कलाकारिणं
यस्य हस्ते कुठारं महातीक्ष्णकम्
रेणुकानन्दनं जामदग्न्यं भजे ॥१॥

सौम्यरूपं मनोज्ञं सुरैर्वन्दितं
जन्मतः ब्रह्मचारिव्रते सुस्थिरं
पूर्णतेजस्विनं योगयोगीश्वरम् ।
पापसन्तापरोगादिसंहारिणं
दिव्यभव्यात्मकं शत्रुसंहारकं
रेणुकानन्दनं जामदग्न्यं भजे ॥२॥

ऋद्धिसिद्धिप्रदाता विधाता भुवो
ज्ञानविज्ञानदाता प्रदाता सुखं
विश्वधाता सुत्राताऽखिलं विष्टपम् ।
तत्वज्ञाता सदा पातु माम् निर्बलं
पूज्यमानं निशानाथभासं विभुं
रेणुकानन्दनं जामदग्न्यं भजे ॥३॥

दुःख दारिर्द्यदावाग्नये तोयदं
बुद्धिजाड्यं विनाशाय चौतन्यदं
वित्तमैश्वर्यदानाय वित्तेश्वरम् ।
सर्वशक्तिप्रदानाय लक्ष्मीपतिं
मङ्गलं ज्ञानगम्यं जगत्पालकं
रेणुकानन्दनं जामदग्न्यं भजे ।।४।।

यश्च हन्ता सहस्रार्जुनं हैहयं
त्रैगुणं सप्तकृत्वा महाक्रोधनैः
दुष्टशून्या धरा येन सत्यं कृता ।
दिव्यदेहं दयादानदेवं भजे
घोररूपं महातेजसं वीरकं
रेणुकानन्दनं जामदग्न्यं भजे ।। ५ ।।

मारयित्वा महादुष्ट भूपालकान्
येन शोणेन कुण्डेकृतं तर्पणं
येन शोणीकृता शोणनाम्नी नदी ।
स्वस्य देशस्य मूढा हताः द्रोहिणः
स्वस्य राष्ट्रस्य शुद्धिःकृता शोभना
रेणुकानन्दनं जामदग्न्यं भजे ।। ६।।

दीनत्राता प्रभो पाहि माम् पालक!
रक्ष संसाररक्षाविधौ दक्षक!
देहि संमोहनी भाविनी पावनी ।
स्वीय पादारविन्दस्य सेवा परा
पूर्णमारुण्यरूपं परं मञ्जुलं
रेणुकानन्दनं जामदग्न्यं भजे ।।७।।

ये जयोद्घोषकाः पादसम्पूजकाः
सत्वरं वाञ्छितं ते लभन्ते नराः
देहगेहादिसौख्यं परं प्राप्य वै ।
दिव्यलोकं तथान्ते प्रियं यान्ति ते
भक्तसंरक्षकं विश्वसम्पालकं
रेणुकानन्दनं जामदग्न्यं भजे ॥ ८ ॥

॥ इति श्रीपरशुरामाष्टकं सम्पूर्णम् ॥

## ॥ श्रीपरशुराम अष्टाविंशति नामस्तोत्रम् ॥

ऋषिरुवाच ।

यमाहुर्वासुदेवांशं हैहयानां कुलान्तकम् ।
त्रिःसप्तकृत्वो य इमां चक्रे निःक्षत्रियां महीम् ॥ १ ॥

दुष्टं क्षत्रं भुवो भारमब्रह्मण्यमनीनशत् ।
तस्य नामानि पुण्यानि वच्मि ते पुरुषर्षभ ॥ २ ॥

भूभारहरणार्थाय मायामानुषविग्रहः ।
जनार्दनांशसम्भूतः स्थित्युत्पत्त्यप्ययेश्वरः ॥ ३ ॥

भार्गवो जामदग्न्यश्च पित्राज्ञापरिपालकः ।
मातृप्राणप्रदो धीमान् क्षत्रियान्तकरः प्रभुः ॥ ४ ॥

रामः परशुहस्तश्च कार्तवीर्यमदापहः ।
रेणुकादुःखशोकघ्नो विशोकः शोकनाशनः ॥ ५ ॥

नवीननीरदश्यामो रक्तोत्पलविलोचनः ।
घोरो दण्डधरो धीरो ब्रह्मण्यो ब्राह्मणप्रियः ॥ ६ ॥

तपोधनो महेन्द्रादौ न्यस्तदण्डः प्रशान्तधीः ।
उपगीयमानचरितः सिद्धगन्धर्वचारणैः ॥ ७ ॥

जन्ममृत्युजराव्याधिदुःखशोकभयातिगः ।
इत्यष्टाविंशतिर्नाम्नामुक्ता स्तोत्रात्मिका शुभा ॥ ८ ॥

अनया प्रीयतां देवो जामदग्न्यो महेश्वरः ।
नेदं स्तोत्रमशान्ताय नादान्तायातपस्विने ॥ ९ ॥

नावेदविदुषे वाच्यमशिष्याय खलाय च ।
नासूयकायानृजवे न चानिर्दिष्टकारिणे ॥ १० ॥

इदं प्रियाय पुत्राय शिष्यायानुगताय च ।
रहस्यधर्मो वक्तव्यो नान्यस्मै तु कदाचन ॥ ११ ॥

॥ इति परशुरामाष्टाविंशति नामस्तोत्रसम्पूर्णम् ॥

## ॥ श्रीरामद्वादशनामस्तोत्रम् ॥

अस्य श्रीरामद्वादशनामस्तोत्रमहामन्त्रस्य, निटिलाक्षो भगवान् ऋषिः, अनुष्टुप्छन्दः, श्रीरामचन्द्रो देवता, श्रीरामचन्द्रप्रीत्यर्थे जपे विनियोगः।

ॐ प्रथमं श्रीधरं विद्याद्द्वितीयं रघुनायकम् ।
तृतीयं रामचन्द्रं च चतुर्थं रावणान्तकम् ॥१॥

पञ्चमं लोकपूज्यं च षष्ठमं जानकीपतिम् ।
सप्तमं वासुदेवं च श्रीरामं चाष्टमं तथा ॥२॥

नवमं दूर्वादलश्यामं दशमं लक्ष्मणाग्रजम् ।
एकादशं च गोविन्दं द्वादशं सेतुबन्धनम् ॥३॥

द्वादशैतानि नामानि यः पठेच्छ्रद्धयान्वितः ।
अर्धरात्रे तु द्वादश्यां कुष्ठदारिद्र्यनाशनम् ॥४॥

अरण्ये चैव सङ्ग्रामे अग्नौ भयनिवारणम् ।
ब्रह्महत्या सुरापानं गोहत्याऽऽदि निवारणम् ॥५॥

सप्तवारं पठेन्नित्यं सर्वारिष्टनिवारणम् ।
ग्रहणे च जले स्थित्वा नदीतीरे विशेषतः ।
अश्वमेधशतं पुण्यं ब्रह्मलोके गमिष्यति ॥६॥

इति श्रीस्कन्दपुराणे उत्तरखण्डे श्रीउमामहेश्वरसंवादे श्रीरामद्वादशनामस्तोत्रं सम्पूर्णम्।

## ॥ अथ त्रैलोक्यविजयं श्रीकृष्णकवचम् ॥

नारद उवाच-

भगवञ्छ्रोतुमिच्छामि किं मन्त्रं भगवान्हरः ।
कृपया-ऽदात् परशुरामाय स्तोत्रं च वर्म च ॥१॥

कोवाऽस्य मन्त्रस्याराध्यः किं फलं कवचस्य च ।
स्तवनस्य फलं किं वा तद्भवान्वक्तुमर्हसि ॥२॥

नारायण उवाच-

मन्त्राराध्यो हि भगवान् परिपूर्णतमः स्वयम् ।
गोलोकनाथः श्रीकृष्णो गोप-गोपीश्वरः प्रभुः ॥३॥

त्रैलोक्यविजयं नाम कवचं परमाद्भुतम् ।
स्तवराजं महापुण्यं भूतियोग-समुद्भवम् ॥४॥

मन्त्रं कल्पतरुं नाम सर्वकाम-फलप्रदम् ।
ददौ परशुरामाय रत्नपर्वत-सन्निधौ ॥५॥

स्वयंप्रभा-नदीतीरे पारिजात-वनान्तरे ।
आश्रमे लोकदेवस्य माधवस्य च सन्निधौ ॥६॥

महादेव उवाच -

वत्सागच्छ महाभाग भृगुवंश-समुद्भव ।
पुत्राधिकोऽसि प्रेम्णा मे कवचग्रहणं कुरु ॥७॥

शृणु राम प्रवक्ष्यामि ब्रह्माण्डे परमाद्भुतम् ।
त्रैलोक्यविजयं नाम श्रीकृष्णस्य जयावहम् ॥८॥

श्रीकृष्णेन पुरा दत्तं गोलोके राधिकाश्रमे ।
रासमण्डल-मध्ये च मह्यं वृन्दावने वने ॥९॥

अतिगुह्यतरं तत्त्वं सर्व-मन्त्रौघविग्रहम् ।
पुण्यात्पुण्यतरं चैव परं स्नेहाद्वदामि ते ॥१०॥

यद्धृत्वा पठनाद्देवी मूलप्रकृतिरीश्वरी ।
शुंभं निशुंभं महिषं रक्तबीजं जघान ह ॥११॥

यद्धृत्वाऽहं च जगतां संहर्ता सर्वतत्ववित् ।
अवध्यं त्रिपुरं पूर्वं दुरन्तमपि लीलया ॥१२॥

यद्धृत्वा पठनाद्ब्रह्मा ससृजे सृष्टिमुत्तमाम् ।
यद्धृत्वा भगवाञ्छेषो विधत्ते विश्वमेव च ॥१३॥

यद्धृत्वा कूर्मराजश्च शेषं धत्ते हि लीलया ।
यद्धृत्वा भगवान्वायुः विश्वाधारो विभुः स्वयम् ॥१४॥

यद्धृत्वा वरुणः सिद्धः कुबेरश्च धनेश्वरः ।
यद्धृत्वा पठनादिन्द्रो देवानामधिपः स्वयम् ॥१५॥

यद्धृत्वा भाति भुवने तेजोराशिः स्वयं रविः ।
यद्धृत्वा पठनाच्चन्द्रो महाबल-पराक्रमः ॥१६॥

अगस्त्यः सागरान्सप्त यद्धृत्वा पठनात्पपौ ।
चकार तेजसा जीर्णं दैत्यं वातापिसंज्ञकम् ॥१७॥

यद्धृत्वा पठनाद्देवी सर्वाधारा वसुन्धरा ।
यद्धृत्वा पठनात्पूता गङ्गा भुवनपावनी ॥१८॥

यद्धृत्वा जगतां साक्षी धर्मो धर्मभृतां वरः ।
सर्व-विद्याधिदेवी सा यच्च धृत्वा सरस्वती ॥१९॥

यद्धृत्वा जगतां लक्ष्मी-रन्नदात्री परात्परा ।
यद्धृत्वा पठनाद्वेदान् सावित्री सा सुषाव च ॥२०॥

वेदाश्च धर्मवक्तारो यद्धृत्वा पठनाद् भृगो ।
यद्धृत्वा पठनाच्छुद्ध-स्तेजस्वी हव्यवाहनः ।
सनत्कुमारो भगवान्यद्धृत्वा ज्ञानिनां वरः ॥२१॥

दातव्यं कृष्ण-भक्ताय साधवे च महात्मने ।
शठाय परशिष्याय दत्वा मृत्युमवाप्नुयात् ॥२२॥

त्रैलोक्यविजयस्यास्य कवचस्य प्रजापतिः ।
ऋषिश्छन्दश्च गायत्री देवो रासेश्वरः स्वयम् ॥२३॥

त्रैलोक्यविजय-प्राप्तौ विनियोगः प्रकीर्तितः ।
परात्परं च कवचं त्रिषु लोकेषु दुर्लभम् ॥२४॥

प्रणवो मे शिरः पातु श्रीकृष्णाय नमः सदा ।
पायात्कपालं कृष्णाय स्वाहा पञ्चाक्षरः स्मृतः ॥२५॥

कृष्णेति पातु नेत्रे च कृष्ण स्वाहेति तारकम् ।
हरये नम इत्येवं भ्रुलतां पातु मे सदा ॥२६॥

ॐ गोविन्दाय स्वाहेति नासिकां पातु सन्ततम् ।
गोपालाय नमो गण्डौ पातु मे सर्वतः सदा ॥२७॥

ॐ नमो गोपाङ्गनेशाय कर्णौ पातु सदा मम ।
ॐ कृष्णाय नमः शश्वत्पातु मेऽधर-युग्मकम् ॥२८॥

ॐ गोविन्दाय स्वाहेति दन्तौघं मे सदाऽवतु ।
पातु कृष्णाय दन्ताधो दन्तोर्ध्वं क्लीं सदाऽवतु ॥२९॥

ॐ श्रीकृष्णाय स्वाहेति जिह्विकां पातु मे सदा ।
रासेश्वराय स्वाहेति तालुकं पातु मे सदा ॥३०॥

राधिकेशाय स्वाहेति कण्ठं पातु सदा मम ।
नमो गोपाङ्गनेशाय वक्षः पातु सदा मम ॥३१॥

ॐ गोपेशाय स्वाहेति स्कन्धं पातु सदा मम ।
नमः किशोर-वेषाय स्वाहा पृष्टं सदाऽवतु ॥३२॥

उदरं पातु मे नित्यं मुकुन्दाय नमः सदा ।
ॐ ह्रीं क्लीं कृष्णाय स्वाहेति करौ पातु सदा मम ॥३३॥

ॐ विष्णवे नमो बाहुयुग्मं पातु सदा मम ।
ॐ ह्रीं भगवते स्वाहा नखं पातु मे सदा ॥३४॥

ॐ नमो नारायणायेति नखरन्ध्रं सदाऽवतु ।
ॐ ह्रीं ह्रीं पद्मनाभाय नाभिं पातु सदा मम ॥३५॥

ॐ सर्वेशाय स्वाहेति कङ्कालं पातु मे सदा ।
ॐ गोपीरमणाय स्वाहा नितम्बं पातु मे सदा ॥३६॥

ॐ गोपीरमणनाथाय पादौ पातु सदा मम ।
ॐ ह्रीं क्लीं रसिकेशाय स्वाहा सर्वं सदाऽवतु॥३७॥

ॐ केशवाय स्वाहेति मम केशान्सदाऽवतु ।
नमः कृष्णाय स्वाहेति ब्रह्मरन्ध्रं सदाऽवतु ॥३८॥

ॐ माधवाय स्वाहेति मे लोमानि सदाऽवतु ।
ॐ ह्रीं श्रीं रसिकेशाय स्वाहा सर्वं सदाऽवतु ॥३९॥

परिपूर्णतमः कृष्णः प्राच्यां मां सर्वदाऽवतु ।
स्वयं गोलोकनाथो मामाग्नेयां दिशि रक्षतु ॥४०॥

पूर्णब्रह्मस्वरूपश्च दक्षिणे मां सदाऽवतु ।
नैरित्यां पातु मां कृष्णः पश्चिमे पातु मां हरिः ॥४१॥

गोविन्दः पातु मां शश्वद्वायव्यां दिशि नित्यशः ।
उत्तरे मां सदा पातु रसिकानां शिरोमणिः ॥४२॥

ऐशान्यां मां सदा पातु वृन्दावन-विहारकृत् ।
वृन्दावनी-प्राणनाथः पातु मामूर्ध्वदेशतः ॥४३॥

सदैव माधवः पातु बलिहारी महाबलः ।
जले स्थले चान्तरिक्षे नृसिंहः पातु मां सदा ॥४४॥

स्वप्ने जागरणे शश्वत्पातु मां माधवः सदा ।
सर्वान्तरात्मा निर्लिप्तः पातु मां सर्वतो विभुः ॥४५॥

इति ते कथितं वत्स सर्वमन्त्रौघ-विग्रहम् ।
त्रैलोक्यविजयं नाम कवचं परमाद्‌भुतम् ॥४६॥

मया श्रुतं कृष्ण-वक्त्रात् प्रवक्तव्यं न कस्यचित् ।
गुरुमभ्यर्च्य विधिवत् कवचं धारयेत् यः ॥४७॥

कण्ठे वा दक्षिणे बाहौ सोऽपि विष्णुर्न संशयः ।
स च भक्तो वसेद्यत्र लक्ष्मीर्वाणी वसेत्ततः ॥४८॥

यदि स्यात्सिद्धकवचो जीवन्मुक्तो भवेत्तु सः ।
निश्चितं कोटिवर्षाणां पूजायाः फलमाप्नुयात् ॥४९॥

राजसूय-सहस्राणि वाजपेय-शतानि च ।
अश्वमेधायुतान्येव नरमेधायुतानि च ॥५०॥

महादानानि यान्येव प्रादक्षिण्यं भुवस्तथा ।
त्रैलोक्यविजयस्यास्य कलां नार्हन्ति षोडशीम् ॥५१॥

व्रतोपवास-नियमं स्वाध्यायाध्ययनं तपः ।
स्नानं च सर्वतीर्थेषु नास्यार्हन्ति कलामपि ॥५२॥

सिद्धत्वममरत्वं च दासत्वं श्रीहरेरपि ।
यदि स्यात्सिद्धकवचः सर्वं प्राप्नोति निश्चितम् ॥५३॥

स भवेत्सिद्धकवचो दशलक्षं जपेत्तु यः ।
यो भवेत्सिद्धकवचः सर्वज्ञः स भवेध्रुवम् ॥५४॥

इदं कवच-मज्ञात्वा भजेत्कृष्णं सुमन्दधीः ।
कोटिकल्पं प्रजप्तोऽपि न मन्त्रः सिद्धि-दायकः ॥५५॥

गृहीत्वा कवचं वत्स महीं निःक्षत्रियं कुरु ।
त्रिस्सप्तकृत्वो निश्शंकः सदानन्दो हि लीलया ॥५६॥

राज्यं देयं शिरो देयं प्रणा देयाश्च पुत्रक ।
एवं भूतं च कवचं न देयं प्राणसंकटे ॥५७॥

॥ इति त्रैलोक्यविजयं श्रीकृष्णकवचं सम्पूर्णम् ॥

**( इति श्रीब्रह्मवैवर्तमहापुराणे तृतीये गणपतिखण्डे/नारद-नारायणसंवादे परशुरामाय श्रीकृष्णकवच-प्रदानं नाम एकत्रिंशत्तमोऽध्यायः )**

**भावार्थः**- नारद ने पूछा- भगवन् ! अब मेरी यह सुनने की इच्छा है कि भगवान् शंकर ने दयावश परशुराम को कौन-सा मन्त्र तथा कौन-सा स्तोत्र और कवच दिया था? उस मन्त्र के आराध्य देवता कौन हैं? कवच धारण करने का क्या फल है? तथा स्तोत्र पाठ से किस फल की प्राप्ति होती है? वह सब आप बतलाइये। नारायण बोले- नारद! उस मन्त्र के आराध्य देव गोलोकनाथ गोपगोपीश्वर सर्वसमर्थ परिपूर्णतम स्वयं भगवान श्रीकृष्ण हैं। शंकर ने रत्नपर्वत के निकट स्वयंप्रभा नदी के तट पर पारिजात वन के मध्य स्थित आश्रम में लोकों के देवता माधव के समक्ष परशुराम को

**'त्रैलोक्यविजय'** नामक परम अद्भुत कवच, विभूति योग से सम्भूत महान पुण्यमय 'स्तवराज' नामवाला स्तोत्र और सम्पूर्ण कामनाओं का फल प्रदान करने वाला, 'मन्त्रकल्पतरु' नामक मन्त्र प्रदान किया था। महादेव जी ने कहा– भृगुवंशी महाभाग वत्स! तुम प्रेम के कारण मुझे पुत्र से भी अधिक प्रिय हो, अतः आओ कवच ग्रहण करो। राम! जो ब्रह्माण्ड में परम अद्भुत तथा विजयप्रद है, श्रीकृष्ण के उस 'त्रैलोक्यविजय' नामक कवच का वर्णन करता हूँ, सुनो। पूर्वकाल में श्रीकृष्ण ने गोलोक में स्थित वृन्दावन नामक वन में राधिकाश्रम में रासमण्डल के मध्य यह कवच मुझे दिया था। यह अत्यन्त गोपनीय तत्त्व, सम्पूर्ण मन्त्रसमुदाय का विग्रहस्वरूप, पुण्य से भी बढ़कर पुण्यतर परमोत्कृष्ट है और इसे स्नेहवश मैं तुम्हें बता रहा हूँ। जिसे पढ़कर एवं धारण करके मूलप्रकृति भगवती आद्याशक्ति ने शुम्भ, निशुम्भ, महिषासुर और रक्तबीज का वध किया था। जिसे धारण करके मैं लोकों का संहारक और सम्पूर्ण तत्त्वों का जानकार हुआ हूँ तथा पूर्वकाल में जो दुरन्त और अवध्य थे, उन त्रिपुरों को खेल–ही–खेल में दग्ध कर सका हूँ। जिसे पढ़कर और धारण करके ब्रह्मा ने इस उत्तम सृष्टि की रचना की है। जिसे धारण करके भगवान शेष सारे विश्व को धारण करते हैं। जिसे धारण करके कूर्मराज शेष को लीलापूर्वक धारण किये रहते हैं। जिसे धारण करके स्वयं सर्वव्यापक भगवान वायु विश्व के आधार हैं। जिसे धारण करके वरुण सिद्ध और कुबेर धन के स्वामी हुए हैं। जिसे पढ़कर एवं धारण करके स्वयं इन्द्र देवताओं के राजा बने हैं। जिसे धारण करके तेजोराशि स्वयं सूर्य भुवन में प्रकाशित होते हैं। जिसे पढ़कर एवं धारण करके चन्द्रमा महान बल और पराक्रम से सम्पन्न हुए हैं। जिसे पढ़कर एवं धारण करके महर्षि अगस्त्य सातों समुद्रों को पी गये और उसके तेज से वातापि नामक दैत्य को पचा गये।

जिसे पढ़कर एवं धारण करके पृथ्वी देवी सबको धारण करने में समर्थ हुई हैं। जिसे पढ़कर एवं धारण करके गंगा स्वयं पवित्र होकर भुवनों को पावन करने वाली बनी हैं। जिसे धारण करके धर्मात्माओं में श्रेष्ठ धर्म लोकों के साक्षी बने हैं। जिसे धारण करके सरस्वती देवी सम्पूर्ण विद्याओं की अधिष्ठात्री देवी हुई हैं। जिसे धारण करके परात्परा लक्ष्मी लोकों को अन्न प्रदान करने वाली हुई हैं। जिसे पढ़कर एवं धारण करके सावित्री ने वेदों को जन्म दिया है। भृगुनन्दन! जिसे पढ़ एवं धारणकर वेद धर्म के वक्ता हुए हैं। जिसे पढ़कर एवं धारण करके अग्नि शुद्ध एवं तेजस्वी हुए हैं और जिसे धारण करके भगवान् सनत्कुमार को ज्ञानियों में सर्वश्रेष्ठ स्थान मिला है। जो महात्मा, साधु एवं श्रीकृष्ण भक्त हो, उसी को यह कवच देना चाहिये, क्योंकि शठ एवं दूसरे के शिष्य को देने से दाता मृत्यु को प्राप्त हो जाता है। इस त्रैलोक्यविजय कवच के प्रजापति ऋषि हैं। गायत्री छन्द है। स्वयं रासेश्वर देवता हैं और त्रैलोक्य की विजय प्राप्ति में इसका विनियोग कहा गया है। यह परात्पर कवच तीनों लोकों में दुर्लभ है। 'ॐ श्रीकृष्णाय नमः' सदा मेरे सिर की रक्षा करे। 'कृष्णाय स्वाहा' यह पञ्चाक्षर सदा कपाल को सुरक्षित रखे। 'कृष्ण' नेत्रों की तथा 'कृष्णाय स्वाहा' पुतलियों की रक्षा करे। 'हरये नमः' सदा मेरी भृकुटियों को बचावे। 'ॐ गोविन्दाय स्वाहा' मेरी नासिका की सदा रक्षा करे। 'गोपालाय नमः' मेरे गण्डस्थलों की सदा सब ओर से रक्षा करे। 'ॐ गोपाङ्गनेशाय नमः' सदा मेरे कानों की रक्षा करे। 'ॐ कृष्णाय नमः' निरन्तर मेरे दोनों ओठों की रक्षा करे। 'ॐ गोविन्दाय स्वाहा' सदा मेरी दंतपंक्तियों की रक्षा करे। 'ॐ कृष्णाय नमः' दाँतों के छिद्रों की तथा 'क्लीं' दाँतों के ऊर्ध्वभाग की रक्षा करे। 'ॐ श्रीकृष्णाय स्वाहा' सदा मेरी जिह्वा की रक्षा करे। 'रासेश्वराय स्वाहा' सदा मेरे तालु की रक्षा करे।

'राधिकेशाय स्वाहा' सदा मेरे कण्ठ की रक्षा करे। 'गोपाङ्गनेशाय नमः' सदा मेरे वक्षःस्थल की रक्षा करे। 'ॐ गोपेशाय स्वाहा' सदा मेरे कंधों की रक्षा करे। 'नमः किशोरवेशाय स्वाहा' सदा पृष्ठभाग की रक्षा करे। 'मुकुन्दाय नमः' सदा मेरे उदर की तथा 'ॐ ह्रीं क्लीं कृष्णाय स्वाहा' सदा मेरे हाथ-पैरों की रक्षा करे। 'ॐ विष्णवे नमः' सदा मेरी दोनों भुजाओं की रक्षा करे। 'ॐ ह्रीं भगवते स्वाहा' सदा मेरे नखों की रक्षा करे। 'ॐ नमो नारायणाय' सदा नख-छिद्रों की रक्षा करे। 'ॐ ह्रीं ह्रीं पद्मनाभाय नमः' सदा मेरी नाभि की रक्षा करे। 'ॐ सर्वेशाय स्वाहा' सदा मेरे कंकाल की रक्षा करे। 'ॐ गोपीरमणाय स्वाहा' सदा मेरे नितम्ब की रक्षा करे। 'ॐ गोपीरमणनाथाय स्वाहा' सदा मेरे पैरों की रक्षा करे। 'ॐ ह्रीं श्रीं रसिकेशाय स्वाहा' सदा मेरे सर्वांगों की रक्षा करे। 'ॐ केशवाय स्वाहा' सदा मेरे केशों की रक्षा करे। 'नमः कृष्णाय स्वाहा' सदा मेरे ब्रह्मरन्ध्र की रक्षा करे। 'ॐ माधवाय स्वाहा' सदा मेरे रोमों की रक्षा करे। 'ॐ ह्रीं श्रीं रसिकेशाय स्वाहा' मेरे सर्वस्व की सदा रक्षा करे। परिपूर्णतम श्रीकृष्ण पूर्व दिशा में सर्वदा मेरी रक्षा करें। स्वयं गोलोकनाथ अग्निकोण में मेरी रक्षा करें। पूर्ण ब्रह्मस्वरूप दक्षिण दिशा में सदा मेरी रक्षा करें। श्रीकृष्ण नैर्ऋत्यकोण में मेरी रक्षा करें। श्रीहरि पश्चिम दिशा में मेरी रक्षा करें। गोविन्द वायव्यकोण में नित्य-निरन्तर मेरी रक्षा करें। रसिक शिरोमणि उत्तर दिशा में सदा मेरी रक्षा करें। वृन्दावन विहारकृत सदा ईशानकोण में मेरी रक्षा करें। वृन्दावनी के प्राणनाथ ऊर्ध्वभाग में मेरी रक्षा करें। महाबली बलिहारी माधव सदैव मेरी रक्षा करें। नृसिंह जल, स्थल तथा अन्तरिक्ष में सदा मुझे सुरक्षित रखें। माधव सोते समय तथा जाग्रत-काल में सदा मेरा पालन करें तथा जो सबके आन्तरात्मा, निर्लेप और सर्वव्यापक हैं, वे भगवान सब ओर से मेरी रक्षा करें। वत्स! इस प्रकार मैंने

'त्रैलोक्यविजय' नामक कवच, जो परम अनोखा तथा समस्त मन्त्रसमुदाय का मूर्तमान् स्वरूप है, तुम्हें बतला दिया। मैंने इसे श्रीकृष्ण के मुख से श्रवण किया था। इसे जिस-किसी को नहीं बतलाना चाहिये। जो विधिपूर्वक गुरु का पूजन करके इस कवच को गले में अथवा दाहिनी भुजा पर धारण करता है, वह भी विष्णुतुल्य हो जाता है, इसमें संशय नहीं है। वह भक्त जहाँ रहता है, वहाँ लक्ष्मी और सरस्वती निवास करती हैं। यदि उसे कवच सिद्ध हो जाता है तो वह जीवन्मुक्त हो जाता है और उसे करोड़ों वर्षों की पूजा का फल प्राप्त हो जाता है। हजारों राजसूय, सैकड़ो वाजपेय, दस हजार अश्वमेध, सम्पूर्ण महादान तथा पृथ्वी की प्रदक्षिणा- ये सभी इस त्रैलोक्यविजय की सोलहवीं कला की भी समानता नहीं कर सकते। व्रत-उपवास का नियम, स्वाध्याय, अध्ययन, तपस्या और समस्त तीर्थों में स्नान- ये सभी इसकी एक कला को भी नहीं पा सकते। यदि मनुष्य इस कवच को सिद्ध कर ले तो निश्चय ही उसे सिद्धि, अमरता और श्रीहरि की दासता आदि सब कुछ मिल जाता है। जो इसका दस लाख जप करता है, उसे यह कवच सिद्ध हो जाता है और जो सिद्ध कवच होता है, वह निश्चय ही सर्वज्ञ हो जाता है। परंतु जो इस कवच को जाने बिना श्रीकृष्ण का भजन करता है, उसकी बुद्धि अत्यन्त मन्द है, उसे करोड़ों कल्पों तक जप करने पर भी मन्त्र सिद्धिदायक नहीं होता। वत्स! इस कवच को धारण करके तुम आनन्दपूर्वक निःशंक होकर अनायास ही इक्कीस बार पृथ्वी को क्षत्रियों से शून्य कर डालो। बेटा! प्राणसंकट के समय राज्य दिया जा सकता है, सिर कटाया जा सकता है और प्राणों का परित्याग भी किया जा सकता है, परंतु ऐसे कवच का दान नहीं करना चाहिये ।

## ॥ श्रीपरशुरामकृतं श्रीभद्रकालीस्तोत्रम् ॥

ब्रह्मवैवर्तपुराण, गणपतिखण्ड में श्रीनारायण नारद से कहते हैं– परशुराम और कार्तवीर्य युद्ध के समय कार्तवीर्य के मित्र राजा सुचन्द्र परशुराम से युद्ध करने आये। सुचन्द्र का परशुराम के साथ भयानक युद्ध हुआ, पर वे परास्त न हो सके। तब परशुराम ने देखा कि मुण्डमाला धारण किये हुए विकटानना भयंकरी जगज्जननी श्रीभद्रकाली सुचन्द्र की रक्षा कर रही हैं। यह देखकर श्रीपरशुराम ने शस्त्र–अस्त्र का त्याग करके महामाया की स्तुति आरम्भ की। यथा–

**परशुराम उवाच**

**नमः शङ्करकान्तायै सारायै ते नमो नमः ।**
**नमो दुर्गतिनाशिन्यै मायायै ते नमो नमः ॥**

**नमो नमो जगद्धात्र्यै जगत्कर्त्र्यै नमो नमः ।**
**नमोऽस्तु ते जगन्मात्रे कारणायै नमो नमः ॥**

**प्रसीद जगतां मातः सृष्टिसंहारकारिणि ।**
**त्वत्पादे शरणं यामि प्रतिज्ञां सार्थिकां कुरु ॥**

**त्वयि मे विमुखायां च को मां रक्षितुमीश्वरः ।**
**त्वं प्रसन्ना भव शुभे मां भक्तं भक्तवत्सले ॥**

**युष्माभिः शिवलोके च मह्यं दत्तो वरः पुरा ।**
**तं वरं सफलं कर्तुं त्वमर्हसि वरानने ॥**

**जामदग्न्यस्तवं श्रुत्वा प्रसन्नाभवदम्बिका ।**
**मा भैरित्येवमुक्त्वा तु तत्रैवान्तरधीयत ॥**

**एतद् भृगुकृतं स्तोत्रं भक्तियुक्तश्च यः पठेत् ।**
**महाभयात् समुत्तीर्णः स भवेदवलीलया ॥**

**स पूजितश्च त्रैलोक्ये त्रैलोक्यविजयी भवेत् ।**
**ज्ञानिश्रेष्ठो भवेच्चैव वैरिपक्षविमर्दकः ॥**

**परशुराम बोले**- आप शंकर जी की प्रियतमा पत्नी है. आपको नमस्कार है। सारस्वरूपा आपको बारम्बार प्रणाम है। दुर्गतिनाशिनी को मेरा अभिवादन है। मायारूपा आपको मैं बारंबार सिर झुकाता हूँ। जगद्धात्री को नमस्कार-नमस्कार। जगत्कर्मी को पुनः पुनः प्रणाम। जगज्जननी को मेरा नमस्कार प्राप्त हो। कारणरूपा आपको बारंबार अभिवादन है। सृष्टि का संहार करने वाली जगन्माता! प्रसन्न होइये। मैं आपके चरणों की शरण ग्रहण करता हूँ, मेरी प्रतिज्ञा सफल कीजिये। मेरे प्रति आपके विमुख हो जाने पर कौन मेरी रक्षा कर सकता है? भक्तवत्सले। शुभे। आप मुझ भक्त पर कृपा कीजिये। सुमुखि। पहले शिवलोक में आप लोगों ने मुझे जो वरदान दिया था, उस वर को आपको सफल करना चाहिये।

परशुराम द्वारा किये गये इस स्तवन को सुनकर अम्बिका का मन प्रसन्न हो गया और भय मत करो यो कहकर वे वहीं अन्तर्धान हो गयीं। जो मनुष्य भक्तिपूर्वक इस परशुरामकृत स्तोत्र का पाठ करता है, वह अनायास ही महान भय से छूट जाता है। वह त्रिलोकी में पूजित, त्रैलोक्यविजयी, ज्ञानियों में श्रेष्ठ और शत्रुपक्ष का विमर्दन करने वाला हो जाता है।

**॥ इति श्रीपरशुरामकृतं श्रीभद्रकालीस्तोत्रं सम्पूर्णम् ॥**

## ॥ वंशवृद्धिकरं वंशकवचम् ॥

भगवन् ! देव देवेश कृपया त्वं जगत्प्रभो ।
वंशाख्यकवचं ब्रूहि मह्यं शिष्याय तेऽनघ ।
यस्य प्रभावाद् देवेश वंशवृद्धिर्हि जायते ॥१॥

सूर्य उवाच

शृणु पुत्र प्रवक्ष्यामि वंशाख्यं कवचं शुभम् ।
सन्तानवृद्धिर्यत् पाठाद् गर्भरक्षा सदा नृणाम् ॥२॥
वन्ध्याऽपि लभते पुत्रं काकवन्ध्या सुतैर्युता ।
मृतवत्सा सपुत्रा स्यात् स्रवद्-गर्भा स्थिरप्रजा ॥३॥
अपुत्रा पुष्पिणी यस्य धारणाच्च सुखप्रभुः।
कन्या प्रजा पुत्रिणी स्यादेतत् स्तोत्र-प्रभावतः ॥४॥
भूत-प्रेतादिजा बाधा या बाधा कुलदोषजा ।
ग्रहबाधा देवबाधा बाधा शत्रुकृता च या ॥५॥
भस्मी भवन्ति सर्वास्ताः कवचस्य प्रभावतः ।
सर्वे रोगा विनश्यन्ति सर्वे बालग्रहाश्च ये ॥६॥
पूर्वे रक्षतु वाराही चाग्नेय्यामम्बिका स्वयम् ।
दक्षिणे चण्डिका रक्षेन् नैऋत्यां शववाहिनी ॥७॥
वाराही पश्चिमे रक्षेद् वायव्यां च महेश्वरी ।
उत्तरे वैष्णवी रक्षेदीशान्ये सिंहवाहिनी ॥८॥
ऊर्ध्वं तु शारदा रक्षेदधो रक्षतु पार्वती।
शाकम्भरी शिरो रक्षेन् मुखं रक्षतु भैरवी ॥९॥
कण्ठं रक्षतु चामुण्डा हृदयं रक्षताच्छिवा ।

ईशानी च भुजौ रक्षेत् कुक्षिं नाभिं च कालिका ॥१०॥
अपर्णा ह्युदरं रक्षेत् कटिं वस्तिं शिवप्रिया।
ऊरू रक्षतु कौमारी जया जानुद्वयं तथा ॥११।
गुल्फौ पादौ सदा रक्षेद् ब्रह्माणी परमेश्वरी ।
सर्वाङ्गानि सदा रक्षेद् दुर्गा दुर्गार्ति-नाशिनी ॥१२॥
नमो देव्यै महादेव्यै दुर्गायै सततं नमः ।
पुत्रसौख्यं देहि देहि गर्भरक्षां कुरुष्व नः ॥१३॥

ॐ ह्रीं ह्रीं ह्रीं श्रीं श्रीं श्रीं ऐं ऐं ऐं महाकाली-महालक्ष्मी-महासरस्वतीरूपायै नवकोटिमूर्त्यै दुर्गायै नमः, ह्रीं ह्रीं ह्रीं दुर्गार्तिनाशिनी सन्तानसौख्यं देहि देहि, वन्ध्यत्वं मृतवत्सत्वं च हर हर गर्भरक्षां कुरु कुरु, सकलां बाधां कुलजां बाह्यजां कृतामकृतां च, नाशय नाशय सर्वगात्राणि रक्ष गर्भं पोषय पोषय, सर्वोपद्रवं शोषय शोषय स्वाहा।

अनेन कवचेनाऽङ्गं सप्तवाराऽभिमन्त्रितम् ।
ऋतुस्नाता जलं पीत्वा भवेद् गर्भवती ध्रुवम् ॥१४॥
गर्भपातभये पीत्वा दृढगर्भा प्रजायते ।
अनेन कवचेनाथ मार्जिताया निशागमे ॥१५॥
सर्वबाधा-विनिर्मुक्ता गर्भिणी स्यान्न संशयः ।
अनेन कवचेनेह ग्रन्थितं रक्तदोरकम् ॥१६॥
कटिदेशे धारयन्ती सुपुत्रसुखभागिनी ।
असूत पुत्रमिन्द्राणी जयन्तं यत्प्रभावतः ॥१७॥
गुरूपदिष्टं वंशाख्यं कवचं तदिदं सखे ।
गुह्याद् गुह्यतरं चेदं न प्रकाश्यं हि सर्वतः ।
धारणात् पठनादस्य वंशच्छेदो न जायते ॥१८॥

बाला विनश्यन्ति पतन्ति गर्भा-
स्तत्राऽबलाः कष्टयुताश्च वन्ध्याः ।
बालग्रहैर्भूतगणैश्च रोगै-
र्न यत्र धर्माचरणं गृहं स्यात् ॥१९॥

॥ इति श्रीज्ञानभास्करे वंशवृद्धिकरं वंशकवचं सम्पूर्णम् ॥

(टिप्पणी- प्रस्तुत वंशवृद्धिकर वंश-कवच सन्तान-प्राप्ति के लिए अत्यधिक उपयोगी एवं महत्त्वपूर्ण कवच है। विश्वास और श्रद्धा-भक्तिपूर्वक इसके नित्यप्रति पाठ करने से किसी प्रकार की भी सन्तान बाधा-भूत-प्रेतादि बाधा, ग्रह-बाधा, देव-बाधा एवं शत्रु कृत समस्त बाधाएँ विनष्ट हो जाती हैं और शीघ्र ही दीर्घजीवी सन्तान की प्राप्ति होती है।)

## ॥ श्रीजगन्नाथाष्टकम् ॥

कदाचित् कालिन्दीतटविपिनसङ्गीतकरवो
मुदाभीरीनारीवदनकमलास्वादमधुपः
रमाशम्भुर्ब्रह्माऽमरपतिगणेशार्चितपदो
जगन्नाथः स्वामी नयनपथगामी भवतु मे ॥१॥

भुजे सव्ये वेणुं शिरसि शिखिपिच्छं कटितटे
दुकूलं नेत्रान्ते सहचरकटाक्षं विदधते ।
सदा श्रीमद्-वृन्दावनवसतिलीलापरिचयो
जगन्नाथः स्वामी नयनपथगामी भवतु मे॥२॥

महाम्भोधेस्तीरे कनकरुचिरे नीलशिखरे
वसन् प्रासादान्तः सहज बलभद्रेण बलिना ।
सुभद्रामध्यस्थः सकलसुरसेवाऽवसरदो
जगन्नाथः स्वामी नयनपथगामी भवतु मे ॥३॥

कृपापारावारः सजलजलदश्रेणिरुचिरो
रमावाणीरामः स्फुरदमलपद्मेक्षणमुखैः ।
सुरेन्द्रैराराध्यः श्रुतिगणशिखागीतचरितो
जगन्नाथः स्वामी नयनपथगामी भवतु मे ॥४॥

रथारूढो गच्छन् पथि मिलितभूदेव पटलैः
स्तुतिप्रादुर्भावं प्रतिपदमुपाकर्ण्य सदयः ।
दयासिन्धुर्बन्धुः सकलजगतां सिन्धुसुतया
जगन्नाथः स्वामी नयनपथगामी भवतु मे ॥५॥

परब्रह्मापीड़ः कुवलयदलोत्फुल्लनयनो

निवासी नीलाद्रौ निहितचरणोऽनन्तशिरसि ।
रसानन्दो राधासरसवपुरालिङ्गनसुखो
जगन्नाथः स्वामी नयनपथगामीभवतु मे ।।६।।

न वै याचे राज्यं न च कनक माणिक्य विभवं
न याचेऽहं रम्यां सकलजनकाम्यां वरवधूम् ।
सदा काले काले प्रमथपतिना गीतचरितो
जगन्नाथः स्वामी नयनपथगामी भवतु मे।।७।।

हर त्वं संसारं द्रुततरमसारं सुरपते
हर त्वं पापानां विततिमपरां यादवपते ।
अहो दीनानाथं निहितमचलं निश्चितपदं
जगन्नाथः स्वामी नयनपथगामी भवतु मे ।।८।।

जगन्नाथाष्टकं पुन्यं यः पठेत् प्रयतः शुचिः ।
सर्वपापविशुद्धात्मा विष्णुलोकं स गच्छति ।।९।।

।। इति श्रीमत् शङ्कराचार्यविरचितं जगन्नाथाष्टकं सम्पूर्णम् ।।

## ॥ श्रीहनुमान-चालीसा ॥

दोहा

श्रीगुरु चरन सरोज रज
निज मनु मुकुरु सुधारि ।
बरनऊँ रघुबर बिमल जसु
जो दायकु फल चारि ॥
बुद्धिहीन तनु जानिके
सुमिरौं पवनकुमार ।
बल बुद्धि बिद्या देहु मोहिं
हरहु कलेस बिकार ॥

चौपाई

जय हनुमान ज्ञान गुन सागर ।
जय कपीस तिहुँ लोक उजागर ॥
राम दूत अतुलित बल धामा ।
अंजनिपुत्र पवनसुत नामा ॥
महाबीर बिक्रम बजरंगी ।
कुमति निवार सुमति के संगी ॥
कंचन बरन बिराज सुबेसा ।
कानन कुंडल कुंचित केसा ॥
हाथ बज्र औ ध्वजा बिराजै ।
काँधे मूँज जनेऊ साजै ॥
संकर सुवन केसरीनंदन ।

तेज प्रताप महा जग बंदन ॥
विद्यावान गुनी अति चातुर ।
राम काज करिबे को आतुर ॥
प्रभु चरित्र सुनिबे को रसिया ।
राम लखन सीता मन बसिया ॥
सूक्श्म रूप धरि सियहिं दिखावा ।
बिकट रूप धरि लंक जरावा ॥
भीम रूप धरि असुर सँहारे ।
रामचंद्र के काज सँवारे ॥
लाय सजीवन लखन जियाये ।
श्रीरघुबीर हरषि उर लाये ॥
रघुपति कीन्ही बहुत बड़ाई ।
तुम मम प्रिय भरतहि सम भाई ॥
सहस बदन तुम्हरो जस गावैं ।
अस कहि श्रीपति कंठ लगावैं ॥
सनकादिक ब्रह्मादि मुनीसा ।
नारद सारद सहित अहीसा ॥
जम कुबेर दिगपाल जहाँ ते ।
कबि कोबिद कहि सके कहाँ ते ॥
तुम उपकार सुग्रीवहिं कीन्हा ।
राम मिलाय राज पद दीन्हा ॥
तुम्हरो मंत्र बिभीषन माना ।
लंकेस्वर भए सब जग जाना ॥
जुग सहस्र जोजन पर भानू ।
लील्यो ताहि मधुर फल जानू ॥
प्रभु मुद्रिका मेलि मुख माहीं ।

जलधि लाँघि गये अचरज नाहीं ॥
दुर्गम काज जगत के जेते ।
सुगम अनुग्रह तुम्हरे तेते ॥
राम दुआरे तुम रखवारे ।
होत न आज्ञा बिनु पैसारे ॥
सब सुख लहै तुम्हारी सरना ।
तुम रच्छक काहू को डर ना ॥
आपन तेज संहारो आपै ।
तीनों लोक हाँक तें काँपै ॥
भूत पिसाच निकट नहिं आवै ।
महाबीर जब नाम सुनावै ॥
नासै रोग हरै सब पीरा ।
जपत निरंतर हनुमत बीरा ॥
संकट तें हनुमान छुड़ावै ।
मन क्रम बचन ध्यान जो लावै ॥
सब पर राम तपस्वी राजा ।
तिन के काज सकल तुम साजा ॥
और मनोरथ जो कोई लावै ।
सोई अमित जीवन फल पावै ॥
चारों जुग परताप तुम्हारा ।
है परसिद्ध जगत उजियारा ॥
साधु संत के तुम रखवारे ।
असुर निकंदन राम दुलारे ॥
अष्ट सिद्धि नौ निधि के दाता ।
अस बर दीन जानकी माता ॥
राम रसायन तुम्हरे पासा ।

सदा रहो रघुपति के दासा ॥
तुम्हरे भजन राम को पावै ।
जनम जनम के दुख बिसरावै ॥
अंत काल रघुबर पुर जाई ।
जहाँ जन्म हरिभक्त कहाई ॥
और देवता चित्त न धरई ।
हनुमत सेई सर्ब सुख करई ॥
संकट कटै मिटै सब पीरा ।
जो सुमिरै हनुमत बलबीरा ॥
जै जै जै हनुमान गोसाईं ।
कृपा करहु गुरु देव की नाईं ॥
जो सत बार पाठ कर कोई ।
छूटहि बंदि महा सुख होई ॥
जो यह पढ़ै हनुमान चलीसा ।
होय सिद्धि साखी गौरीसा ॥
तुलसीदास सदा हरि चेरा ।
कीजै नाथ हृदय मँह डेरा ॥

दोहा

पवनतनय संकट हरन
मंगल मूरति रूप ।
राम लखन सीता सहित
हृदय बसहु सुर भूप ॥

## ॥ अथ सप्तश्लोकी दुर्गा ॥

शिव उवाच -

देवि त्वं भक्तसुलभे सर्वकार्यविधायिनी ।
कलौ हि कार्यसिद्ध्यर्थमुपायं ब्रूहि यत्नतः॥

देव्युवाच -

शृणु देव प्रवक्ष्यामि कलौ सर्वेष्टसाधनम् ।
मया तवैव स्नेहेनाप्यम्बास्तुतिः प्रकाश्यते ॥

ॐ अस्य श्रीदुर्गासप्तश्लोकीस्तोत्रमन्त्रस्य नारायण ऋषिः, अनुष्टुप् छन्दः, श्रीमहाकालीमहालक्ष्मीमहासरस्वत्यो देवताः, श्रीदुर्गाप्रीत्यर्थं सप्तश्लोकीदुर्गापाठे विनियोगः।

ॐ ज्ञानिनामपि चेतांसि देवी भगवती हि सा।
बलादाकृष्य मोहाय महामाया प्रयच्छति॥

दुर्गे स्मृता हरसि भीतिमशेषजन्तोः
स्वस्थैः स्मृता मतिमतीव शुभां ददासि ।
दारिद्र्यदुःखभयहारिणि का त्वदन्या
सर्वोपकारकरणाय सदार्द्रचित्ता ॥

सर्वमङ्गलमङ्गल्ये शिवे सर्वार्थसाधिके ।
शरण्ये त्र्यम्बके गौरि नारायणि नमोऽस्तु ते ॥

शरणागतदीनार्तपरित्राणपरायणे ।
सर्वस्यार्तिहरे देवि नारायणि नमोऽस्तु ते ॥

सर्वस्वरूपे सर्वेशे सर्वशक्तिसमन्विते ।

भयेभ्यस्त्राहि नो देवि दुर्गे देवि नमोऽस्तु ते ॥

रोगानशेषानपहंसि तुष्टा
रुष्टा तु कामान् सकलानभीष्टान् ।
त्वामाश्रितानां न विपन्नराणां
त्वामाश्रिता ह्याश्रयतां प्रयान्ति ॥

सर्वाबाधाप्रशमनं त्रैलोक्यस्याखिलेश्वरि ।
एवमेव त्वया कार्यमस्मद्वैरिविनाशनम् ॥

॥ इति श्रीसप्तश्लोकी दुर्गा सम्पूर्णा ॥

## ॥ तन्त्रोक्तं रात्रिसूक्तम् ॥

ॐ विश्वेश्वरीं जगद्धात्रीं स्थितिसंहारकारिणीम् ।
निद्रां भगवतीं विष्णोरतुलां तेजसः प्रभुः ॥१॥

ब्रह्मोवाच

त्वं स्वाहा त्वं स्वधा त्वं हि वषट्कारः स्वरात्मिका ।
सुधा त्वमक्षरे नित्ये त्रिधा मात्रात्मिका स्थिता ॥२॥

अर्धमात्रा स्थिता नित्या यानुच्चार्या विशेषतः ।
त्वमेव सन्ध्या सावित्री त्वं देवि जननी परा ॥३॥

त्वयैतद्धार्यते विश्वं त्वयैतत्सृज्यते जगत् ।
त्वयैतत्पाल्यते देवि त्वमत्स्यन्ते च सर्वदा ॥४॥

विसृष्टौ सृष्टिरूपा त्वं स्थितिरूपा च पालने ।
तथा संहृतिरूपान्ते जगतोऽस्य जगन्मये ॥५॥

महाविद्या महामाया महामेधा महास्मृतिः ।
महामोहा च भवती महादेवी महासुरी ॥६॥

प्रकृतिस्त्वं च सर्वस्य गुणत्रयविभाविनी ।
कालरात्रिर्महारात्रिर्मोहरात्रिश्च दारुणा ॥७॥

त्वं श्रीस्त्वमीश्वरी त्वं ह्रीस्त्वं बुद्धिर्बोधलक्षणा ।
लज्जा पुष्टिस्तथा तुष्टिस्त्वं शान्तिः क्षान्तिरेव च ॥८॥

खड्गिनी शूलिनी घोरा गदिनी चक्रिणी तथा ।
शङ्खिनी चापिनी बाणभुशुण्डीपरिघायुधा ॥९॥

सौम्या सौम्यतराशेषसौम्येभ्यस्त्वतिसुन्दरी ।
परापराणां परमा त्वमेव परमेश्वरी ॥१०॥

यच्च किञ्चित् क्वचिद्वस्तु सदसद्वाखिलात्मिके ।
तस्य सर्वस्य या शक्तिः सा त्वं किं स्तूयसे तदा ॥११॥

यया त्वया जगत्स्रष्टा जगत्पात्यत्ति यो जगत् ।
सोऽपि निद्रावशं नीतः कस्त्वां स्तोतुमिहेश्वरः ॥१२॥

विष्णुः शरीरग्रहणमहमीशान एव च ।
कारितास्ते यतोऽतस्त्वां कः स्तोतुं शक्तिमान् भवेत् ॥१३॥

सा त्वमित्थं प्रभावैः स्वैरुदारैर्देवि संस्तुता ।
मोहयैतौ दुराधर्षावसुरौ मधुकैटभौ ॥१४॥

प्रबोधं न जगत्स्वामी नीयतामच्युतो लघु ।
बोधश्च क्रियतामस्य हन्तुमेतौ महासुरौ ॥१५॥

॥ इति तन्त्रोक्तं रात्रिसूक्तं सम्पूर्णम् ॥

## ॥ अथ तन्त्रोक्तं देवीसूक्तम् ॥

नमो देव्यै महादेव्यै शिवायै सततं नमः ।
नमः प्रकृत्यै भद्रायै नियताः प्रणताः स्म ताम् ॥१॥

रौद्रायै नमो नित्यायै गौर्यै धात्र्यै नमो नमः ।
ज्योत्स्नायै चेन्दुरूपिण्यै सुखायै सततं नमः ॥२॥

कल्याण्यै प्रणतां वृद्ध्यै सिद्ध्यै कुर्मो नमो नमः ।
नैर्ऋत्यै भूभृतां लक्ष्म्यै शर्वाण्यै ते नमो नमः ॥३॥

दुर्गायै दुर्गपारायै सारायै सर्वकारिण्यै ।
ख्यात्यै तथैव कृष्णायै धूम्रायै सततं नमः ॥४॥

अतिसौम्यातिरौद्रायै नतास्तस्यै नमो नमः ।
नमो जगत्प्रतिष्ठायै देव्यै कृत्यै नमो नमः ॥५॥

या देवी सर्वभूतेषु विष्णुमायेति शब्दिता ।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥६॥

या देवी सर्वभूतेषु चेतनेत्यभिधीयते ।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥७॥

या देवी सर्वभूतेषु बुद्धिरूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥८॥

या देवी सर्वभूतेषु निद्रारूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥९॥

या देवी सर्वभूतेषु क्षुधारूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥१०॥

या देवी सर्वभूतेषुच्छायारूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥११॥

या देवी सर्वभूतेषु शक्तिरूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥१२॥

या देवी सर्वभूतेषु तृष्णारूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥१३॥

या देवी सर्वभूतेषु क्षान्तिरूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥१४॥

या देवी सर्वभूतेषु जातिरूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥१५॥

या देवी सर्वभूतेषु लज्जारूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥१६॥

या देवी सर्वभूतेषु शान्तिरूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥१७॥

या देवी सर्वभूतेषु श्रद्धारूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥१८॥

या देवी सर्वभूतेषु कान्तिरूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥१९॥

या देवी सर्वभूतेषु लक्ष्मीरूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥२०॥

या देवी सर्वभूतेषु वृत्तिरूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥२१॥

या देवी सर्वभूतेषु स्मृतिरूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥२२॥

या देवी सर्वभूतेषु दयारूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥२३॥

या देवी सर्वभूतेषु तुष्टिरूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥२४॥

या देवी सर्वभूतेषु मातृरूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥२५॥

या देवी सर्वभूतेषु भ्रान्तिरूपेण संस्थिता ।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥२६॥

इन्द्रियाणामधिष्ठात्री भूतानां चाखिलेषु या ।
भूतेषु सततं तस्यै व्याप्तिदेव्यै नमो नमः ॥२७॥

चितिरूपेण या कृत्स्नमेतद्व्याप्य स्थिता जगत् ।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमस्तस्यै नमो नमः ॥२८॥

स्तुता सुरैः पूर्वमभीष्टसंश्रया-
त्तथा सुरेन्द्रेण दिनेषु सेविता ।
करोतु सा नः शुभहेतुरीश्वरी
शुभानि भद्राण्यभिहन्तु चापदः ॥२९॥

या साम्प्रतं चोद्धतदैत्यतापितै-
रस्माभिरीशा च सुरैर्नमस्यते ।
या च स्मृता तत्क्षणमेव हन्ति नः
सर्वापदो भक्तिविनम्रमूर्तिभिः ॥३०॥

॥ इति तन्त्रोक्तं देवीसूक्तं सम्पूर्णम् ॥

शुक्लयुजर्वेदीया

# शतरुद्री

सम्पादकः

**डॉ.देवेन्द्रप्रसादमिश्रः**

# 卐 शुक्लयजुर्वेदीया शतरुद्री 卐

॥ हरिःॐ ॥

नमस्ते रुद्र मन्यवऽउतो तऽइषवे नमः । बाहुभ्यामुत ते नमः ॥१॥
या ते रुद्र शिवा तनूरघोरापापकाशिनी ।
तया नस्तन्वा शन्तमया गिरिशन्ताभिचाकशीहि ॥२॥
यामिषुङ्गिरिशन्त हस्ते बिभर्ष्यस्तवे ।
शिवाङ्गिरित्र तां कुरु मा हिꣳसीः पुरुषञ्जगत् ॥३॥
शिवेन वचसा त्वा गिरिशाच्छा वदामसि ।
यथा नः सर्वमिज्जगदयक्ष्मꣳ सुमनाऽअसत् ॥४॥
अध्यवोचदधिवक्ता प्रथमो दैव्यो भिषक् ।
अहींश्च सर्वाञ्जम्भयन्त्सर्वाश्च यातुधान्योऽधराचीः परासुव ॥५॥
असौ यस्ताम्रोऽअरुणऽउत बभ्रुः सुमङ्गलः ।
ये चैनꣳ रुद्राऽअभितो दिक्षु श्रिताः सहस्रशोऽवैषाꣳ हेडऽईमहे ॥६॥
असौ योऽवसर्पति नीलग्रीवो विलोहितः ।
उतैनं गोपाऽअदृश्रन्नदृश्रन्नुदहार्यः स दृष्टो मृडयाति नः ॥७॥
नमोऽस्तु नीलग्रीवाय सहस्राक्षाय मीढुषे ।
अथो येऽअस्य सत्वानोऽहन्तेभ्योऽकरन्नमः ॥८॥
प्रमुञ्च धन्वनस्त्वमुभयोरार्त्न्योर्ज्याम् । याश्च ते हस्तऽइषवः परा ता भगवो वप ॥९॥
विज्यन्धनुः कपर्दिनो विशल्यो बाणवाँ२॥ऽउत ।
अनेशन्नस्य याऽइषवऽआभुरस्य निषङ्गधिः ॥१०॥
या ते हेतिर्मीढुष्टम हस्ते बभूव ते धनुः ।
तयास्मान्विश्वतस्त्वमयक्ष्मया परिभुज ॥११॥
परि ते धन्वनो हेतिरस्मान्वृणक्तु विश्वतः ।
अथो यऽइषुधिस्तवारेऽअस्मन्निधेहि तम् ॥१२॥

अवतत्य धनुष्ट्वꣳ सहस्राक्ष शतेषुधे ।
निशीर्य्य शल्ल्यानाम्मुखा शिवो नः सुमना भव ॥१३॥
नमस्तऽआयुधायानातताय धृष्णवे ।
उभाब्भ्यामुत ते नमो बाहुब्भ्यान्तव धन्वने ॥१४॥
मा नो महान्तमुत मा नोऽअर्ब्भकम्मा नऽउक्षन्तमुत मा नऽउक्षितम् ।
मा नो वधीः पितरम्मोत मातरम्मा नः प्प्रियास्तन्वो रुद्र रीरिषः ॥१५॥
मा नस्तोके तनये मा नऽआयुषि मा नो गोषु मा नोऽअश्श्वेषु रीरिषः ।
मा नो वीरान्रुद्र भामिनो वधीर्हविष्म्मन्तः सदमित्त्वा हवामहे ॥१६॥

नमो हिरण्ण्यबाहवे सेनान्न्ये दिशाञ्च पतये नमो नमो वृक्षेब्भ्यो हरिकेशेब्भ्यः पशूनाम्पतये नमो नमः शष्प्पिञ्जराय त्त्विषीमते पथीनाम्पतये नमो नमो हरिकेशायोपवीतिने पुष्टानाम्पतये नमो नमो बब्भ्लुशाय ॥१७॥
नमो बब्भ्लुशाय व्व्याधिनेन्नानाम्पतये नमो नमो भवस्य हेत्त्यै जगताम्पतये नमो नमो रुद्रायाततायिने क्षेत्त्राणाम्पतये नमो नमः सूतायाहन्न्त्यै वनानाम्पतये नमो नमो रोहिताय ॥१८॥
नमो रोहिताय स्त्थपतये वृक्षाणाम्पतये नमो नमो भुवन्तये वारिवस्कृतायौषधीनाम्पतये नमो नमो मन्त्रिणे वाणिजाय कक्क्षाणाम्पतये नमो नमऽउच्चैर्घोषायाक्क्रन्दयते पत्तीनाम्पतये नमो नमः कृत्स्नायतया ॥१९॥
नमः कृत्स्नायतया धावते सत्त्वनाम्पतये नमो नमः सहमानाय निव्व्याधिनऽआव्व्याधिनीनाम्पतये नमो नमो निषङ्ग्गिणे ककुभाय स्तेनानाम्पतये नमो नमो निचेरवे परिचरायारण्ण्यानाम्पतये नमो नमो वञ्चते ॥२०॥
नमो वञ्चते परिवञ्चते स्तायूनाम्पतये नमो नमो निषङ्ग्गिणऽइषुधिमते तस्कराणाम्पतये नमो नमः सृकायिब्भ्यो जिघाꣳसद्भ्यो मुष्ण्णताम्पतये नमो नमोऽसिमद्भ्यो नक्तञ्चरद्भ्यो विकृन्तानाम्पतये नमः ॥२१॥
नमऽउष्ण्णीषिणे गिरिचराय कुलुञ्चानाम्पतये नमो नमऽइषुमद्भ्यो धन्वायिब्भ्यश्च वो नमो नमऽआतन्वानेब्भ्यः प्प्रतिदधानेब्भ्यश्च वो नमो नमऽआयच्छद्भ्योऽस्यद्भ्यश्च वो नमो नमो विसृजद्भ्यः ॥२२॥
नमो विसृजद्भ्यो विद्ध्यद्भ्यश्च वो नमो नमः स्वपद्भ्यो जाग्ग्रद्भ्यश्च वो नमो नमः शयानेब्भ्यऽआसीनेब्भ्यश्च वो नमो नमस्तिष्ठद्भ्यो धावद्भ्यश्च वो नमो नमः सभाब्भ्यः ॥२३॥

नम॑ः सुभाभ्य॑ः सुभापतिभ्यश्च वो नमो नमोऽश्वेभ्योऽश्वपतिभ्यश्च वो नमो नम॑ऽ आव्याधिनीभ्यो विविध्यन्तीभ्यश्च वो नमो नमऽउगणाभ्यस्तृᳪहतीभ्यश्च वो नमो नमो गुणेभ्य॑ः ॥२४॥
नमो गुणेभ्यो गुणपतिभ्यश्च वो नमो नमो व्रातेभ्यो व्रातपतिभ्यश्च वो नमो नमो गृत्सेभ्यो गृत्सपतिभ्यश्च वो नमो नमो विरूपेभ्यो विश्वरूपेभ्यश्च वो नमो नमः सेनाभ्यः ॥२५॥
नमः सेनाभ्यः सेनानिभ्यश्च वो नमो नमो रथिभ्योऽअरथेभ्यश्च वो नमो नम॑ः क्षत्तृभ्य॑ः सङ्ग्रहीतृभ्यश्च वो नमो नमो महद्भ्योऽअर्भकेभ्यश्च वो नम॑ः ॥२६॥
नमस्तक्षभ्यो रथकारेभ्यश्च वो नमो नमः कुलालेभ्यः कर्मारेभ्यश्च वो नमो नमो निषादेभ्य॑ः पुञ्जिष्ठेभ्यश्च वो नमो नम॑ः श्वनिभ्यो मृगयुभ्यश्च वो नमो नमः श्वभ्य॑ः ॥२७॥
नमः श्वभ्यः श्वपतिभ्यश्च वो नमो नमो भवाय च रुद्राय च नम॑ः शर्वाय च पशुपतये च नमो नीलग्रीवाय च शितिकण्ठाय च नम॑ः कपर्दिने ॥२८॥
नम॑ः कपर्दिने च व्युप्तकेशाय च नम॑ः सहस्राक्षाय च शतधन्वने च नमो गिरिशयाय च शिपिविष्टाय च नमो मीढुष्टमाय चेषुमते च नमो ह्रस्वाय ॥२९॥
नमो ह्रस्वाय च वामनाय च नमो बृहते च वर्षीयसे च नमो वृद्धाय च सवृधे च नमोऽग्र्याय च प्रथमाय च नम॑ऽआशवे ॥३०॥
नम॑ऽआशवे चाजिराय च नमः शीघ्र्याय च शीभ्याय च नमऽऊर्म्याय चावस्वन्याय च नमो नादेयाय च द्वीप्याय च ॥३१॥
नमो ज्येष्ठाय च कनिष्ठाय च नम॑ः पूर्वजाय चापरजाय च नमो मध्यमाय चापगल्भाय च नमो जघन्याय च बुध्न्याय च नमः सोभ्याय ॥३२॥
नमः सोभ्याय च प्रतिसर्याय च नमो याम्याय च क्षेम्याय च नमः श्लोक्याय चावसान्याय च नम॑ऽउर्वर्याय च खल्याय च नमो वन्याय ॥३३॥
नमो वन्याय च कक्ष्याय च नम॑ः श्रवाय च प्रतिश्रवाय च नम॑ऽआशुषेणाय चाशुरथाय च नमः शूराय चावभेदिने च नमो बिल्मिने ॥३४॥
नमो बिल्मिने च कवचिने च नमो वर्मिणे च वरूथिने च नम॑ः श्रुताय च श्रुतसेनाय च नमो दुन्दुभ्याय चाहनन्याय च नमो धृष्णवे ॥३५॥
नमो धृष्णवे च प्रमृशाय च नमो निषङ्गिणे चेषुधिमते च नम॑स्तीक्ष्णेषवे चायुधिने च नम॑ः स्वायुधाय च सुधन्वने च ॥३६॥

नमः॒ स्रुत्या॑य च॒ पथ्या॑य च॒ नमः॒ काट्या॑य च॒ नीप्या॑य च॒ नमः॒ कुल्या॑य च
सर॒स्या॑य च॒ नमो॑ नादे॒याय॑ च वैश॒न्ताय॑ च॒ नमः॒ कूप्या॑य ॥३७॥
नमः॒ कूप्या॑य चावट्या॑य च॒ नमो॒ वीध्र्या॑य चात॒प्या॑य च॒ नमो॒ मेघ्या॑य च
विद्युत्या॑य च॒ नमो॒ वर्ष्या॑य चाव॒र्ष्याय॑ च॒ नमो॒ वात्या॑य ॥३८॥
नमो॒ वात्या॑य च॒ रेष्म्या॑य च॒ नमो॑ वास्त॒व्या॑य च वास्तु॒पाय॑ च॒ नमः॒ सोमा॑य च
रु॒द्राय॑ च॒ नम॑स्ता॒म्राय॑ चारु॒णाय॑ च॒ नम॑ः श॒ङ्गवे॑ ॥३९॥
नम॑ः श॒ङ्गवे॑ च पशु॒पत॑ये च॒ नम॑ऽउ॒ग्राय॑ च भी॒माय॑ च॒ नमो॑ऽग्रेव॒धाय॑ च दूरेव॒-
धाय॑ च॒ नमो॑ ह॒न्त्रे च॒ हनी॑यसे च॒ नमो॑ वृ॒क्षेभ्यो॒ हरि॑केशेभ्यो॒ नम॑स्ता॒राय॑ ॥४०॥
नम॑ः शम्भ॒वाय॑ च मयोभ॒वाय॑ च॒ नम॑ः शङ्क॒राय॑ च मयस्क॒राय॑ च॒ नम॑ः शि॒वाय॑
च शि॒वत॑राय च ॥४१॥
नमः॒ पार्या॑य चावा॒र्या॑य च॒ नम॑ः प्र॒तर॑णाय चो॒त्तर॑णाय च॒ नम॑स्ती॒र्थ्या॑य च॒
कूल्या॑य च॒ नमः॒ शष्प्या॑य च॒ फेन्या॑य च॒ नम॑ः सिक॒त्या॑य ॥४२॥
नम॑ः सिक॒त्या॑य च प्रवा॒ह्या॑य च॒ नम॑ः कि॒ꣳशि॒लाय॑ च क्षय॒णाय॑ च॒ नम॑ः कप॒र्दिने॑
च पुल॒स्तये॑ च॒ नम॑ऽइरि॒ण्या॑य च प्रप॒थ्या॑य च॒ नमो॒ व्रज्या॑य ॥४३॥
नमो॒ व्रज्या॑य च॒ गोष्ठ्या॑य च॒ नम॒स्तल्प्या॑य च॒ गेह्या॑य च॒ नमो॑ हृद॒य्या॑य च
निवे॒ष्प्या॑य च॒ नमः॒ काट्या॑य च गह्वरे॒ष्ठाय॑ च॒ नमः॒ शुष्क्या॑य ॥४४॥

नमः॒ शुष्क्या॑य च हरि॒त्या॑य च॒ नम॑ः पाꣳस॒व्या॑य च रज॒स्या॑य च॒ नमो॒
लोप्या॑य चोल॒प्या॑य च॒ नम॒ऽऊर्व्या॑य च॒ सूर्व्या॑य च॒ नम॑ः प॒र्ण्याय॑ ॥४५॥
नम॑ः प॒र्ण्याय॑ च पर्णश॒दाय॑ च॒ नम॑ऽउ॒द्गुर॑माणाय चाभिघ्न॒ते च॒ नम॑ऽआखिद॒ते
च॑ प्रखिद॒ते च॒ नम॑ऽइषु॒कृद्भ्यो॑ धनु॒ष्कृद्भ्य॑श्च वो॒ नमो॒ नमो॑ वः॒ किरि॒केभ्यो॑
दे॒वाना॒ꣳ हृद॑येभ्यो॒ नमो॑ विचिन्व॒त्केभ्यो॒ नमो॑ विक्षिण॒त्केभ्यो॒ नम॑ऽआनिर्ह॒-
तेभ्य॑ः ॥४६॥

द्रापे॒ऽअन्ध॑सस्पते॒ दरि॑द्र॒ नील॑लोहित ।
आ॒सां प्र॒जाना॑मे॒षां प॑शू॒नां मा भेर्मा रोङ्मो च॑ नः॒ किञ्च॒नाम॑मत् ॥४७॥
इ॒मा रु॒द्राय॑ त॒वसे॑ कप॒र्दिने॑ क्ष॒यद्वी॑राय॒ प्र भ॑रामहे म॒तीः ।
यथा॒ शमस॑द्द्वि॒पदे॒ चतु॑ष्पदे॒ विश्वं॑ पु॒ष्टं ग्रामे॑ऽअ॒स्मिन्न॑नातु॒रम् ॥४८॥
या ते॑ रुद्र शि॒वा त॒नूः शि॒वा वि॒श्वाहा॑ भेष॒जी ।
शि॒वा रु॒तस्य॑ भेष॒जी तया॑ नो मृड जी॒वसे॑ ॥४९॥

परि॑ नो रु॒द्रस्य॑ हे॒तिर्वृ॑णक्तु॒ परि॑ त्वे॒षस्य॑ दुर्म्म॒तिर॑घा॒योः ।
अव॑ स्थि॒रा म॒घव॑द्भ्यस्तनुष्व॒ मीढ्व॑स्तो॒काय॒ तन॑याय मृड ॥५०॥
मीढु॑ष्टम॒ शिव॑तम शि॒वो नः॑ सु॒मना॑ भव ।
प॒र॒मे वृ॒क्षऽआयु॑धन्नि॒धाय॒ कृत्तिं॒ वसा॑न॒ऽआच॑र॒ पिना॑कं॒ बिभ्र॒दाग॑हि ॥५१॥
विकि॑रिद्र॒ विलो॑हित॒ नम॑स्तेऽअस्तु भगवः ।
यास्ते॑ स॒हस्र॑ᳫं हे॒तयो॒ऽन्यम॒स्मन्निव॑पन्तु॒ ताः ॥५२॥
स॒हस्रा॑णि सहस्र॒शो बा॒ह्वोस्तव॑ हे॒तयः॑ ।
तासा॒मीशा॑नो भगवः परा॒चीना॒ मुखा॑ कृधि ॥५३॥
अ॒सं॒ख्या॒ता स॒हस्रा॑णि॒ ये रु॒द्राऽअधि॒ भूम्या॑म् ।
तेषा॑ᳫं सहस्रयोज॒नेव॒ धन्वा॑नि तन्मसि ॥५४॥
अ॒स्मिन्म॑ह॒त्य॒र्ण॒वे॒ऽन्तरि॑क्षे भ॒वाऽअधि॑ ।
तेषा॑ᳫं सहस्रयोज॒नेव॒ धन्वा॑नि तन्मसि ॥५५॥
नील॑ग्रीवाः शिति॒कण्ठा॒ दिव॑ᳫं रु॒द्राऽउप॑श्रिताः ।
तेषा॑ᳫं सहस्रयोज॒नेव॒ धन्वा॑नि तन्मसि ॥५६॥
नील॑ग्रीवाः शिति॒कण्ठाः॑ श॒र्वाऽअ॒धः क्ष॑माच॒राः ।
तेषा॑ᳫं सहस्रयोज॒नेव॒ धन्वा॑नि तन्मसि ॥५७॥
ये वृ॒क्षेषु॑ श॒ष्पिञ्ज॑रा॒ नील॑ग्रीवा॒ विलो॑हिताः ।
तेषा॑ᳫं सहस्रयोज॒नेव॒ धन्वा॑नि तन्मसि ॥५८॥
ये भू॒ताना॒मधि॑पतयो विशि॒खासः॑ कप॒र्दिनः॑ ।
तेषा॑ᳫं सहस्रयोज॒नेव॒ धन्वा॑नि तन्मसि ॥५९॥
ये प॒थां प॑थि॒रक्ष॑यऽऐलबृ॒दाऽआ॑यु॒र्युधः॑ ।
तेषा॑ᳫं सहस्रयोज॒नेव॒ धन्वा॑नि तन्मसि ॥६०॥
ये ती॒र्थानि॑ प्र॒चर॑न्ति सृ॒काह॑स्ता नि॒षङ्गि॑णः ।
तेषा॑ᳫं सहस्रयोज॒नेव॒ धन्वा॑नि तन्मसि ॥६१॥
येऽन्ने॑षु वि॒विध्य॑न्ति॒ पात्रे॑षु॒ पिब॑तो॒ जना॑न् ।
तेषा॑ᳫं सहस्रयोज॒नेव॒ धन्वा॑नि तन्मसि ॥६२॥
यऽए॒ताव॑न्तश्च॒ भूया॑ᳫंसश्च॒ दिशो॑ रु॒द्रा वि॑तस्थि॒रे ।
तेषा॑ᳫं सहस्रयोज॒नेव॒ धन्वा॑नि तन्मसि ॥६३॥

नमोस्तु रुद्रेभ्यो ये दिवि येषाँवर्षमिषवः। तेभ्यो दश प्राचीर्दश दक्षिणा दश
प्रतीचीर्दशोदीचीर्दशोर्द्ध्वाः। तेभ्यो नमोऽअस्तु ते नोवन्तु ते नो मृडयन्तु ते
यन्द्विष्मो यश्च नो द्वेष्टि तमेषाञ्जम्भे दध्मः ॥६४॥

नमोस्तु रुद्रेभ्यो येन्तरिक्षे येषाँवातऽइषवः। तेभ्यो दश प्राचीर्दश दक्षिणा
दश प्रतीचीर्दशोदीचीर्दशोर्द्ध्वाः। तेभ्यो नमोऽअस्तु ते नोवन्तु ते नो मृडयन्तु ते
यन्द्विष्मो यश्च नो द्वेष्टि तमेषाञ्जम्भे दध्मः ॥६५॥

नमोस्तु रुद्रेभ्यो ये पृथिव्याँय्येषामन्नमिषवः। तेभ्यो दश प्राचीर्दश दक्षिणा
दश प्रतीचीर्दशोदीचीर्दशोर्द्ध्वाः। तेभ्यो नमोऽअस्तु ते नोवन्तु ते नो मृडयन्तु ते
यन्द्विष्मो यश्च नो द्वेष्टि तमेषाञ्जम्भे दध्मः ॥६६॥

नमस्ते रुद्र मन्यवऽउतो तऽइषवे नमः। बाहुभ्यामुत ते नमः ॥६७॥

या ते रुद्र शिवा तनूरघोरापापकाशिनी।
तया नस्तन्वा शन्तमया गिरिशन्ताभिचाकशीहि ॥६८॥

यामिषुङ्गिरिशन्त हस्ते बिभर्ष्यस्तवे।
शिवाङ्गिरित्र ताङ्कुरु मा हिँसीः पुरुषञ्जगत् ॥६९॥

शिवेन वचसा त्वा गिरिशाच्छा वदामसि।
यथा नः सर्वमिज्जगदयक्ष्मँ सुमनाऽअसत् ॥७०॥

अध्यवोचदधिवक्ता प्रथमो दैव्यो भिषक्।
अहींश्च सर्वाञ्जम्भयन्त्सर्वाश्च यातुधान्योधराचीः परासुव ॥७१॥

असौ यस्ताम्रोऽअरुणऽउत बभ्रुः सुमङ्गलः।
ये चैनँ रुद्राऽअभितो दिक्षु श्रिताः सहस्रशोवैषाँ हेडऽईमहे ॥७२॥

असौ योवसर्पति नीलग्रीवो विलोहितः।
उतैनङ्गोपाऽअदृश्रन्नदृश्रन्नुदहार्यः स दृष्टो मृडयाति नः ॥७३॥

नमोस्तु नीलग्ग्रीवाय सहस्राक्षाय मीढुषे ।
अथो येऽअस्य सत्त्वानोहन्तेब्भ्योकरन्नमः ॥७४॥
प्रमुञ्च धन्न्वनस्त्वमुभयोरात्क्वर्योर्ज्ज्याम् । याश्च ते हस्तऽइषवः परा ता भगवो वप ॥७५॥
विज्ज्यन्धनुः कपर्द्दिनो विशल्ल्यो बाणवाँ२॥ऽउत ।
अनेशन्नस्य याऽइषवऽआभुरस्य निषङ्गधिः ॥७६॥
या ते हेतिर्म्मीढुष्टम हस्ते बभूव ते धनुः ।
तयास्म्मान्विश्श्वतस्त्वमयक्ष्मया परिभुज ॥७७॥
परि ते धन्न्वनो हेतिरस्म्मान्वृणक्तु विश्श्वतः ।
अथो यऽइषुधिस्तवारेऽअस्म्मन्निधेहि तम् ॥७८॥
अवतत्त्य धनुष्ट्वँ सहस्राक्ष शतेषुधे ।
निशीर्ष्य शल्ल्यानाम्मुखा शिवो नः सुमना भव ॥७९॥
नमस्तऽआयुधायानातताय धृष्णवे ।
उभाब्भ्यामुत ते नमो बाहुब्भ्यान्तव धन्न्वने ॥८०॥
मा नो महान्तमुत मा नोऽअर्ब्भकम्मा नऽउक्क्षन्तमुत मा नऽउक्षितम् ।
मा नो वधीः पितरम्मोत मातरम्मा नः प्प्रियास्तन्न्वो रुद्र रीरिषः ॥८१॥
मा नस्तोके तनये मा नऽआयुषि मा नो गोषु मा नोऽअश्श्वेषु रीरिषः ।
मा नो वीरान्नुद्र भामिनो वधीर्हविष्म्मन्तः सदमित्त्वा हवामहे ॥८२॥
एष ते रुद्र भागः सह स्वस्राम्बिकया तञ्जुषस्व
स्वाहैष ते रुद्र भागऽआखुस्ते पशुः ॥८३॥
अव रुद्रमदीमह्यव देवन्त्र्यम्बकम् । यथा नो वस्यसस्करद्यथा नः श्रेयसस्करद्यथा
नो व्यवसाययात् ॥८४॥
नमस्ते रुद्र मन्न्यवऽउतो तऽइषवे नमः । बाहुब्भ्यामुत ते नमः ॥८५॥
या ते रुद्र शिवा तनूरघोरापापकाशिनी ।
तया नस्तन्न्वा शन्तमया गिरिशन्ताभिचाकशीहि ॥८६।
न तँविदाथ यऽइमा जजानान्न्यद्युष्म्माकमन्तरम्बभूव ।
नीहारेण प्प्रावृता जल्प्प्या चासुतृपऽउक्क्थशासश्चरन्ति ॥८७॥
विश्श्वकर्म्मा ह्व्यजनिष्ट देवऽआदिद्गन्धर्वोऽअभवद्द्वितीयः ।
तृतीयः पिता जनितौषधीनामपाङ्गर्ब्भँव्यदधात्पुरुत्रा ॥८८॥

मीढुष्टम शिवतम शिवो नः सुमना भव ।
परमे वृक्षऽआयुधन्निधाय कृत्तिं वसानऽआचर पिनाकम्बिभ्रदागहि ॥८९॥
विकिरिद्र विलोहित नमस्तेऽअस्तु भगवः ।
यास्ते सहस्रँ हेतयोन्यमस्मन्निवपन्तु ताः ॥९०॥
सहस्राणि सहस्रशो बाह्वोस्तव हेतयः ।
तासामीशानो भगवः पराचीना मुखा कृधि ॥९१॥
असङ्ख्याता सहस्राणि ये रुद्राऽअधि भूम्याम् ।
तेषाँ सहस्रयोजनेव धन्वानि तन्मसि ॥९२॥
वयँ सोम व्रते तव मनस्तनूषु बिभ्रतः । प्रजावन्तः सचेमहि ॥९३॥
एष ते रुद्र भागः सह स्वस्राम्बिकया तञ्जुषस्व
स्वाहैष ते रुद्र भागऽआखुस्ते पशुः ॥९४॥
अव रुद्रमदीमह्यव देवन्त्र्यम्बकम् । यथा नो वस्यसस्करद्यथा नः श्रेयसस्करद्यथा
नो व्यवसाययात् ॥९५॥
भेषजमसि भेषजङ्गवेश्वाय पुरुषाय भेषजम् । सुखम्मेषाय मेष्यै ॥९६॥
त्र्यम्बकँयजामहे सुगन्धिम्पुष्टिवर्द्धनम् ।
उर्वारुकमिव बन्धनान्मृत्योर्मुक्षीय मामृतात् ।
त्र्यम्बकँयजामहे सुगन्धिम्पतिवेदनम् ।
उर्वारुकमिव बन्धनादितो मुक्षीय मामुतः ॥९७॥
एतत्ते रुद्रावसन्तेन परो मूजवतोतीहि । अवततधन्वा पिनाकावसः कृत्तिवासा
ऽअहिँसन्नः शिवोतीहि ॥९८॥
त्र्यायुषञ्जमदग्नेः कश्यपस्य त्र्यायुषम् ।
यद्देवेषु त्र्यायुषन्तन्नोऽअस्तु त्र्यायुषम् ॥९९॥
शिवो नामासि स्वधितिस्ते पिता नमस्तेऽअस्तु मा मा हिँसीः । निवर्त्तयाम्यायुषे-
न्नाद्याय प्रजननाय रायस्पोषाय सुप्रजास्त्वाय सुवीर्याय ॥१००॥

प्रीणातु भगवान् वेदः प्रीणन्तु सर्वदेवताः ।
प्रीणन्तु पितरः सर्वे प्रीणन्तु च महर्षयः॥

बलं विष्णोः प्रवर्धताम्

## ॥ सम्पादककृदात्मवृत्तम् ॥

नमोऽस्तु शुक्राश्रयवामनाय
नमोऽस्तु विप्रोत्सव भार्गवाय ।
नमोऽस्तु सीताहितराघवाय
नमोऽस्तु पार्थस्तुतयादवाय ॥१॥
नमोऽस्तु बुद्धाय विमोहकाय
नमोऽस्तु ते कल्किपदोदिताय ।
नमोऽस्तु पूर्णामितसद्गुणाय
समस्तनाथाय हयाननाय ॥२॥

चत्वारस्तनया आसन् वासुदेवमहात्मनः ।
पयासीवासिनस्तस्य ब्रह्मधर्मावलम्बिनः ॥३॥

दयाधर्मसदाचारैर्विश्रुतस्य यशस्विनः ।
ग्रामक्षेत्रे समाजेषु मानस्तस्य जने जने ॥४॥

गण्डकीनामधेयायाः देवनद्यास्तटे शुभे ।
सरयूसन्निधौ दिव्ये पयासी पत्तनं प्रियम् ॥५॥

भार्गवश्च्यवनश्चौर्व आप्नवान् जामदग्न्यकः ।
प्रवराः सामवेदश्च शाखा तु कौथुमी मता ॥६॥

त्रयोदशगृहे विष्णुः कुलदेवः प्रतिष्ठितः ।
पयासी छपिया ख्याता मर्यादा वर्तते कुले ॥७॥

वत्स इति श्रुतो लोके महर्षिः प्रथितोऽन्वये ।
वासुदेवसमाख्याता पूर्वजः सज्जनो महान् ॥८॥

धर्मार्थकाममोक्षास्ते प्रभुरविपरावरौ ।
वैद्यनाथमहावीरौ संज्ञा साधु सुसत्तमा ॥९॥

श्रीसन्तोषीतिजीया च श्रीत्रिवेणीवृजौ तथा ।
रामसखीति नाम्नाऽपि सन्ततयोऽभवन् शुभाः ॥१०॥

कमलाफूलमत्यान्या उमासत्यवती तथा ।
सावित्रीसौम्यशालीनाः कुलालङ्कारशोभनाः ॥११॥

सुनीता सविता चापि वंशपरम्पराक्रमाः ।
अनुरूपपितुः पूर्णाः मातुस्नेहवशंवदाः ॥१२॥

धर्मज्ञानानुरक्ता वै मन्ये विधातुरिच्छया ।
षट्शास्त्रसम्मताः जाताः नन्दकुमारसूनवः ॥१३॥

ज्ञानेन्द्रराजेन्द्रसमस्वरूपौ
वीरेन्द्रदेवेन्द्रसमानशीलौ ।
ब्रह्मेन्द्रसंज्ञश्च शिवस्तथा वै
विद्याविभाभूषितवाग्विलासैः ॥१४॥

मध्यप्रदेशभूभागे बाणभट्टमहाकवेः ।
काव्यसंसाधना यत्र शोणभद्रतटे शुभे ॥१५॥

साम्प्रतं वासभूमिर्नवाभीतरी
ग्रामपत्रालयौ भीतरी भीतरी।
मण्डलं मण्डनं चारु श्रीधीश्रुतं
संस्कृतस्यात्र विद्यालयो राजते ॥१६॥

शोणभद्रतटे तत्र विद्यते भीतरीगृहम् ।
सपरिवारवासोऽस्ति सतां कृपाकणस्पृहा ॥१७॥

# सन्दर्भग्रन्थसूची


1. अग्निपुराणम्, महर्षिवेदव्यासप्रणीतम् गीताप्रेसगोरखपुरम् 273005 पुनर्मुद्रणवर्षम्

2. अथर्ववेदसंहिता, सायणभाष्यम्, चौखम्बासुरभारती प्रकाशनम्, वाराणसी 1987

3. अथर्ववेदसंहिता, श्रीकण्ठशास्त्री धर्मप्रेस, 203 ए कमलानगरम्, देहली 2000

4. अथर्ववेदीयमन्त्रविद्या, दयानन्दसंस्थानम्, हरध्यानसिंहमार्गः, देहली, 1997

5. अथर्ववेदभाष्यम्, चौधरीप्रतापसिंहः धर्मार्थट्रस्ट, 57 एल., मॉडलटाउन-करनालम्, 1975

6. अष्टाध्यायी, चन्द्रलेखा-हिन्दीव्याख्यायुता चौखम्बाविद्याभवनम्, वाराणसी 1995

7. अर्थसंग्रहः, लौगाक्षिभास्करप्रणीतः, चौखम्बासुरभारती प्रकाशनम्, गोपाल-मन्दिर-लेन, वाराणसी 2010

8. आर्षेयब्राह्मणम्, वर्नल-सम्पादितम् तिरुपतिः 1992

9. ईशादि नौ उपनिषद्, शङ्करभाष्यार्थः गीताप्रेस, गोरखपुरम् पुनर्मुद्रण वि.सं. 2071

10. ऐतरेयब्राह्मणम्, ए. हॉग, सम्पादितम् कोलकाता 1961

11. ऋग्वेदसंहिता, पद्मभूषणम् : डॉ. श्रीपाददामोदरसातवलेकरः किल्लापारडी, जि. बलसाड स्वाध्यायमण्डलम्, 1985

12. ऋग्वेदसंहिता, नागपब्लिशर्स 11 ए, यू. ए. जवाहरनगरम्, देहली 2001

13. ऋग्वेदसंहिता, श्रीमोक्षमूलरभट्टः, चौखम्बासंस्कृतसीरीज, वाराणसी 1966

14. ऋग्वेदभाष्यभूमिका, सायणाचार्यः, वैदिकपुस्तकालयः, दयानन्दाश्रमः, अजमेरः 1996

15. ऋग्वेद, कासुबोध् भाष्यम्, पद्मभूषण-डॉ.श्रीपाददामोदर सातवलेकरः, किल्लापारडी, जि. बलसाड, स्वाध्यायमण्डलम् 1985

16. काव्यप्रकाशः, मम्मटाचार्यः, चौखम्बासंस्कृतसीरीज, वाराणसी पुनर्मुद्रणवर्षम्

17. कात्यायनश्रौतसूत्रम्, महर्षिकात्यायनमुनिप्रणीतं कर्काचार्य-याज्ञिकादिकृतभाष्येभ्यः सारमुद्धृत्य डॉ. अल्बेर्तेन वेबरेण शोधितम् चौखम्बासंस्कृतसीरिज, वाराणसी आफिस वाराणसी-1, वि. सं. 2029

18. कूर्मपुराणम्, महर्षिवेदव्यासप्रणीतम् गीताप्रेसगोरखपुरम्-273005 पुनर्मुद्रणवर्षम्

19. कौषीतकीब्राह्मणम्, कोलकाता 1962

20. कृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयसंहिता, सम्पादकः श्रीपाददामोदरपारडीनगरम्, सातवलेकरः बलसाडप्रदेशः, गुजरातप्रान्ते स्वाध्यायमण्डलं आषाढस्य वि.सं. 2014

21. कृष्णयजुर्वेदीयतैत्तिरीयारण्यकम्, भट्टभास्करभाष्योपेतम् मोतीलालबनारसीदासः, जवाहरनगरम् दिल्ली-07 पुनर्मुद्रण वर्षम् 1985

22. गरुणपुराणम्, महर्षिवेदव्यासप्रणीतम्, गीताप्रेसगोरखपुरम्–273005 पुनर्मुद्रणवर्षम्

23. चार शुल्बसूत्र, (बौधायन, मानव, आपस्तम्ब और कात्यायन) डॉ. रघुनाथपुरुषोत्तम–कुलकर्णी महर्षिसान्दीपनिराष्ट्रिय–वेदविद्या–प्रतिष्ठानम्, उज्जैन्याम् 456010 म. प्र. 2003

24. छान्दोग्योपनिषद्, सानुवादशाङ्कर–भाष्यसहितम् गीताप्रेसगोरखपुरम्–273005 पुनर्मुद्रण वि.सं. 2070

25. तैत्तिरीयसंहिता, महादेवशास्त्रिसम्पादितः मैसूर 1996

26. तैत्तिरीयब्राह्मणम्, भट्टभास्कर–भाष्योपेतम् मोतीलालबनारसीदासः, बंगलो–रोड़–जवाहरनगरम्, दिल्ली पुनर्मुद्रण वर्षम् 1985

27. देवीभागवतपुराणम्, महर्षिवेदव्यासप्रणीतम्, गीताप्रेसगोरखपुरम्–273005 पुनर्मुद्रणवर्षम्

28. धर्मशास्त्र का इतिहास, डॉ. पि.वि काणे भाण्डारकर ओरियेन्टाल इनस्टिट्युट पुनर्मुद्रणवर्षम्

29. निरुक्तम्, यास्काचार्यः, चौखम्बाप्रकाशनम्, वाराणसी 1992

30. पद्मपुराणम्, महर्षिवेदव्यासप्रणीतम्, गीताप्रेसगोरखपुरम्–273005 पुनर्मुद्रणवर्षम्

31. पारस्करगृह्यसूत्रम्, डॉ. जगदीशचन्द्रमिश्रः, चौखम्बाप्रकाशनम् 2008

32. पुराणविमर्शः, डॉ. बलदेव उपाध्यायः, चौखम्बाविद्याभवनम् 1996

33. बृहदारण्यकोपनिषद्, सानुवादशङ्करभाष्यसहितम्, गीताप्रेस–गोरखपुरम्–273005 पुनर्मुद्रणम् वि.सं.2071

34. ब्रह्मपुराणम्, महर्षिवेदव्यासप्रणीतम्, गीताप्रेसगोरखपुरम्–273005 पुनर्मुद्रणवर्षम्

35. ब्रह्मवैवर्तपुराणम्, महर्षिवेदव्यासप्रणीतम्, गीताप्रेसगोरखपुरम्–273005 पुनर्मुद्रणवर्षम्

36. बौधयनश्रौतसूत्रम्, सायणाचार्यभाष्यसहितम्, रामलालकपूर ट्रस्ट रेवली, सोनीपत, हरियाणा–39 वि.सं.2065

37. भविष्यपुराणम्, महर्षिवेदव्यासप्रणीतम्, गीताप्रेसगोरखपुरम्–273005 पुनर्मुद्रणवर्षम्

38. भारतीय, दर्शन डॉ. बलदेव उपाध्यायः, चौखम्बा–विद्याभवनं वाराणसी 1997

39. मनुस्मृतिः, कुल्लूकभट्ट कृत–सुपरिमार्जितम्, मन्वर्थमुक्तावली–सहिता चौखम्बा विद्याभवनम्, वाराणसी 1992

40. महाभारतम्, महर्षिवेदव्यासप्रणीतम्, गीताप्रेसगोरखपुरम्–273005 पुनर्मुद्रणवर्षम्

41. मत्स्यमहापुराणम्, महर्षिवेदव्यासप्रणीतम्, गीताप्रेसगोरखपुरम्–273005 पुनर्मुद्रणवर्षम्

42. मार्क्सवाद और रामराज्य, स्वामीश्रीकरपात्रीजीमहाराजः, गीताप्रेसगोरखपुरम्–273005 पुनर्मुद्रणम् वि.सं. 2070

43. मार्कंडेयपुराणम्, महर्षिवेदव्यासप्रणीतम्, गीताप्रेसगोरखपुरम्–273005 पुनर्मुद्रणवषम्

44. मैत्रायणीसंहिता, श्रेडरसम्पादितः लाडय जिंग मैसूरः 1982

45. यजुर्वेदे वैश्विकचिन्तनम्, लेखकः म.म. प्रो. देवेन्द्रप्रसादमिश्रः शोध-प्रकाशनविभागः श्रीलालबहादुरशास्त्रीराष्ट्रियसंस्कृत विश्वविद्यालयः नवदेहली-110016, 2022

46. वाजसनेयिसंहिता, बेवरसम्पादितः निर्णयसागरप्रेस, मुम्बई 1962

47. नन्दकुमारचरितम्, लेखकः-म.म. प्रो. केशवराम शर्मा, व्याख्याकारः प्रो.रामसलाहीद्विवेदी, प्रो. वेदप्रकाश उपाध्यायः, प्रो. कमलेशकुमारशर्मा, एवं चक्रपाड़िः च चौखम्बासुरभारती-प्रकाशनम्, वाराणसी 2021

48. नारदपुराणम्, महर्षिवेदव्यासप्रणीतम्, गीताप्रेसगोरखपुरम्-273005 पुनर्मुद्रणवर्षम्

49. नीतिशतकम्, भर्तृहरिः, चौखम्बासंस्कृतसीरीज, वाराणसी पुनर्मुद्रणवर्षम्

50. लिङ्गपुराणम्, महर्षिवेदव्यासप्रणीतम्, गीताप्रेसगोरखपुरम्-273005 पुनर्मुद्रणवर्षम्

51. वामनपुराणम्, महर्षिवेदव्यासप्रणीतम्, गीताप्रेसगोरखपुरम्-273005 पुनर्मुद्रणवर्षम्

52. वाराहपुराणम्, महर्षिवेदव्यासप्रणीतम्, गीताप्रेसगोरखपुरम्-273005 पुनर्मुद्रणवर्षम्

53. वंशब्राह्मणम्, सत्यव्रतसामश्रमीसम्पादितम्, केन्द्रीयसंस्कृत-विश्वविद्यालयः, तिरुपतिः 2001

54. विष्णुपुराणम्, महर्षिवेदव्यासप्रणीतम्, गीताप्रेसगोरखपुरम्-273005 पुनर्मुद्रणवर्षम्

55. वैदिक साहित्य एवं संस्कृति, आचार्यबलदेव उपाध्यायः, रवीन्द्रपुरी, वाराणसी 1995

56. वेदशाखापर्यालोचनम्, प्रो.श्रीकिशोरमिश्रः, चौखम्बाविद्याभवनम्, वाराणसी 1991

57. वैदिक कोश, नाग प्रकाशकः, देहली 1995

58. वेदार्थपारिजातः, स्वामीश्रीकरपात्रीजीमहाराजः, श्रीराधाकृष्ण-धानुकाप्रकाशनसंस्थानम् श्रीधर्मसंघसंस्कृत-विद्यालयः, रमणरेती, वृन्दावनम् 281121 वि.सं. 2055

59. शतपथब्राह्मणम्, आनन्दचन्द्र-सम्पादितम्, चौखम्बाप्रकाशनम्, वाराणसी 1961

60. शतपथब्राह्मणम्, श्रीमत्सायणाचार्य-वेदार्थप्रकाशाख्यादिभाष्यम् चौखम्बासंस्कृतसीरीज, वाराणसी 1975

61. शतपथब्राह्मणम्, हिन्दीव्याख्याकारः प्रो. श्रीयुगलकिशोरमिश्रः सम्पूर्णानन्दसंस्कृतविश्व-विद्यालयः, वाराणसी 2007

62. शिवमहापुराणम्, महर्षिवेदव्यासप्रणीतम् गीताप्रेसगोरखपुरम्-273005 पुनर्मुद्रणवर्षम् 1997

63. शुक्लयजुर्वेदीयमाध्यन्दिनि पञ्चपाठपौरुषाध्यायः, प्रो. श्रीकिशोरमिश्रः चौखम्बाविद्याभवनम्, वाराणसी 1985

64. शुक्लयजुर्वेदसंहिता, उव्वट-महीधर-भाष्यम् चौखम्बाप्रकाशनम्, वाराणसी 1996

65. शुक्लयजुर्वेदीयप्रातिशाख्यम्, उव्वटभाष्य तथा अनन्तभट्ट कृत-भाष्य सहितम्, हिन्दी अनुवादकः- डॉ. वीरेन्द्रकुमारवर्मा, चौखम्बाविद्याभवनम्, वाराणसी 1995

66. शुक्लयजुर्वेदीयकाण्वसंहिता, सम्पादकः-पं.श्रीपाददामोदर सातवलेकरः स्वाध्यायमण्डलं, बलसाड, गुजरातप्रान्त शाकीयवर्षम् 1862

67. शुल्बसूत्रम् हिन्दीव्याख्याकारः, प्रो. देवेन्द्रप्रसादमिश्रः, सम्पादकः श्रीकेदारनाथद्विवेदी, चौखम्बासुरभारती-प्रकाशनम्, 2015 वाराणसी

68. शुक्लयजुर्वेदीया शतरुद्री, भाषानुवादकः डॉ. देवेन्द्रप्रसादमिश्रः, प्रकाशनाधीन- श्रीलालबहादुरशास्त्री राष्ट्रियसंस्कृतविश्वविद्यालयः 2022

69. शुक्लयजुर्वेदीय-गर्भाधानादिषोडश-संस्कारपद्धतिविमर्शः, म.म. आचार्यश्रीकेदारनाथद्विवेदी, प्रो. देवेन्द्रप्रसादमिश्रः प्रयागराजः 2021

70. स्कंदपुराणम्, गीताप्रेसगोरखपुरम्-पुनर्मुद्रणवर्षम् 273005

71. सत्यार्थप्रकाशः, श्रीमद्स्वामिदयानन्दसरस्वती आर्षसाहित्यप्रचार-ट्रस्ट, 427 नया बांस, दिल्ली-110006 वि.सं. 2071

72. सामवेदसंहिता, सायणाचार्यः, चौखम्बासंस्कृतसीरीज, वाराणसी 1966

73. श्रीमद्भगवद्गीता, वेदव्यासः, गीताप्रेसगोरखपुरम्-273005 पुनर्मुद्रणम् वि.सं. 2062

74. श्रीमद्भागवतमहापुराणम्, महर्षिवेदव्यासप्रणीतम्, गीताप्रेसगोरखपुरम्-273005 पुनर्मुद्रणम् वि.सं. 2052

75. श्रीमद्वावाल्मीकीय-रामायणम्, महर्षिवाल्मीकिप्रणीतम्, गीताप्रेस-गोरखपुरम् वि.सं. 2071

76. श्रीमद्रामचरितमानसम्, श्रीमद्गोस्वामितुलसीदासविरचितम्, गीताप्रेसगोरखपुरम् वि.सं. 2071

72. स्वोपज्ञशुल्बसूत्रसहितं कात्यायन-श्रौतसूत्रम्, श्रीविद्याधरशर्मा-वृत्तिसहितं, हिन्दीव्याख्याकारः श्रीकेदारनाथद्विवेदी- सम्पादकः प्रो. देवेन्द्रप्रसादमिश्रः चौखम्बासुरभारती प्रकाशनम्, वाराणसी, प्रथमसंस्करणम् 2015

ॐ

प्रीणातु भगवान् वेदः प्रीणन्तु सर्वदेवताः ।
प्रीणन्तु पितरः सर्वे प्रीणन्तु च महर्षयः ॥

# ॥ समाप्तमिदं ग्रन्थरत्नम् ॥

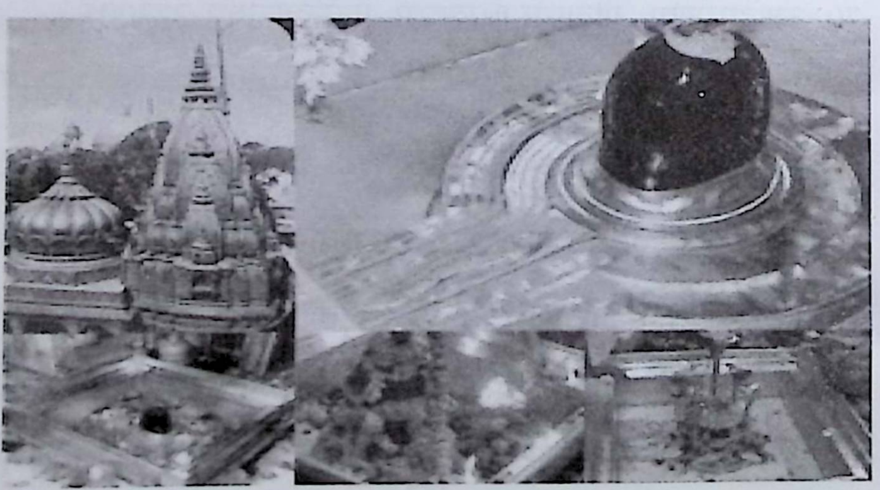

॥ बलं विष्णोः प्रवर्धताम् ॥

# लेखक परिचय

**महामहोपाध्याय श्रीकेदारनाथ द्विवेदी 'वेदाचार्य'**

वेदविद्या के विशिष्ट विद्वान् म.म. आचार्य श्रीकेदारनाथ द्विवेदी (पिता श्री रक्षा द्विवेदी माता श्री फूलपत्ती देवी) का जन्म उत्तर प्रदेश के देवरिया मण्डलान्तर्गत सलेमपुर ब्लाक में देवनदी 'सरयू' के किनारे ग्राम- धनौतीराय, पत्रालय-पिपरारामधर के साधारण ब्राह्मण परिवर में 15 जनवरी, 1934 को हुआ। आपने प्रारम्भिक शिक्षा गाँव से ग्रहण कर संस्कृत जगत् में प्रवेश किया। सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी से शास्त्री एवं वेदाचार्य की उपाधि ग्रहण की तथा शास्त्री एवं आचार्य में आपको स्वर्णपदक प्राप्त हुआ। तदुपरान्त सागर विश्वविद्यालय, सागर (म.प्र.) से बी.ए., एवं बी.एड. की उपाधि प्राप्त कर अवधेश प्रताप सिंह विश्वविद्यालय रीवा म.प्र. से संस्कृत विषय में एम.ए. की उपाधि प्राप्त की। आचार्य द्विवेदी ने म.प्र. शासन के अन्तर्गत 16 नवम्बर, 1962 से शासकीय सेवा में अपनी यात्रा रायपुर से आरम्भ किया। तदुपरान्त आप शासकीय वेङ्कट संस्कृत महाविद्यालय रीवा म.प्र. एवं शासकीय संस्कृत महाविद्यालय भितरी, सीधी, मध्यप्रदेश में 31 जनवरी, 1994 तक व्याख्याता वेद के पद पर सेवारत थे। आपने अनेक महाविद्यालयों एवं विश्वविद्यालयों में आयोजित राष्ट्रीय स्तर की सङ्गोष्ठियों में वेद विषयक व्याख्यान दिये। आपके अनेक शोध आलेख विभिन्न शोध पत्रिकाओं में प्रकाशित हैं। श्रीद्विवेदी ने कात्यायन श्रौतसूत्र की 'कात्यायनी' नामक हिन्दी व्याख्या तथा कात्यायन शुल्बसूत्र का सम्पादन करके वेदाध्यायियों का महान उपकार किया है। आप के पढ़ाये हुये अनेक छात्र विभिन्न विश्वविद्यालयों एवं महाविद्यालयों तथा प्राशासनिक क्षेत्र में सेवारत हैं। हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग द्वारा आचार्य श्री द्विवेदी जी को महामहोपाध्याय की मानद उपाधि से अलंकृत किया गया है।

अभ्युदय प्रकाशन

C-2/3 विजय इन्क्लेव, पालम-डाबड़ी मार्ग

नई दिल्ली - 110045

₹ 1000/-

9 788195 290420